श्री करपात्री जी

—पं०बालकराम, जी शास्त्री
प्रधानाचार्य, श्री चण्डी संस्कृत पाठशाला हापुड़

भगवन् । आपकी स्मृति में आपके पादारविन्द के दर्शन हो रहे हैं, अतः श्रद्धा पूर्वक विहित भूयोभूयः अभिवादन स्वीकार हो ।

अभितो ब्रह्म निर्वाणं वर्तते विदितात्मनाम् ॥

एक समय ऐसा था जब प्रातः स्मरणीय श्री करपात्री जी महाराज तथा जगद्गुरु शंकराचार्य श्री स्वामी कृष्णबोधाश्राम जी महाराज, दोनों तपस्वी सन्त (नरनारायण स्वरूप) जनता को स्वधर्म पालन का उपदेश करते हुये नग्नपद यात्रा करते थे, उस यात्रा में हापुड़ के उत्तर असौड़ा ग्राम में ग्राम से बाहर मन्दिर के समीप जब ये सन्त सहयोगियों के साथ विश्रामार्थ विराजमान थे तब जन समूह उनके स्वागत के लिये तथा दर्शन लाभ पाने के लिये अधिक संख्या में उपस्थित था, मैं भी हापुड़ से गया था । उनके समीप बैठकर चरण स्पर्श का लाभ लेते हुये मैंने देखा कि उनके चरण तक में कांटे चुभे हुये हैं, प्रयत्न करके कांटे निकाल दिये वह स्थिति संदेश दे रही थी कि करपात्री जी देहाध्यास से उठ गये हैं । ब्रह्म विद् ब्रह्मैव भवति ।

उनका सर्वस्व विश्व के लिये समर्पित था (स्वदेशो भुवनत्रयम्) विश्व का कल्याण हो। परोपकाराय सतां विभूतयः – के आप उदाहरण थे, सदाचार, स्वधर्म पालन के आदर्श थे। अनेक अवसर, कुम्भ पर्व आदि के समय में उनके श्री मुख से निःसृत वचनामृत सुनने को मिले । वृन्दावन में श्रीमद् भागवत की व्याख्या करते समय उनका स्वरूप दर्शनीय था, जिस प्रसंग में बोल रहे हैं। मानो उसी देश काल में उपस्थित हों—जन समूह मूक-शान्त उनकी ओर निहार रहा था। वे धन्य थे। प्रतिपक्षियों से शास्त्रार्थ विचार भी सुना । उनका कहना था—'वादे वादे जायते तत्त्व बोधः ।'

अनेक ग्रन्थों को लिखकर प्रकाशन के पश्चात् वेदार्थ पारिजात जैसा ग्रन्थ लिखकर अपना ज्ञान व अनुभव जनता के श्रेय के लिये समर्पित कर गये। उनके लेखों के स्वाध्याय से निश्चित है कि उनकी जिह्वा तथा लेखनी पर भगवती सरस्वती देवी विराजमान थीं। किमधिकम् —उनकी समता में वही थे ।

उनके स्मृति ग्रन्थ से स्मृति के साथ साथ शिक्षाप्रद उपदेश—जिनसे जीवन का लक्ष्य ज्ञात हो तथा उस लक्ष्य की उपलब्धि के सरल उपाय प्राप्त हो सकेंगे ।

वह ग्रन्थ जनता के लिये धर्म ग्रन्थ भी होगा। उन महामहिम महात्मा के श्री चरणों में सादर सहस्रशः अभिवादन स्वीकार हो ।
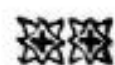
भारतीय संस्कृति के अद्वितीय आलोक-स्तम्भ

— पद्मश्री आचार्य पं० क्षेमचन्द्र 'सुमन', देहली शाहदरा

भारतीय संस्कृति के अद्वितीय आलोक-स्तम्भ स्वामी करपात्री जी महाराज इस देश के ऐसे मनीषी और प्रेरक पुरुष थे, जिनका सारा ही जीवन शास्त्र-चर्चा और जन-कल्याण में व्यतीत हुआ था। वे जहाँ उत्कृष्ट मानव और चूड़ान्त मनीषी थे वहाँ उदात्त व्यक्तित्व के भी पावन आदर्श थे। उन्होंने अपने प्रत्येक कार्य-कलाप में धर्म व संस्कृति के प्रचार व संरक्षण की भावनाओं को ही प्राधान्य दिया था। कैसी भी कठिन-से-कठिन परिस्थितियों में समरस रहकर कार्य करते रहना उनके जीवन का प्रमुख लक्ष्य था।

स्वामी करपात्री उन साधुओं में नहीं थे जो किसी गहन गुफा या आश्रम में बैठकर एकान्त साधन करने में विश्वास करते हैं। सनातन हिन्दू-जीवन-दर्शन का प्रचार करने के लिये सन् १६४० में आपने 'अखिल भारतीय धर्म संघ' नामक संस्था की स्थापना की। देश में पाश्चात्य संस्कृति के प्रभाव को रोकने के लिये आपने 'धर्म संघ शिक्षामण्डल' नामक संस्थान के माध्यम से देश में यत्र-तत्र अनेक ऐसे विद्यालय भी स्थापित किये जिनमें भारतीय धर्म-ग्रंथों की शिक्षा-दीक्षा की ओर विशेष ध्यान दिया जाता है। भारतीय राजनीति में धर्म को उचित स्थान दिलाने की दृष्टि से आपने सन् १६५२ ई० में 'अखिल भारतीय रामराज्य परिषद्' की स्थापना करके उसके माध्यम से भारतीय संसद् और विभिन्न प्रदेशों की विधान-सभाओं में भी अपने प्रतिनिधि भेजने का निश्चय किया और उसमें आप काफी सफल भी हुये। 'हिन्दू कोड बिल' और 'गोहत्या'—जैसे प्रश्नों पर आपने सत्तारुढ़ दल की नीतियों का डटकर विरोध किया। आपने सन् १६६६ ई० में गो-हत्या-विरोधी आन्दोलन का सफल नेतृत्व भी किया था और आप जीवन-पर्यन्त गो-बध पर प्रतिबन्ध लगाने के लिए सतत संघर्ष करते रहे।

साहित्य व पत्रकारिता की सेवा

स्वामी जी एक उत्कृष्ट धर्म-प्रचारक और कर्मठ संगठक होने के साथ-साथ हिन्दी के उच्च कोटि के लेखक भी थे। आपने दो दर्जन से अधिक ग्रंथों की रचना की थी, जिनमें 'रामायण मीमांसा', 'मार्क्सवाद और रामराज्य', 'संघर्ष और शान्ति', 'विचार पीयूष', 'भक्ति सुधा', 'वेद स्वरूप विमर्श', 'विदेश यात्रा-शास्त्रीय पक्ष', 'वेदार्थ पारिजात', 'भक्ति रसार्णव', 'धर्म और राजनीति', 'श्री विद्या रत्नाकर', 'चातुर्वर्ण्य संस्कृति विमर्श', 'संकीर्तन मीमांसा एवं वर्णाश्रम धर्म', 'वेद का स्वरूप और प्रामाण्य', 'राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ और हिन्दू धर्म', 'पूँजीवाद, समाजवाद और रामराज्य' तथा वेद प्रामाण्य मीमांसा' आदि उल्लेखनीय हैं। आपके इन ग्रन्थों में से कई पर उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा पुरस्कार भी प्रदान किया गया था। भारतीय वाङ्मय की कोई भी अंग

आपकी प्रतिभापूर्ण दृष्टि से अछूता नहीं बचा था। पत्रकारिता के क्षेत्र में भी आपकी देन सर्वथा अभिनन्दनीय एवं अविस्मरणीय है। यह आपके व्यक्तित्व का अभूतपूर्व चमत्कार ही था कि आपने 'सन्मार्ग' जैसे दैनिक पत्र का प्रकाशन दिल्ली से प्रारम्भ किया था, जो आजकल काशी और कलकत्ता से एक साथ प्रकाशित होता है। 'सन्मार्ग' का स्थान हिन्दी पत्रकारिता के क्षेत्र में अपनी स्पष्ट और निर्भीक नीति के कारण सर्वथा अनुपम और अभिनन्दनीय है। आपने 'सिद्धान्त' नामक एक पाक्षिक और साप्ताहिक विचार पत्र का प्रकाशन भी किया था, जो अनेक वर्ष तक सफलता पूर्वक चलता रहा था।

विश्व शान्ति के सन्देश वाहक

इन सब लोकोपयोगी कार्यों के साथ-साथ उन्होंने विश्वशान्ति के पावन सन्देश को आधार बनाकर सन् १६४४ ई० में दिल्ली में यमुना तट पर जो 'शतमुख कोटि यज्ञ' का ऐतिहासिक अनुष्ठान किया था, उसे देखने के लिये नित्य प्रति देश के सहस्रों नर-नारी एकत्र हुये थे। ऐसा ही एक आयोजन आपने कानपुर में गंगा के उस पार सन् १६४४ ई० में ही किया था। कानपुर के पश्चात् काशी में नगवा के समीप गंगा के पावन तट पर भी आपने एक ऐसा ही महान् अनुष्ठान किया था जिसमें १०८ बार 'श्रीमद् भागवत' का सप्ताह-पाठ भी आयोजित किया गया था। इस यज्ञ के बाद आपने लखनऊ तथा उदयपुर में 'लक्ष चण्डी महायज्ञ' का अनुष्ठान भी सम्पन्न किया था। आपकी ऐसी मान्यता थी कि देश के चहुमुखी कल्याण और मंगल के लिये ऐसे यज्ञों का विधान अत्यन्त आवश्यक है।

यह अत्यन्त हर्ष और उल्लास का अवसर है कि अब उनकी स्मृति में मेरठ धर्म संघ द्वारा एक स्मृति-ग्रन्थ प्रकाशित करने का शुभ निश्चय किया गया है। मैं भी अपनी श्रद्धा के सुमन उनके श्री चरणों में समर्पित करता हुआ यह कामना करता हूँ कि हमारी दिग्भ्रमित जनता उनके जीवन और कार्यों से प्रेरणा प्राप्त करके अपने को कृतार्थ करने की ओर अग्रसर हो।

●●

'स्वामी जी सरस्वती के वरदपुत्र थे, धर्माचार्य थे भारतीय संस्कृति के महान् ज्ञाता और व्याख्याता थे। उनके कतिपय विचारों से मतभेद करने वाले भी उनके प्रति श्रद्धा से नत रहे। गोवंश की हत्या पर पूर्ण प्रतिबन्ध एवं अखण्ड भारत के लिये स्वामी जी के प्रयत्न सराहनीय थे। जब तक भारत राष्ट्र का अस्तित्व रहेगा स्वामी जी का नाम सदैव अमर रहेगा।'

—अटल बिहारी बाजपेयी संसद सदस्य, भा० ज० पा० दिल्ली।

सन्ति सन्तः कियन्तः

(शास्त्रार्थ केसरी) डा० वीराचार्य शास्त्री
एम० ए०, पी० एच० डी०, साहित्याचार्य, विद्याभास्कर
सम्पादक 'लोकालोक' मासिक, कमला नगर, दिल्ली

विश्ववन्द्य परमपूज्य श्री स्वामी करपात्री जी महाराज इस युग की महनीय विभूतियों में अग्रणी थे। धर्म, समाज, राष्ट्र, राजनीति और अर्थनीति को उन्होंने अभिनव आयाम प्रदान किये थे। कोटि-कोटि व्यक्तियों के वैयक्तिक और पारिवारिक जीवन को भी उन्होंने नयी दिशा-नये क्षितिजों का आभास कराया था। मैं स्वयं को प्राक्तन जन्म के पुण्यों से परम सौभाग्यशाली मानता हूँ। (वैकुण्ठवासी) पूज्य पितृचरण शास्त्रार्थ महारथी श्री पं० माधवाचार्य जी शास्त्री के साथ धर्म संचार यात्राओं में अनन्त श्री स्वामी जी महाराज के पुण्य दर्शनों का अगनित बार लाभ प्राप्त किया। कुरमा तराई, धनपुरी (म० प्र०), झाझा (बिहार) तथा पैंतपुरा (उ० प्र०) आदि स्थानों में तो ऐसा सुखद संयोग बना कि मैं एवं पूज्य महाराज श्री दोनों ही केवल आमन्त्रित थे। अतः उनकी पावन सन्निधि का अत्यन्त निकटता से अनुभव किया। संस्मरणों की मणिमाला आज जीवन को प्रेरणा प्रदान करती है।

× × × × ×

सन् १९४७, अगस्त मास। धर्मयुद्ध पूरी तीव्रता से चल रहा था। पाँच माँगों के समर्थन में हजारों सत्याग्रही प्रतिदिन सत्याग्रह करते पकड़े जाते। मैंने प्रथमा परीक्षा उत्तीर्ण करके मध्यमा प्रथम खंड में प्रवेश लिया था। निगम बोध घाट के निकटवर्ती धर्म संघ शिविर में निरन्तर-प्रवचन, भजन, कथा, संकीर्तन का कार्यक्रम मञ्च पर चलता रहता था। सभी धर्माचार्य, स्वनाम धन्य कवि-रत्न पं० अखिलानन्द जी शर्मा, म० म० श्री गिरिधर जी शर्मा चतुर्वेदी एवं पूज्य पितृ चरण आदि मूर्धन्य मनीषी मञ्च पर विराजमान थे। अचानक पूज्य पिताजी ने मेरी ओर संकेत करते हुए मञ्च संचालक महोदय से कुछ कहा और उन्होंने मेरे नाम की घोषणा कर डाली। पूज्य पिता जी द्वारा लिखित "हमारी पांच माँगे" पुस्तक का पहला श्लोक मुझे याद था। मंगलाचरण और 'श्रीराम जयराम····' के उपरान्त मैंने इस श्लोक को तार स्वर से पढ़ा—

अघ्न्यास्तु गौर्भारत भूरखण्डा, धर्मः स्वतन्त्रोऽथ निरंकुशोऽस्तु।
देवार्चना चागम सम्मता स्याच्छास्त्रान्विता शासन पद्धतिश्च ॥

— और बाल सुलभ चञ्चलता के साथ मैंने दोनों हाथ ऊपर उठाकर कहा "हमारी पाँच माँगें पूरी करो—पूरी करो।" इतना बोलने के तत्काल बाद मैं बैठने लगा तो पूज्यचरण स्वामी करपात्री जी महाराज ने अपने निकट बुलाया और अपने वरदहस्त का स्पर्श मेरे मस्तक पर रखते

हुए आशीर्वाद प्रदान किया। मैं आज भी उस अभय हस्त का स्पर्श अनुभव करके रोमाञ्चित एवं गद्‌गद् हो जाता हूँ।

× × × × ×

पैंतपुरा (उ० प्र०) के पुरो गम पर मैं प्रातः काल महाराज जी के दर्शनार्थ उनके विश्राम स्थल पर गया। वे अभी-अभी पूजा से उठे थे।कस्तूरी केशर अगुरु धूप की मिश्रित सुगंध से वातावरण सुगंधित था। कुशासन पर महाराज श्री विराजमान थे। अभिनव शंकराचार्य की सन्निधि का विरल सुख मुझे अभिभूत कर रहा था। पूज्य पिताजी के साथ उन दिनों महाराज श्री की 'विदेश यात्रा' के शास्त्रीय पक्ष पर चर्चा चल रही थी। उन्होंने उस मास का 'लोकालोक' का अङ्क—जो मैंने समर्पित किया था—कृपापूर्वक ग्रहण करते हुए कहा, देखो इस बात का सदा ध्यान रखना—

अकृत्वा पर सन्तापमगत्वा खल मन्दिरम् ।
अन्नुललंघ्य सतां मार्गं यत्स्वल्पमपि तद् बहु ॥

यह सांकेतिक रहस्योपदेश मेरा जीवन दर्शन बना हुआ है। ऐसे सन्त दुर्लभ हैं, जो प्रेरणा के स्रोत बनकर जीवनधारा को आदर्शोन्मुखी बनाने की क्षमता रखते हैं। यतिचक्रचूडामणि महाराज जी ऐसे ही सन्त थे।

नमः पुरस्तादध पृष्ठतस्ते नमोऽस्तुते सर्वत एव सर्व ।

□□

"प्राणियों के अन्तः करण में शुभाशुभकर्म संस्कार रूप से स्थिर रहते हैं। कर्म भी कायिक वाचनिक और मानस भेद से तीन प्रकार के होते हैं। उनमें भी कोई कर्म पुण्य, पाप का आरम्भक न होकर केवल सुख, दुःख भोग का ही आरम्भक है। कोई सुख दुःख का हेतु होता हुआ भी पुण्य पाप का भी आरम्भक होता है। कोई केवल पुण्य का ही आरम्भक होता है। ये समस्त भेद विधि प्रतिषेधात्मक शास्त्र सामर्थ्य से ही श्रुतार्थापत्ति द्वारा ज्ञात होते हैं। जिन कर्मों का विधि, निषेध के साथ सम्बन्ध नहीं है वे केवल प्रारब्ध फल सुखादि के ही उपयोगी हैं। उनका पुण्य तथा पाप में परिगणन नहीं होता, जिनका विधि के साथ सम्बन्ध है ऐसे तप आदि दुःख रूप भी प्राक्तन दुष्कृत के फल नहीं हैं, किन्तु पुण्य हैं। एवं जिसका निषेध है वह सुख रूप भी परदाररमणादि प्राक्तन सुकृत का फल नहीं है किन्तु यह सब पाप है।"

—करपात्र स्वामी

स्वामी करपात्री जी : भारत के भविष्य के सन्देश वाहक ।

—आचार्य विश्व प्रकाश दीक्षित 'बटुक'

परम श्रद्धेय स्वामी करपात्री जी एवम् श्रद्धास्पद स्वामी कृष्णबोधाश्रम जी महाराज के सन्दर्भ में मेरे मन का सुदामा अपने बाल-सखा श्यामसुन्दर बाजपेयी का स्मरण कर उठा है। हम दोनों (सु) कुमारावस्था से ही परम मित्र रहे हैं। आयुर्वेदाचार्य पं० श्यामसुन्दर बाजपेयी की एक विशेषता रही है—वे मेरे लिए मेदा के अनुकूल भोजन तथा मेधा के लिए उपयुक्त ज्ञान जुटाते रहे हैं। देश-विभाजन की पूर्व-पीठिका में जब मैं लाहौर से मेरठ आया तो उन्होंने मेदा और मेधा दोनों के पोषण के लिए दैनिक (रामराज्य) का आयोजन किया। मैं उसका प्रधान सम्पादक बना। तभी श्यामसुन्दर जी ने उक्त दोनों महापुरुषों से मेरा परिचय कराया।

स्वामी कृष्णबोधाश्रम जी के बारे में क्या कहूँ ? वे तो मेरे लिए महर्षि वेदव्यास थे। जिन्होंने महाभारत को भली प्रकार पढ़ा है, वे जानते हैं कि समय-असमय पर जब भी अवसर देखा महर्षि पांडवों की सहायता के लिए उपस्थित। सन्मार्ग पर लगाया, सत्परामर्श दिया और फिर अन्तर्धान। यही स्थिति मेरे सम्बन्ध में स्वामी कृष्णबोधाश्रम जी की रही है। मेरी कौरव-काया अपने पोषण के लिए सदा ही मेरे पांडित्य-पांडव से टकराती रही। मेरे बाहर और भीतर एक महाभारत होता रहा। मैंने देखा कि मेरठ, दिल्ली और शिमला के मेरे संघर्ष-रत जीवन में सदा ही कृष्णबोधाश्रम जी न जाने कब कहाँ से आते रहे और मुझे बोध देकर अन्तर्धान होते रहे। वे मधुर संस्मरण हैं, उन पर फिर कभी।

वे साक्षात् ब्रह्म थे

प्रातः स्मरणीय परम श्रद्धेय स्वामी करपात्री जी महाराज को मैं ब्रह्मा की संज्ञा देता हूँ। महर्षि वेदव्यास को विविध आयामी साहित्य रचने की प्रेरणा ब्रह्मा ने ही दी थी। कृष्णबोधाश्रम जी को शंकराचार्य के सिंहासन पर बिठाने वाले भी करपात्री जी ही थे। करपात्री जी ब्रह्मा ही नहीं साक्षात् परमब्रह्म थे। ब्रह्म की भाँति सूक्ष्म और मन-वाणी से अगम अगोचर। करपात्री जी ज्ञान-निधि थे। भारतवर्ष उनसे धन्य हुआ।

मेरे सामने परमपावनी भगवती यमुना नदी का वह पुण्य-तट साकार हो उठा है, जहाँ कई वर्षों तक स्वामी करपात्री जी महाराज लोगों को 'सन्मार्ग' दिखाने के लिए समाधि लगाये बैठे रहे। आगम-निगम का ज्ञान बोध कराते रहे थे। निगम बोध घाट पर एक दिन प्रातः मैंने देखा कि विदेश के अनगिन पत्रकारों का वहाँ पर जमघट लगा हुआ है। छुरी-काँटे से नाश्ता निभाने वाले सभी प्रकार के टेबिल-मैनर्स से दूर गोरी चमड़ी के विदेशी पत्रकार और उनके साथ मेमनों की तरह मिमियाती मेमें करपात्री के समक्ष धरती पर घुटने टेके पत्ते के दोनों में मिष्टान्न-नमकीन और मिट्टी के कुल्हड़ में दूध से कलेवा कर रहे हैं। बड़ा स्वादिष्ट था सब। एक अंग्रेज ने धीरे से मुझसे पूछा—'करपात्री का

क्या मतलब होता है ?' मैंने समझाया तो वह पत्रकार दंग रह गया। उसकी अवाक् को वाणी फूटी— धन्य है, यह भारतवर्ष, जहाँ ऐसी अनासक्त विभूतियाँ जन्म लेती हैं।

विदेशी पत्रकार चकित थे

मैंने देखा कि करपात्री जी पर विदेशी पत्रकार प्रश्नों की बौछार कर रहे हैं और वह सूक्ष्मदेही वामन विराट् होकर समस्त शंकाओं का समाधान कर रहे हैं—विशाल प्रश्न-भू-पटल को सहजभाव से नाप रहा है। सबका गर्वोन्नत मस्तक पातालोन्मुख हो रहा है। अधिकांश प्रश्न अर्थशास्त्र-सम्बन्धी थे, जो देश-विदेश की अर्थ-नीति से जुड़े थे, धर्म, राजनीति की प्रासंगिकता के साथ सब का सटीक उत्तर दिया जा रहा था। मैंने अनुभव किया कि करपात्री जी कोरे धर्माचार्य ही नहीं हैं, बल्कि वे एक विचक्षण अर्थ-शास्त्री भी हैं, राजनीतिविद् भी हैं, राजनीतिज्ञ भी हैं, नीतिज्ञ भी हैं और कूटनीतिज्ञ भी। महान् मेधा का ऐसा धनी मुझे भी आशीर्वाद दे गया।

मेरा विश्वास है कि यदि करपात्री जी के जीवन-दर्शन को सही ढंग से समझा जाय तो आज के रुग्ण भारत को सही औषधि मिल सकती है। धर्म, धर्म-निरपेक्षता और साम्प्रदायिकता की जो राजनीति परक व्याख्याएँ आज तक की जाती रही हैं, असल में वे व्याख्याएँ ही देश की एकता और अखंडता के मार्ग में बड़ा व्यवधान बनी हुई हैं। मेरे विचार में विराट् व्यापक विचारों के धनी स्वामी करपात्री जी भारत के भविष्य के सन्देश वाहक थे। मेरी उन्हें विनम्र श्रद्धांजलि।

□□

—ए-२६ लाजपतनगर साहिबाबाद (उ० प्र०) - २०१००५

—"सचमुच राजकुमारी प्रभावती राजे देश की एक अद्‌भुत रत्न हैं। उस दिन 'हिन्दू कोड विरोधी सम्मेलन' में उन दो महात्माओं के सामने राजकुमारी ने बड़े सुन्दर शब्दों में मेरे अंग्रेजी के भाषण का अनुवाद किया। मैं तो तभी प्रभावित हो गया। इसी प्रकार की कट्टरता जैसी इस राजकुमारी और दो महात्माओं में हैं, जितनी बढ़ेगी देश का उतना ही कल्याण होगा। यह देवी सचमुच 'गार्गी' एवं 'मैत्रेयी' की मूर्ति है। स्वामी करपात्री जी बहुत ही विद्वान हैं और यदि ऐसे व्यक्ति समाज का सुधार करें तो समाज का कल्याण हो सकता है।"

कान्सटीट्यूशन क्लब दिल्ली में हिन्दू कोड पर विचार के अवसर पर श्री डा० पट्टाभि सीतारमैया, अध्यक्ष अ० भा० काँग्रेस द्वारा व्यक्त भाव। (सन् १९४९)

श्री स्वामी करपात्री जी महाराज का एक संस्मरण

—प्रो० रामगोविन्द शुक्ल,
धर्मशास्त्रविभागाध्यक्ष सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय वाराणसी

पण्डित मदनमोहन मालवीय से हिन्दू धर्म के सम्बन्ध में जो वाद ऋषिकेश में हरिद्वार कुम्भ के अवसर पर हुआ था, उससे भारतवर्ष के प्रबुद्ध समाज से लेकर सामान्य जन तक स्वामी जी चर्चा के विषय बन गये थे। उस अवसर पर 'मननीय प्रश्नोत्तर' के रूप में स्वामी जी महाराज के तथा श्री जयदयाल गोयनका और हनुमान प्रसाद पोद्दार के विचारों को भी प्रथमतः ग्रंथ रूप दिया गया था। स्वामी जी को महामना मालवीय जी ने हिन्दू धर्म के जागरण के लिये लोक में आने का आग्रह भी किया था। इसी सिलसिले में स्वामी जी हिमालय से उतर कर भारत के भू-भाग में विचरने लगे थे। वे पैदल ही चलते थे। अकेले विचरण करते थे। एक दिन वे अयोध्या जी पहुँचे। वहाँ अयोध्या के सर्वमान्य विद्वान् श्री पण्डित रूद्र प्रसाद अवस्थी से भेंट हुई। जिनके पाण्डित्य से स्वामी जी अध्ययन काल से ही परिचित थे। इसी अवसर पर मेरे पूज्य पिता पण्डित श्री सूर्यनारायण शुक्ल काशी से अयोध्या गये थे। मेरे पिता जी के साथ पं० श्री रूद्रप्रसाद अवस्थी जो उनके समवयस्क शिष्य थे साथ में थे और स्वर्गद्वार दर्शन करने जा रहे थे। उधर से सीढ़ियों से उतरते हुये स्वामी जी का परिचय श्री अवस्थी जी ने दिया। तब तक स्वामी जी निकट आ गये थे। श्री अवस्थो जी द्वारा पिता जी का परिचय प्राप्त कर स्वामी जी ने पहला प्रश्न किया कि आपने मध्वाचार्य श्री सत्यध्यान तीर्थ जी महाराज द्वारा प्रकाशित अद्वैत मत विमर्श का तथा अद्वैत मत निराश का खण्डन माध्वमुख भङ्ग और माध्वभ्रान्ति निराश ग्रन्थ में लिखा। उसके बाद जो उन्होंने माध्वमुखभङ्ग के खण्डन में लिखा उसका उत्तर आपने क्यों नहीं दिया। पिता जी ने उत्तर दिया कि उनके ग्रन्थ में जो कुछ लिखा है वह पिष्ट पेषण मात्र है और उस ग्रन्थ के लेखक श्री नृसिंहाचार्य बड़खेलर इस समय गौरमेण्ट संस्कृत कालेज बनारस में मेरे साथ अध्यापक हैं। उन्होंने मुझसे निवेदन किया है कि अब इसमें मेरे ऊपर कृपा कर कलम न चलावें। मैंने उनके निवेदन पर उनसे वचन दे दिया है कि ठीक है यदि आपके ग्रन्थ में कोई खण्डनीय पदार्थ नहीं होगा तो हम आगे कुछ नहीं लिखेंगे। अतएव उन्होंने इस ग्रन्थ में कोई महत्वपूर्ण अंश अथवा विवादास्पद अंश नहीं लिखा है और फिर मैं न लिखने के लिये वचनवद्ध हूँ। स्वामी जी महाराज ने कहा ठीक है, अब इसका खण्डन मैं लिखूंगा। उसके बाद महाराज श्री ने काशी में आकर 'समन्वय साम्राज्य सम्रक्षणम्' ग्रंथ लिखा और यहीं इस परम्परा की समाप्ति हो गयी। इससे स्वामी जी का पुस्तकों के प्रति कितना आकर्षण था और वे समन्वयवाद के अतिरिक्त खण्डन, मण्डनवाद को पसन्द नहीं करते थे।

स्वामी जी महाराज अनेक ग्रंथों के रचयिता व्याख्याकार, भाष्यकार अनुवादक तथा विशिष्ट कोटि के प्रचारक के रूप में लोगों से जाने गये।

एक बार कानपुर नगर में अखिल भारतीय धर्म संघ के महाधिवेशन में 'सर्ववेदशाखा सम्मेलन' के अवसर पर शास्त्रार्थ चल रहा था। जिसमें आर्य समाज के विशिष्ट विद्वान् श्री ब्रह्मदत्त जिज्ञासु और वाराणेय संस्कृत विश्वविद्यालय के प्राध्यापक डा० गुन्थर से विद्वानों का विचार विमर्श चल रहा था। आर्य समाज का पक्ष था वेद का संहिता भाग ही वेद है ब्राह्मण भाग नहीं। इसका उत्तर महामहोपाध्याय श्री पण्डित गिरधर शर्मा चतुर्वेदी जी दे रहे थे। शास्त्रार्थ के अन्त में स्वामी जी महाराज ने जो शास्त्रार्थ का निष्कर्ष व्यक्त किया उसमें श्री स्वामी जी ने कहा कि ब्राह्मण वेद ही नहीं वेदों का राजा है मन्त्र उसके हुकुम से चलते हैं। इस पर गिरधर शर्मा जी ने अपनी अरुचि व्यक्त की। श्री स्वामी जी ने सभा समाप्त होने के बाद तत्काल पण्डित श्री नकछेदराम द्विवेदी की लिखी हुई पुस्तक 'सनातन धर्मोद्धार' में चिन्ह लगाकर उनके पास भेजा और कहा कि इस पूरे प्रकरण को देखकर वे बतावें कि क्या मैं भ्रम में हूँ। दूसरे दिन श्री चतुर्वेदी जी ने अपना ही भ्रम स्वीकार किया और स्वामी जी के पक्ष का बड़े ढंग से उपपादन किया। जिस पर डा० गुन्थर ने सहमति व्यक्त की किन्तु श्री ब्रह्मदत्त जिज्ञासु जी केवल कोलाहल करते रहे। जिस पर स्वामी जी ने उनकी उपेक्षा कर दी और शास्त्रार्थ अन्य विषयों पर चला।

इसी सभा में एक दिन उत्तर प्रदेश के मुख्य मन्त्री डा० सम्पूर्णानन्द जी ने पुराणों की अनेक कथाओं को जिसमें तुलसी की कथा प्रमुख थी प्रक्षिप्त तथा फूहड़ बताया। स्वामी जी ने संयोजकों से कहा कि सम्पूर्णानन्द जी को आधा घण्टा के लिये रोको वे उत्तर भी सुनते जायें। स्वामी जी ने भक्ति और तुलसी का जो रोचक तथा सारगर्भित समन्वय किया उसे श्री सम्पूर्णानन्द जी ने बड़े ध्यान और गौर से सुना और स्वामी जी से प्रणाम करते हुये कहा कि 'इस प्रकार की कथाओं का वास्तविक अर्थ सामान्य लोगों को समझ में नहीं आता यह कार्य आप जैसे लोग ही कर सकते हैं। यदि आपने ऐसा किया तो मुझे बड़ा हर्ष होगा।'

एक दिन पं० रूद्र प्रसाद अवस्थी जी के साथ मैं स्वामी जी से मिलने गया। अवस्थी जी ने वेदान्त के कई स्थल स्वामी जी से पूछे। स्वामी जी ने जो उस विषय का प्रतिपादन किया उससे अवस्थी जी बहुत प्रसन्न हुये। अन्य चर्चाओं के प्रसङ्ग में श्री स्वामी जी ने कहा कि 'रामाभ्युदय यात्रा' में जो आपने भूमिका में राम जन्म के लिये खीर के बटवारा के सम्बन्ध में विचार लिखे हैं बहुत अच्छे हैं। वह भूमिका मैंने ही अवस्थी जी के नाम से लिखी थी। मैंने कहा कि वह मैंने ही लिखा था आप उसको हाँ कर दीजिये। अवस्थी जी ने भी कहा जब आप इसको ठीक मानते हैं तो मुझको परम सन्तोष है।

एक बार स्वामी जी अपने शिष्य अलखनिरञ्जन को मुक्तावली पढ़ा रहे थे। इसी बीच मैं भी दर्शनार्थ पहुँच गया। स्वामी जी ने मुझे देखते ही कहा आओ, बैठो आज मैं तुम्हारे ही बाप, पूत की टीका के आधार पर मुक्तावली पढ़ा रहा हूँ, हमारे इस शिष्य को पहले तुम पढ़ा दिया करो, फिर हम पढ़ायेगे। ये तुम्हारे यहाँ जाया करेगा। मैं तो इतने से ही निहाल हो गया था। तब तक

स्वामी जी ने कहा तुम्हारा अनुवाद बड़ा अच्छा है लेकिन कहीं-कहीं अपने पिताजी की पूरी टीका का अनुवाद नहीं किये हो अगले संस्करण में उसे पूरा कर दो।

इस प्रकार स्वामी जी के निकट में रहने के नाते उनके संस्मरणों की चर्चा तो ग्रंथ बन जायेगा। मैंने देखा कि भगवान् शंकराचार्य का जन्म मीमांसकों के द्वारा बौद्ध धर्म को पछाड़ दिये जाने के बाद हुआ था। भारतीय जनजीवन बौद्धाचार से ऊब चुका था किन्तु स्वामी जी का जन्म तो हिन्दू धर्म को प्रणामी सम्प्रदाय के ढांचा में ढालने वाले महात्मा गान्धी के निवेदन पर वे सनातन वैदिक धर्म के संरक्षण के लिये समाज में उतरे। वे भी रुग्ण होने के नाते दैहिक और कांग्रस के नाते मौलिक समर्थन से भी वञ्चित रहे। "इकला चलो रे" की नीति पर सारे भारतवर्ष में उन्होंने सनातन धर्म की ज्योति जलायी। स्वामी करपात्री जी अद्वैत मत का प्रचारक होने के नाते यदि शंकराचार्य थे तो यज्ञों का पुनरूज्जीवन करने के नाते वे कुमारिल भट्ट भी थे। यदि वेद भाष्यों के उद्धारक होने के नाते सायणाचार्य थे तो हिन्दू धर्म के पूरे विधान के अभ्यासी होने के नाते वे याज्ञवल्क्य या विश्व रूपाचार्य थे। यज्ञों में एक से लेकर तीन पशु तक का वध देखकर भगवान् बुद्ध का हृदय दया से द्रवीभूत हो गया। किन्तु आज लाखों की संख्या में बकरे ही कौन कहे, गायों की भी हत्या प्रतिदिन देखकर भी महात्मा गान्धी के हृदय में अहिंसा नहीं जगी। किन्तु स्वामी करपात्री जी ने बिना पशु हिंसा का यज्ञ प्रवर्तित किया। और सर्वथा हिंसा बन्द कर दी जाये इसके लिये शासन से यातना सहते ही रहे। इस प्रकार स्वामी जी भगवान् बुद्ध और महात्मा महावीर से भी अधिक अहिंसावादी थे। उनका पाण्डित्य अगाध था। उनका अभ्यास अप्रतिम था। वे संसार के अच्छे ज्ञाता होते हुये भी समाधिस्थ थे। उनमें क्या गुण नहीं थे, जब यह सोचता हूँ, तो ध्यान में आता है कि वे इस हिंसक, भ्रष्टाचारी, शोषक, राक्षसी युग में रहने लायक नहीं थे और वे कलियुग के इस प्रथम चरण के आरम्भ में ही आये और चले गये। काशी में मृत्यु होने के नाते सदा के लिये चले गये। उनके अवतार की भी सम्भावना नहीं रही। वे छोड़ गये अपनी ग्रंथ राशि और अपना संस्मरण, जिनका संरक्षण और प्रचार करना हमारा कर्त्तव्य है।

□□

"संन्यास के मूर्त्तावतार स्वामी श्री करपात्री जी की गिरफ्तारी वह अनर्थ है जिससे चाहे हिन्दू न हिले हों, पर गत ५० साल के दिल्ली के इतिहास में अभूतपूर्व भूकम्प द्वारा राजधानी उनकी सजा की रात में हिलकर (भूकम्प द्वारा) यह स्पष्ट कर चुकी है कि दैवी जगत यह अन्याय मौनपूर्वक सहन न करेगा।"

—म० म० पं० गिरिधर शर्मा, चतुर्वेदी जयपुर।
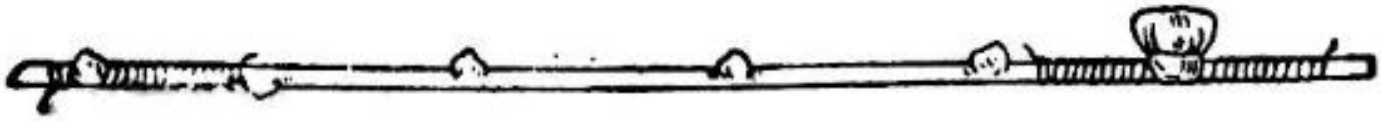
धर्म-सम्राट स्वामी करपात्री जी का वैदुष्य

—आचार्य श्यामलाल शर्मा,
प्रधानाचार्य श्री धर्मसंघ महाविद्यालय, दिल्ली

विश्व भर में ऐसा प्रबुद्ध बुद्धिजीवी कौन होगा जो अनन्त श्री विभूषित धर्म सम्राट् स्वामी करपात्री जी के विश्व विदित वैदुष्य से अपरिचित हो। उनकी विद्वत्ता, भाषण-कला, लेखन शैली विषय विवेचन गाम्भीर्य प्रायः प्राचीन महर्षियों के साहित्य के अवगाहन से आंशिक अनुमानित होती है। जिस प्रकार समस्त ब्रह्माण्ड का प्रकाशक अम्बर मणि सूर्य समस्त ब्रह्माण्ड को प्रकाशित करता है, पर उसका भी प्रकाशन दीप-ज्योति से अर्चना रूप में किया ही जाता है, ठीक उसी प्रकार महाराज श्री का वैदुष्य किन शब्दों में किया जाये ? यह विचार धारा "नमः पतत्यात्म समं पतत्रिणः" के आधार पर अपनी तुच्छ लेखनी से उनके वैदुष्य की समर्चा ही करनी है। अस्तु ?

महाराज श्री के प्रथम बार दर्शन का सौभाग्य सन् १६३७ में परमपूज्य यति मण्डली मण्डित पण्डित स्वामी अनन्त श्री विश्वेश्वराश्रम जी महाराज (पण्डित स्वामी जी) के निर्वाण महोत्सव पर हुआ था, जो साङ्ग वेद महाविद्यालय नर-वर नरौरा बुलन्दशहर के विशाल प्राङ्गण में कलिमल हारिणी परमपावनी भागीरथी के तट पर मनाया जा रहा था। उस समय देश के कोने-कोने से मूर्धन्य विद्वान् पण्डित स्वामी जी को श्रद्धाँजलि अर्पित करने तथा धर्म-सम्राट् के भागीरथी के प्रवाह की भांति अनवरत भाषण-माला से हृदय को पवित्र और आह्लादित करने के लिए समुपस्थित थे। ग्रामीण महिलायें भी दार्शनिक विचारों से संवलित तथा संस्कृत की प्रचुर शब्दावली से ओत-प्रोत भाषणों को मन्त्र मुग्ध होकर पांच पांच घन्टे तक सुनने के लिये उमड़ पड़ती थीं। विद्वानों और शिक्षित पठित जन-समुदाय की तो बात ही क्या ?

उस समय मैंने महाराज श्री की एक पुस्तिका मुझे जहाँ तक स्मरण है "शङ्कर सिद्धान्त और उनके समाधान" शीर्षक जो जयदयाल जी गोयन्दका ने लिखी थी देखने को मिली। गोयन्दका जी ने जो जो आक्षेप किये थे, महाराज जी ने उनका कितनी मीठी और प्राञ्जल भाषा में उत्तर लिखा था, जिसका वर्णन करना कठिन है। यह पुस्तक संस्कृत में लिखी गई थी—पुस्तक माध्यम से महाराज श्री से साक्षात् परिचय का द्वार भी खुल गया। जिसके फलस्वरूप आज तक उनके आदेश का पालन करने का सुअवसर मुझे प्राप्त है। नर-वर के किसी विद्वान् से यह भी सुना कि पंडित स्वामी धर्म सम्राट् को अद्वैत-सिद्धि, खंडन-खंड-खाद्य पढ़ाते थे। उस समय परमश्रद्धेय विद्वन्मूर्धन्य महा-विद्यालय के प्राचार्य स्वनाम-धन्य पंडित प्रवर आचार्य विजय प्रकाश जी भी वेदान्त पढ़ने के लिये बैठते थे। कभी-कभी स्वामी जी और आचार्य जी का शास्त्रार्थ पंडित स्वामी जी कराया करते थे। पंडित स्वामी जी के दोनों ही शिष्य थे, अन्त में दोनों विभूतियों को अत्यन्त स्नेह के साथ अपनी पंजाबी भाषा में बोलते हुये कहते थे, "अजी विजय प्रकाश तुसी तो ग्रन्थ की, ग्रन्थों की बात बोलेगा—पर यह
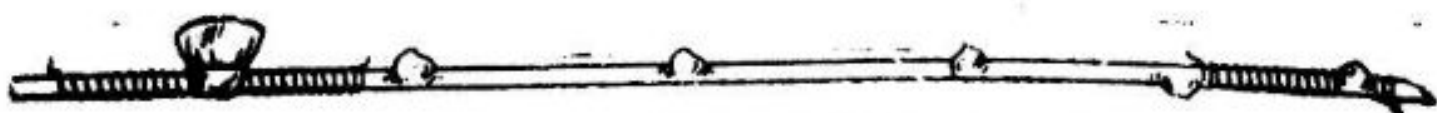
करपात्री तो ग्रन्थों दे बाहर की बातें बोलता है, तुसी बाहर की बातें कहां से लायेगा, इस प्रकार के एक महापुरुष की वाणी से निकले शब्द अपना न केवल महत्व रखते हैं, अपितु महाराज श्री के उत्कट वैदुष्य के प्रमाण-पत्र भी हैं।

इसके पश्चात् अखिल भारतवर्षीय धर्मसंघ की स्थापना कर अनन्त श्री विभूषित स्वामी कृष्णबोधाश्रम जी महाराज जो धर्म सम्राट् की ही द्वितीय प्रतिमा थी, अध्यक्ष बनाया जो कालान्तर में ज्योतिर्मठ बदरिकाश्रम के शङ्कराचार्य पद पर अभिषिक्त हुये। दोनों महाविभूतियों ने देश में व्यापक रूप से अधर्म का उन्मूलन और धर्म की ध्वजा फहराने का संकल्प कर देश में सनातन धर्म का प्रसार प्रचार करना आरम्भ किया। उसी समय देश को स्वतन्त्र कराने का पाश्चात्य राजनीति से प्रभावित धर्म और ईश्वर अविश्वासी नेताओं ने आन्दोलन चला रक्खा था-ईश्वर और धर्म के कट्टर पक्षपाती धर्म सम्राट् ने भी देश की स्वतन्त्रता के लिये अपने अनेक भाषण देने के साथ देश की अखण्डता के लिये प्रबल संघर्ष किया, पर आज के धर्म विरोधी नेताओं ने जनता को धोखा दिया और यह कहा कि किसी वस्तु को तोड़कर ही मिलाया जा सकता है। स्वराज्य के बाद देश को अखंड कर लेंगे और दूध की नदी बहा देंगे। आज इस धोखा रूप आश्वासन की जवनिका हठ गयी। उसी समय महाराज श्री ने "मार्क्सवाद और रामराज्य" नामक अनूठा ग्रन्थ का प्रणयन किया। जिसको पढ़कर और अनुशीलन कर केवल भारत के ही मनीषी नहीं अपितु विदेशी विद्वान भी दांतों के नीचे अंगुली दबा गये। अत्यन्त प्राचीन काल की विदेशी राजनीति से आरम्भ कर साम्राज्यवाद, समाजवाद, कम्यूनिज्म, लेनिनवाद, मार्क्सवाद आदि सभी वादों का वैचारिक और व्यवहारिक पक्षों को सामने रखकर शास्त्र, युक्ति और तर्क के बल पर समस्त वादों को अव्यवहार्य और जनशोषक सिद्ध कर दिखाया। सभी वाद नाम मात्र से अविचारित रमणीय हैं केले के स्तम्भ की भांति थोथे और अनुपादेय हैं। इनमें सुख और शान्ति की तो गन्ध भी नहीं है। अन्त में रामराज्य के नाम से भारतीय राजनीति को सुख शान्ति का साधन बताया क्योंकि कणक, कामन्दक, मनु और याज्ञवल्क्य आदि महर्षियों के तपोपूत विचारों को जनता के सामने रक्खा। रामराज्य परिषद् की स्थापना द्वारा रामराज्य का आदर्श रक्खा—महाराज ने यह सिद्ध कर दिखाया कि बिना धर्म के राजनीति विधवा है। राजनीति पर धर्म का अंकुश होना ही चाहिये। पर यह देश का दुर्भाग्य ही था कि इस आधुनिक विज्ञान और प्रलोभन के चकाचौंध में चुंधियाये तात्कालिक सत्ता और पदलोभियों ने इधर जनता को झुकने ही नहीं दिया। जिसका दुष्परिणाम न केवल गरीब समाज भोग रहा है। अपितु, बड़े-बड़े व्यापारियों, नेताओं, शिक्षाविदों, विधिवेत्ताओं के होश उड़ रहे हैं। शासन मौन है, केवल अपनी घुनी और टूटी हुयी कुर्सी को दोनों हाथों से पकड़ रहा है। धर्म सम्राट् का नारा था, देश अखंड हो, विधान शास्त्रीय हो, पर अब पछिताये होत का जब चिड़िया चुग गई खेत। ऐसा निर्भीक सिद्धान्तवादी नेता भी न मालूम कब आयेगा—मार्क्सवाद और रामराज्य, ग्रन्थ में देश की सुस्थिर परम्परा को बनाये रखने के अनेक शास्त्रीय उपाय थे।

महाराज श्री के प्रणीत छोटे-बड़े लगभग ६० ग्रन्थों का उल्लेख कहाँ तक किया जाये और

उनके वैदुष्य को अंकित करने के लिये कहाँ तक चेष्टा की जाये। उनके विविध विषयों के मनन और मन्थन का दिग्दर्शन ही कराया जा सकता है। 'चातुर्वर्ण्य विमर्श'' नामक दो भागों में संस्कृत भाषा में लिखा ग्रन्थ चारों वर्णों का उद्भव उनके कर्म आदि का विशद शास्त्रीय विवेचन है। सुधारवाद के नाम पर भ्रान्त करने वाले अनर्गल मिथ्या-प्रवादियों को सच्चा शास्त्रीय सन्मार्ग उन्होंने दिखाकर सिद्ध कर दिया कि बिना शरीर परिवर्तन के जाति-परिवर्तन का बकवास केवल भोले समाज को ही मार्ग भ्रष्ट कर सकता है।

किसी विजातीय पर-धर्म असहिष्णु ने रामकथा लिखकर राम के आदर्श पर आक्षेप किया। धर्म सम्राट् ने एक हजार पृष्ठों का रामायण मीमांसा नामक ग्रन्थ लिखकर आक्षप कर्ताओं के मुख कृष्ण मसी से सदैव के लिये काले कर दिये -- इस ग्रन्थ में सौ से अधिक विभिन्न प्रान्तीय भाषाओं में लिखे गये राम चरितों के प्रमाण प्रस्तुत किये गये हैं। कहा नहीं जाता कि उन्होंने भिन्न-भिन्न भाषाओं की रामायण कब पढ़ी और कहाँ पढ़ी देखी ? तीन बार पूजा करना, रात्रि में भाषणों द्वारा भिन्न-२ स्थानों में एकत्रित सभाओं को सम्बोधित करना-प्रभात में विद्वज्जन मनोरन्जिनी अपूर्व कृष्ण चरित्रों का कथन करना। महात्माओं और विद्वानों को तत्तत् विषयों का पठन-पाठन करना। ग्रन्थों का लिखना। बाहर से आने वाले भक्तों, शिष्यों से बात-चीत करना। कहाँ तक कहें, वे एक विलक्षण प्रतापी प्रभाव शाली महामनोषी थे। जो देश और समाज को गम्भीर साहित्य निधि दे गये।

इसके अतिरिक्त उन्होंने साहित्य शास्त्र की भी अभिवृद्धि की है। उनकी नव नवोन्मेष शालिनी प्रतिभा का परिचायक "भक्ति रसार्णव" नामक ग्रन्थ उस न्यूनता का पूरक सिद्ध हुआ है, जिसको विश्वनाथ, आनन्द वर्धनाचार्य जयदेव, रसगंगाधर कार भी पूरा न कर पाये। रस सिद्धान्त के सम्बन्ध में किसी आचार्य ने आठ रसों का वर्णन किया है, तो किसी ने नौ रसों का, रस गंगाधर कार ने भक्ति को रस न मानकर भाव मान कर छोड़ दिया है। पर धर्म-सम्राट् जी ने भक्ति को रस सिद्ध कर दिया है। बोलती हुयी सजीव संस्कृत भाषा में लिखा हुआ यह ग्रन्थ महाराज जी की अनूठी प्रतिभा की छाप विद्वानों के हृदय पर बैठा चुका है। कहाँ तक कहा जाये। उनके वैदुष्य की छाप उनके ग्रन्थों के अध्ययन करने से अध्येता के हृदय पर अमिट और स्थायी पड़े बिना नहीं रह सकती।

उन्होंने अपने जीवन के अन्तिम वर्षो में "वेदार्थ पारिजात" नामक ग्रन्थ रत्न पारिजात के रूप में ही समाज को समर्पित किया है, जो लगभग २५०० पृष्ठों से अधिक है और दो भागों में प्रकाशित हुआ है। जिसमें वेद क्या है ? वेद का निर्माता कौन है ? क्या मन्त्र मात्र ही वेद हैं ? क्या चार जिल्द ही वेद हैं ? उपनिषद् भाग, ब्राह्मण भाग, आरण्यक भाग वेद है वा नहीं ? इसके अतिरिक्त विदेशियों के उठाये गये आक्षेपों का उत्तर वैदिक मन्त्रों में प्रक्षेप बताने वालों को उत्तर दिया है। यह ग्रन्थ संस्कृत भाषा में लिखा गया है। उनके वैदुष्य के सम्बन्ध में क्या कहा जाये, जो भी लिखा जाये, वह सब स्वल्प है। उनकी प्रखर प्रज्ञा के प्रसाद से जनता लाभ उठाये यही प्रभु से प्रार्थना है। उनके परिश्रम को जनता तक पहुंचाने वाले भावुक भक्त और श्रद्धालु इस कार्य में सर्वात्मना लगे हुए हैं, वे भी धन्य हैं तथा प्रशंसा के पात्र हैं। धर्म सम्राट् उनके निर्मल स्वान्त में विराजमान होकर उन्हें प्रेरणा देते रहें, ऐसी मेरी प्रार्थना है।

●●

अप्रतिम व्यक्तित्व वैदुष्य के प्रतिनिधि स्वामी करपात्री जी महाराज

— वासुदेव शास्त्री 'अतुल' महामन्त्री—अखिल भारतीय रामराज्य परिषद्।

स्वामी श्री करपात्री जी महाराज जिस समय श्रीमद् भागवत की रसमयी कथाओं पर प्रवचन करते थे। उस समय उनके मुखारविन्द से निर्गत प्रवाहपूर्ण सानुप्रासिक शब्दावलियों को सुनकर उनके दिव्य कान्तिमान मुख, मंजुल अंगुलियों की मुद्राओं को देखकर मालूम होता था कि साक्षात् शुकदेव जी किंवा अष्टादश पुराणों के स्रष्टा भगवान् वेद व्यास ही व्याख्या कर रहे हैं।

कथा स्थल पर स्थित विद्वान् श्रोताओं की भावभंगिमा को श्री स्वामी जी बड़ी चतुराई से परखते थे। एक बार वाराणसी धर्म संघ में श्रीमद् भागवत पर प्रवचन चल रहा था और स्वामी जी—"नौमीड्मतेऽभ्रवपुषे तडिदम्बराग' इस श्लोक की व्याख्या करते हुये कह रहे थे हे ईड्य ? ते त्याम् नौमि यह शब्द सुनते ही एक व्याकरण के महान् पण्डित ने हँस दिया। विद्वान् का आशय यह था कि "नमः के योग में चतुर्थी विभक्ति होती है द्वितीया नहीं। स्वामी जी द्वितीया विभक्ति का प्रयोग कर रहे हैं।" स्वामी जी तत्काल ही उस विद्वान् की हँसी को समझ गये और कहने लगे—त्वाम् अनुकूलमितुम् नौमि यहाँ अनुकूलार्थ में द्वितीया है। वह पण्डित स्तब्ध रह गये। एक एक शब्दों का व्याकरण वेदान्त तन्त्र आगम आदि से क्या सम्बन्ध होता है। इसकी पूरी की पूरो व्याख्या बड़े समारोह के साथ स्वामी जी करते थे।

स्वामी जी जिस समय उपनिषद्, गीता, ब्रह्मसूत्र का भाष्य पढ़ाते थे और उसकी साङ्गोपाङ्ग व्याख्या करते थे उस समय उनकी व्याख्यान कलाओं से उनमें भगवान् शंकराचार्य की झलक दिखाई पड़ती थी।

जिस समय रामानुज वेदान्त पर प्रवचन करते थे और आलवन्दार स्तोत्र को सुनकर भाव-विभोर होकर सजल नयन हो जाते थे उस समय उनके श्री विग्रह में भगवान् रामानुजाचार्य की झलक दिखाई पड़ती थी।

स्वामी जी जिस समय वल्लभ वेदान्त की व्याख्या करते थे और श्रीमद् भागवत प्रवचन में वल्लभाचार्य के सिद्धान्तों का प्रतिपादन करते थे उस समय उनमें भगवान् वल्लभाचार्य की झलक दिखाई पड़ती थी।

जिस समय रामायण की रामकथा और रामभक्ति का विवेचन करते थे और भगवती सीता के परम पुनीत चरित्र का विश्लेषण करते थे। उस समय उनके भाव विह्वल सजल नयनों से राम प्रतिष्ठापनाचार्य भगवान् रामानन्दाचार्य की झलक उनमें दिखाई पड़ती थी।

स्वामी जी बौद्ध दर्शन के पूर्व पक्ष को जब सभाओं में समारोह के साथ उपस्थापित करते थे तो उस समय उनमें ऐसा अभिनिवेश देखने का मिलता था मानो साक्षात् भगवान् बुद्ध ही आ गये हैं। वहीं उत्तर पक्ष को स्थापित करते समय मालूम होता था कि पुनः कुमारिल भट्ट और आदि शंकर आ गये।
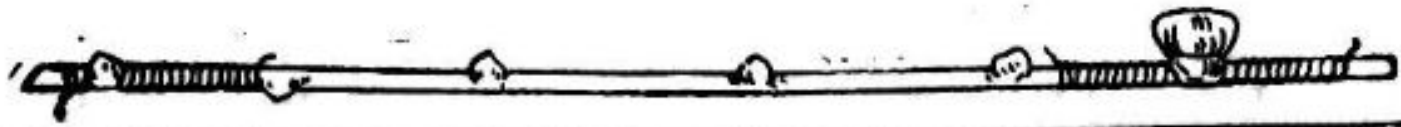
सभाओं में भौतिक जड़वादी मार्क्सवाद के सिद्धान्तों को पूर्व पक्ष के रूप में विविध तर्क और युक्तियों से जिस समय उपस्थापित करते थे उस समय ऐसा लगता था मानो भौतिक जड़वाद ही सब कुछ है धर्म-ईश्वर शास्त्र नाम की कोई वस्तु ही नहीं है और अगर है तो सब काल्पनिक है।

मार्क्स के पूर्व पक्ष का शास्त्रीय तर्कों और युक्तियों से जिस समय खण्डन करते थे और भारतीय धर्म-नीति, अर्थनीति, समाजनीति, राजनीति की व्याख्या करते थे और भारतीय धर्म सापेक्ष राजनीति को प्रतिष्ठित करते थे। उस समय उनके दिव्य कमनीय मधुर मनोहर आकृति में बृहस्पति, शुक्र, कामन्दक और कौटिल्य की झलक दिखाई पड़ती थी।

नेती, धोती, नेवली, शंख प्रक्षालन, वज्रौली आदि हठयोग की क्रियाओं और विविध प्रकार के आसनों को जब वे करते थे तो स्वामी जी की उन चेष्टाओं को देखकर यही आभास होता था कि अष्टांगयोग दर्शन के प्रणेता भगवान् भाष्यकार पतञ्जलि ही योग क्रिया कलाप को साकार बना रहे हैं।

चुनाव के अवसर पर रामराज्य परिषद् की सभाओं में जब विभिन्न पार्टियों के चुनाव घोषणा पत्रों और उनके राजनयिक कूटनीतिक गति विधियों की समालोचना करते थे तो एक अद्भुत महान् क्रान्तिकारी नेता के रूप में दिखाई पड़ते थे।

अखिल भारतीय धर्म संघ, अखिल भारतीय रामराज्य परिषद्, गोरक्षा समिति आदि अनेक संघटनों की राष्ट्रीय एवं धार्मिक विचार गोष्ठियों में जब विचारणीय विषयों पर वाद विवाद के समय समुचित समाधान करते थे तो स्वामी करपात्री जी में महर्षि चाणक्य के स्वरूप की झलक दिखाई पड़ती थी।

सर्ववेद शाखा सम्मेलनों के अवसर पर वेदवेदाङ्गादि विषयों पर शास्त्रार्थ करते समय शास्त्रीय पक्षों के समर्थन में प्रतिपक्षी को अत्यल्प समय में मधुर शब्दों में निरुत्तर कर देते थे। उस समय स्वामी करपात्री जी में देवगुरु बृहस्पति की झलक दिखाई पड़ती थी।

स्वामी करपात्री जी लेखन कला के महान् सिद्धहस्त योगी थे। धर्म दर्शन राजनीति आदि विविध विषयों, धर्म विरोधी, शास्त्र विरोधी आक्षेपों के खण्डन में उनकी लेखनी अजस्र अबाध गति से प्रवाहित होती थी। उनकी लेखनी की तीव्र गति और प्रवाह को देखकर महाभारत के महान् लेखक भगवान् गणपति की लेखनी की उनकी लेखनी में झलक मिलती थी।

'मार्क्सवाद और रामराज्य' में विश्व के राजधर्म की व्याख्या और समीक्षा, 'वेदार्थ पारिजात' में वेदों पर किये गये आक्षेपों समाधान और वेद मन्त्रों पर किये गये भाष्य को अवलोकन करने से स्वामी जी में भगवान् भाष्यकार एवं सायण, उव्वट, महीधर आदि आचार्यों से भी अधिक ज्ञान विज्ञान सम्पन्नता दिखाई पड़ती है।

स्वामी जी के आँख के पलकों में निद्रा की झलक कभी नहीं दिखाई पड़ती थी। मैं उनके साथ रहता था तो देखता था थोड़ी सी नींद आते ही तुरन्त जग जाते थे और घड़ी उठाकर समय देखते थे। कभी-कभी समय पूछते भी थे। रात्रि में लगभग दो बजे ही स्नानादि से निवृत्त होकर जप करते थे और ठीक चार बजे से ६ बजे तक पैदल टहलते हुये अनेक स्तोत्रों का पाठ करते थे। प्रातः

काल की पूजा में श्रीविद्या की उपासना श्रीचक्र का विधिवत् अर्चन, मध्यान्ह में पूजन के पश्चात् आसन एवं शीर्षासन में सप्तशती पाठ सायंकाल लगभग ५ बजे हाथ की चक्की का पिसा हुआ आटा, मूग की दाल, चावल वह भी ब्राह्मण के घर के अन्न की नमक रहित भिक्षा करते थे और केवल गंगा जल ही पीते थे सायं काल स्नान के पश्चात् रुद्राभिषेक यह उपासना का क्रम नियमित चलता था। अन्य समय में लेखन, भाषण, अध्यापन आदि का कार्यकम निरन्तर चलता रहता था। स्वामी जी की तपश्चर्या दर्शन में अतीत भारत के उपमन्यु गौतम आदि महातपस्वियों की झलक साकार रूप में दिखाई पड़ती थी।

स्वामी जी शक्ति उपासना, गणपति-उपासना, सूर्योपासना और विष्णु उपासना में अनन्य निष्ठा रखते थे और सभी की उपासना करते थे। वस्तुतः स्वामी करपात्री जी को परम शाक्त परम गाणपत्य, परम सौर, परम शैव, परम वैष्णव कहा जाय तो अतिशयोक्ति नहीं होगी।

स्वामी करपात्री जी महाराज सभी मन्त्रों में परम श्रद्धा और अनन्यनिष्ठा रखते थे। एक बार हमसे बता रहे थे कि मैं जब घर पर था तो बचपन में हमारे दांतों में बहुत दर्द होने लगा। उस समय हमारे पिताजी गाँव में ही चार बजे प्रातः एक मुसलमान के घर पर मन्त्र चिकित्सा (झाड़ फूंक) कराने के लिये ले गये। मुसलमान का नाम इलाही था। उसने कहा कि माँग लीजिये। हमने उससे मांगा कि उमर भर हमारे दाँतों में दर्द न हो। तब से कभी दाँतों में दर्द नहीं हुआ। मुसलमानों के यहां भी बड़े अच्छे चमत्कारिक मन्त्र हैं।

स्वामी करपात्री जी महाराज परम सिद्ध सन्त थे। दिल्ली के श्री रघुनाथ प्रसाद तर्क भास्कर (वर्तमान स्वामी भास्करानन्द सरस्वती) एक बहुत बड़े सेठ को स्वामी जी के पास ले जाना चाहते थे। उसकी इच्छा थी कि मुझे स्वामी श्री करपात्री जी का चरण स्पर्श करा दो तो एक करोड़ रुपया दूंगा। तर्क भास्कर जी ने स्वामी जी से बताया कि वह सेठ प्रातः काल आपके दर्शनों के लिये आवेंगे। स्वामी जी उसी रात्रि में ही अन्यत्र चल दिये और कहा कि उस सेठ को हमारे पास मत ले आओ।

विधान सभा निर्वाचन सन् १९७४ के सन्दर्भ में दिसम्बर सन् १९७३ में मेरठ जिले के बागपत में चुनाव सभा के पश्चात् स्वामी जी जगद्गुरु शंकराचार्य स्वामी श्रीकृष्ण बोधाश्रम जी महाराज की तपस्थली में ठहरे थे। उस सभा में मैं भी था और मेरे गुरु भाई प्रबल जी भी थे। स्वामी जी से मैंने ही रामराज्य परिषद् के चुनाव कोष की चर्चा की तो स्वामी जी ने कहा कि रामराज्य परिषद् को बहुत से लोग अर्थ देना चाहते हैं कि स्वामी जी स्वयम् मुझसे माँगें तो मैं उन्हें अर्थ प्रदान करू। परन्तु मैंने आज तक अपने जीवन में किसी से कहीं पर भी कभी भी अर्थ नहीं माँगा है। सोचता हूँ अब चलने का समय आ रहा है जीवन भर किसी से नहीं माँगा तो अब क्यों माँगू। किसी पूंजीपति से बिना पैसे लिये ही चुनाव लड़ना भी एक बहुत बड़ा आदर्श है। बिना पैसा लिये त्यागपूर्वक लड़ना भी एक तप है राजधर्म की निःस्वार्थ सेवा है।

संस्था से सम्बद्ध कुछ पूंजीपतियों की दुर्नीति के कारण असन्तुष्ट होकर स्वामी जी सन्
१९६३ में श्री धर्म संघ शिक्षामण्डल दुर्गाकुण्ड वाराणसी में ठहरना बन्द कर दिया था। तब सन्मार्ग
के प्रधान सम्पादक श्री पं० गंगाशंकर मिश्र ने भी धर्म संघ छोड़कर नारद घाट पर अपना आवास
बनाया। तब स्वामी जी मिश्र जी के यहाँ ठहरने लगे।

सन, १९७१ में नारद घाट छोड़कर मिश्र पोखरा स्थित वृन्दावन बिहारी भवन में निवास
करने आये। और मुझसे कहा कि नारद घाट से हमारी सभी पुस्तकें उठा लाओ। मैं लाने के लिये
तैयार हुआ तो रामराज्य परिषद् के तत्कालीन राष्ट्रीय अध्यक्ष श्री पं० नन्दलाल शास्त्री ने कहा कि
नारद घाट स्थित मकान में स्वामी जी का भी नाम है। सामान मत ले आओ उसमें कब्जा बना रहेगा।
मैंने यह समाचार स्वामी जी महाराज से बताया तो स्वामी जी ने कहा कि हमें कब्जा करना होता तो
जोशी मठ की सम्पत्ति को कब्जा कर लेता जो इधर-उधर हो रही है—महात्माओं को किसी के मकान
को कब्जा नहीं करना चाहिये सांप की तरह रहना चाहिये। फिर स्वामी जी ने कहा कि मैंने धर्म संघ
में गायत्री द्वारा निर्मित भवन को जब से छोड़ दिया तब से उसमें कभी लघु शंका भी नहीं किया।

सन् १९६६-६७ में दिल्ली में सर्वदलीय गोरक्षा समिति द्वारा विशाल गोरक्षा आन्दोलन
स्वामी करपात्री जी महाराज के के नेतृत्व में चला। उस समय स्वामी जी उस समिति के अध्यक्ष थे।
उन दिनों जेल यात्रा तथा दिल्ली में मैं स्वामी जी के साथ रहा।

श्री प्रभुदत्त ब्रह्मचारी जी का एवं पुरी के शंकराचार्य जी का अनशन चल रहा था। स्वामी
जी के पास अनशन को तोड़वाने के लिये श्री जयप्रकाश नारायण श्री द्वारका प्रसाद मिश्र आदि
अनेक नेता पधारते रहे। उन्हीं दिनों राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के सर संघ चालक श्री गोलवल्कर जी
भी आये स्वामी जी से कहा कि—शंकराचार्य और ब्रह्मचारी जी का अगर बलिदान हो गया तो सारे
देश में क्रान्ति मच जायेगी और हम क्रान्ति मचा देंगे।

श्री गोलवल्कर जी की बातें सुनकर स्वामी जी ने कहा कि श्यामा प्रसाद मुखर्जी का
बलिदान हुआ तो आपने क्या क्रान्ति किया ? क्या हवा में लाठी घुमाने से क्रान्ति होगी ? बलिदान
के बाद तो शोक सभा होगी या क्रान्ति ? यदि क्रान्ति करना है तो शंकराचार्य और ब्रह्मचारी जी के जीते
जी ही क्रान्ति दिखायें। स्वामी जी ने पुनः कहा कि इस समय यदि भारत की सम्पूर्ण जेलें भर दी गयीं
तो कुछ क्रान्ति हो सकती है। इस पर श्री गोलवल्कर जी ने कहा था कि एक सप्ताह के अन्दर मैं
प्रयास करूंगा भारत की सभी जल भर दी जायेगी। परन्तु जेल भरना सम्भव हो न सका।

देश में राजनैतिक और सामाजिक, धार्मिक संगठनों ने स्वामी जी के नेतृत्व की उपेक्षा
किया जिसके कारण देश को खण्डित रूप में देखा जा रहा है और आज भी गोवंश हत्या जारी है।
हिन्दू मान्यताओं को नष्ट करने वाले अधार्मिक कानून लागू हैं।

स्वामी जी के द्वारा स्थापित रामराज्य परिषद् एक विचारधारा है। वह अपने स्वरूप में
आज भी प्रवाहित है अडिग है। उसके कार्यकर्ता निष्ठा के साथ कार्यरत हैं। कुछ लोग आक्षेप करते
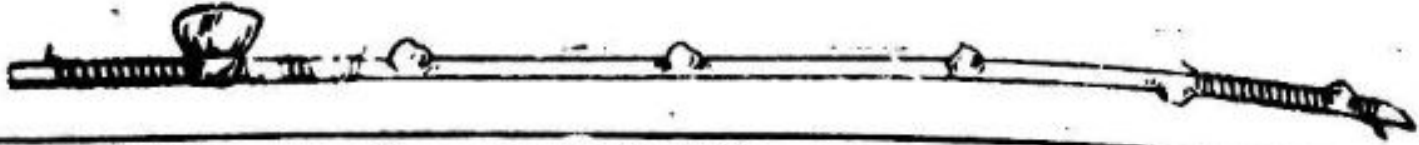
हैं कि परिषद् के नेता चुनाव में सफल नहीं हो रहे हैं। परन्तु अन्य दल के नेता तो फिसल रहे हैं। उनमें सिद्धान्त और आदर्श तो अब उठ ही गया है। वे सफल होकर भी प्रशासन संचालन में विफल सिद्ध हो रहे हैं। रामराज्य परिषद् के नेता सैद्धान्तिक दृष्टि से विफल होकर भी सफल हैं सुस्थिर हैं समाज को देश को गुमराह नहीं कर रहे हैं। नैतिक दृष्टि से रामराज्य परिषद् विफल नहीं कहा जा सकता।

देश, धर्म, संस्कृति, गोवंश रक्षा, राष्ट्रीयएकता, अखण्डता, समन्वय सामञ्जस्य स्थापना के लिये जितने भी अवतार हुये हैं उनकी तुलना स्वामी करपात्री जी महाराज के देश, काल परिस्थिति के अनुसार कृत, कार्य, त्याग, बलिदान आदि सर्वोपरि सिद्ध होते हैं और भारतीय इतिहास में एक गौरवपूर्ण स्थान रखते हैं।

देश में धर्म प्रतिष्ठा के लिये भगवान् मर्यादा पुरुषोत्तम राघवेन्द्र श्री राम के कोमल चरणारविन्द में दण्डकारण्यके कण्टक चुभे थे। ऋषियों ने भगवान् श्री राम के उन्हीं चरण कमलों के ध्यान के लिये प्रेरणा किया है—

स्मरतां हृदि विन्यस्य विद्धं दण्डक कण्टकै।
यत्पाद पल्लवंराम आत्मज्योति रगात्प्रभु ॥ —'श्रीमद्‌भागवत'

यहाँ तो राष्ट्र रक्षा, धर्म रक्षा, गोरक्षा के लिये तो स्वामी करपात्री जी महाराज के चरण कमलों में नहीं दिल्ली के तिहाड़ जेल में कांग्रेसी और जनसंघी प्रशासन में दिनांक २६ जून १९६७को वाम नेत्र कमल पर लौह शलाका के भयंकर आघात हुये हैं जिसे स्मरण पर अब तो यही कहना होगा कि—

स्मरतां हृदि विन्यस्य करपात्र महायशम्।
विद्धं लोह शलाकाभिर्वाम नेत्रं सुकोमलम् ॥

●●

वे सच्चे अर्थों में सरस्वती-पुत्र थे

—विशनचन्द सेठ (भूतपूर्व संसद सदस्य)
हिन्दू महासभा के भूतपूर्व प्रधानमन्त्री

श्री स्वामी करपात्री जी महाराज न केवल आध्यात्मिक विभूति थे। अपितु, वे एक कुशल राजनीतिज्ञ भी थे, यह उस समय स्पष्ट हो गया था जब रामराज्य परिषद राजस्थान विधान सभा में प्रमुख विरोधी दल के रूप में उभर कर सामने आई। उ० प्र०, म० प्र० तथा कुछ अन्य प्रान्तों में भी रामराज्य परिषद के सदस्य विधान सभाओं में पहुँचे थे। लोक सभा में भी उसमें कुछ सदस्य निर्वाचित हुये थे जिनमें पंडित नन्दलाल शास्त्री का नाम विशेष उल्लेखनीय था।

हिन्दू महासभा, रामराज्य परिषद तथा जनसंघ इन तीनों को हिन्दुत्वनिष्ठ दल माना जाता था। वैसे जनसंघ ने अपने को सैकुलर घोषित किया हुआ था।

१९५७ के आम चुनावों में जब ये दल बुरी तरह पराजित हुए तो हिन्दू महासभा की ओर से गोरक्षपीठाधीश्वर पूज्य महन्त दिग्विजयनाथ जी महाराज, श्री निर्मल चन्द्र चटर्जी तथा मैंने विचार किया कि यदि ये तीनों दल आपस में न टकराए होते तथा संयुक्त मोर्चा बनाकर चुनाव लड़ा होता तो इनके काफी सदस्य संसद तथा विधान सभाओं में पहुँच सकते थे। इस सम्बन्ध में हम लोगों ने प्रयास किये तथा राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के तत्कालीन सरसंघ चालक पूज्य श्री गुरु जी (गोलवलकर जी) से मेरा इस सम्बन्ध में पत्र-व्यवहार भी हुआ। जनसंघ के नेताओं से भी वार्ता हुई उधर रामराज्य परिषद के संस्थापक श्री करपात्री जी वृन्दावनवास कर रहे थे।

वृन्दावन में प्रवचन

धर्म सम्राट् स्वामी करपात्री जी महाराज को श्री वृन्दावनधाम से बहुत प्रेम था। वे हर वर्ष वृन्दावन पधारते तथा धर्म संघ विद्यालय में उनके प्रवचनों की धूम मचा करती थी। धर्मसंघ विद्यालय मेरे निवास स्थान (रमणरेती) के समक्ष ही है।

१९७१ में मैं वृन्दावन पहुँचा ही था कि पता लगा कि पूज्य स्वामी जी प्रवचन हेतु पधारे हुए हैं। मैं धर्मसंघ विद्यालय उनका प्रवचन सुनने गया तो देखा कि वृन्दावन की सभी उच्च कोटि की विभूतियां भारी संख्या में उनके प्रवचन सुन रही हैं। वृन्दावनधाम के सभी सम्प्रदायों के आचार्य मंत्र-मुग्ध होकर उनके प्रवचन सुनते थे। तो लगता था कि जैसे साक्षात शुकदेव जी धर्मसभा को सम्बोधित कर रहे हों।

प्रथम बार ही उनके अलौकिक प्रवचन का मेरे मन पर गहरा प्रभाव पड़ा। प्रवचन के उपरान्त मैं एकान्त में उनसे मिला। मुझे देखते ही वे बहुत प्रसन्न हुए तथा यह बात जानकर आल्हादित हो उठे कि मैं 'राजनीति के पचड़े' से निकल कर अपना शेष जीवन प्रभु भक्ति में बिताने के लिये इस दिव्य भूमि में आ गया हूँ। उन्होंने कहा—"सामान्यतः राजनीतिक सज्जन जीवन-पर्यन्त इसी

पचड़े में पड़े रहते हैं। आपने आदर्श उपस्थित किया है।''

बातचीत के दौरान हिन्दुत्व तथा सनातनधर्म पर चारों ओर से किये जा रहे प्रहारों की भी चर्चा हुई। स्वामी जी ने कहा कि जब तक धर्म की अवहेलना की जाती रहेगी, धर्म शास्त्रों की उपेक्षा होती रहेगी देश में अशांति बढ़ती रहेगी। गोहत्या के कलंक के जारी रहने से भी उनके हृदय में भारी टीस थी। गोहत्या के कलंक को बन्द कराने के लिये पूज्य स्वामी जी वस्तुत: सबसे आगे रहकर प्रयास शील रहे।

वे युग पुरुष थे

मैं हर वर्ष उनके प्रवचन सुना करता था। मैंने अनुभव किया कि पूज्य स्वामी जी एक युग पुरुष थे तथा उनके लेखन, प्रवचनों व प्रकाण्ड पांडित्य का लोहा बड़े-बड़े विद्वान, शिक्षा शास्त्री व राजनेता भी मानते थे। श्री राहुल सांकृत्यायन जैसे विद्वान ने भी यह स्वीकार किया था कि यह संन्यासी उद्भट विद्वान तथा जटिल विषयों का अध्येता है। उनके लिखे ग्रन्थों, भावना व भाव से आचार्य श्रेणी के सज्जन भी चकित होते थे। काशी की तरह वृन्दावनधाम के आचार्य भी स्वामी जी की विद्वत्ता व गम्भीर पांडित्य का लोहा मानते थे।

हिन्दू महासभा का महामन्त्री व संसद सदस्य के नाते मुझे अनेक धर्माचार्यों व साधु-सन्तों से मिलने का अवसर प्राप्त होता रहा। अनेक धर्माचार्यों को हम जब सत्तारूढ़ नेताओं के आगे पीछे घूमते, मालाएँ हाथों में लिये उनके स्वागत को उत्सुक हुआ देखा करते थे तो हमें पूज्य स्वामी करपात्री जी महाराज का तेजस्वी रूप सामने आ जाता था जो पहले अंग्रेजी शासन से टकराते रहे तथा बाद में धर्म व हिन्दुत्व के मान बिन्दुओं की रक्षा के लिये अपनी ही कांग्रेस सरकार से संघर्ष करने में कभी नहीं हिचकिचाए। वे सच्चे अर्थों में बहुत ही तेजस्वो संन्यासी थे। वे धर्म सम्राट् थे। उनके श्री चरणों में विनम्र श्रद्धांजलि।

●●

मुझे तो स्वामी करपात्री जी के अन्दर गुरु तेगबहादुर की आत्मा का दर्शन हुआ है जो धर्म पर विपत्ति देखकर व्याकुल हो उठी है और उसके लिये कठिन से कठिन यातनायें सहने के लिये तैयार हुई है।''

प्रमुख हिन्दू नेता 'भाई परमानन्द जी
लाहौर जेल में स्वामी जी से भेंट के उपरान्त।
अप्रैल, १९४७

× × ×

"बिना माता के पुत्र का होना यदि असम्भव है तो बिना भक्ति के ज्ञान होना कैसे सम्भव है ? भक्ति छोड़ कर ज्ञान का प्रयास वैसे ही व्यर्थ है जैसे कामधेनु छोड़ कर दूध के लिये आक को ढूंढना। यदि सच्चे दूध की अपेक्षा है तो कामधेनु का सेवन ही युक्त है। इसी प्रकार यदि सच्चे ज्ञान की अपेक्षा है तो भक्ति महारानी का सेवन युक्त ही है।

सर्वविध कल्याणों का प्रसव करने वाली किंवा सर्व प्रकार के श्रेयों की निर्झरिणी श्री भक्ति महारानी को छोड़ कर जो केवल शास्त्रीय बोध प्राप्त करने के लिये क्लेश उठाते हैं, उनको सिवा क्लेश के और कुछ नहीं बचता। जैसे धान की भूसी कूटने वाले को सिवा श्रम के कुछ हाथ नहीं लगता। अतः भक्ति सहित ही ज्ञान प्रयास आदि की सफलता हो सकती है।
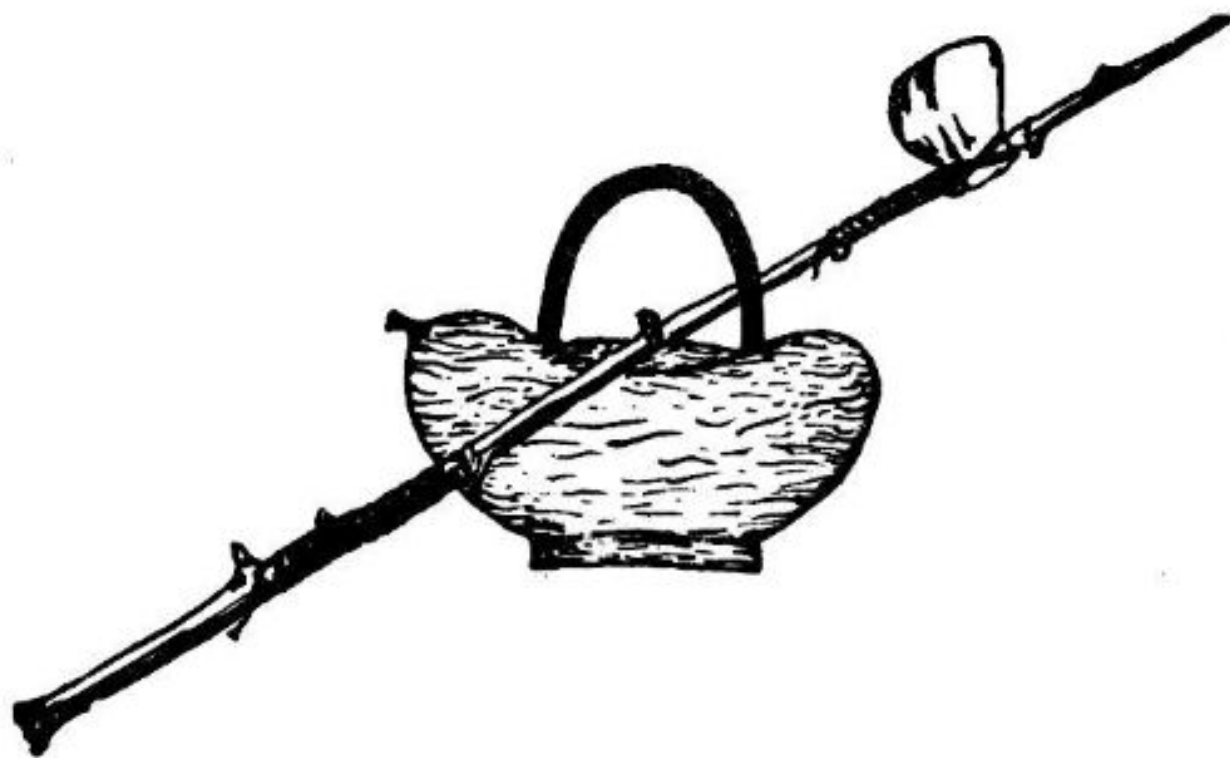
"हम तो दुकान समेट रहे हैं।"

धर्म सम्राट् के कुछ दिव्य संस्मरण

—पं० गोविन्द प्रसाद चतुर्वेदी शास्त्री,
धर्माधिकारी विदिशा। (म० प्र०)

बीसवीं शताब्दी में हमारे देश में धर्म-सम्राट् पूज्य श्री स्वामी करपात्री जी महाराज के रूप में एक ऐसी विभूति का प्रादुर्भाव हुआ जिसने धार्मिक ही नहीं आध्यात्मिक व राजनैतिक क्षेत्र में भी एक नवीन चेतना का संचार किया।

उस दिव्य अमलात्मा महाविभूति के सान्निध्य में व्यतीत समय की मधुर स्मृतियाँ रह-रह कर याद आती हैं जो उनके प्रति कृतज्ञता अभिव्यक्ति के लिये उनके ही चरणारविन्दों में श्रद्धा सुमन रूप समर्पित हैं।

हम तो दुकान समेट रहे हैं

लुधियाना में अखिल भारतवर्षीय धर्म संघ के महाधिवेशन के दिनों में एक प्रोफेसर साहब महाराज श्री से पूजन के बाद मिले और अपने कालेज में व एक दो अन्य कार्यक्रमों में उनसे प्रवचन हेतु समय देने की प्रार्थना की।

प्रोफेसर साहब के विस्तृत कार्यक्रमों को सुनकर महाराज श्री करपात्री जी ने कहा "भाई कोई एक कार्यक्रम में आ जावेंगे हम तो अब अपनी दुकान समेट रहे हैं भजन पूजन में अधिक समय देना चाहते हैं। लौकिक कार्यों में अधिक समय देने का अब समय नहीं रहा"।

शिष्यों से कह जावेंगे

सम्वत् २०२१ में प्रयाग कुम्भ में महाराज श्री ने धर्म संघ के मंच से वर्णाश्रमव्यवस्था पर बड़ा गम्भीर वक्तव्य दिया उसे सुनकर एक व्यक्ति ने एक स्लिप भेजकर महाराज से भविष्य में वर्णाश्रम पर न बोलने का अनुरोध किया स्लिप को पढ़कर स्वामी जी ने कहा "भाई हम तो जब तक इस लोक में हैं वर्णाश्रम का प्रचार करते रहेंगे और जाते समय इसका पालन व प्रचार के लिये अपने शिष्यों से कह जावेंगे।" सभा में तालियाँ बज उठीं और वह व्यक्ति चुपचाप धर्म संघ के पण्डाल से खिसक गया।

पहिले तैरना सीखो फिर पानी में उतरना

महाराज श्री के विदिशा दौरे में एक दिन गोरक्षा पर गम्भीर चर्चा चल रही थी। अनेक राजनैतिक संस्थाओं के लोग स्वामी जी से भेंट करने उनके स्थान श्री चिंतामणि गणेश मन्दिर में आये थे तब एक नेता जी जो उस समय आनरेरी मजिस्ट्रेट भी थे महाराज श्री से बोले "महाराज जी गोरक्षा की बात चल रही है सरकार से गोहत्या की माँग के पहिले सनातनियों को गोपालन की आदत
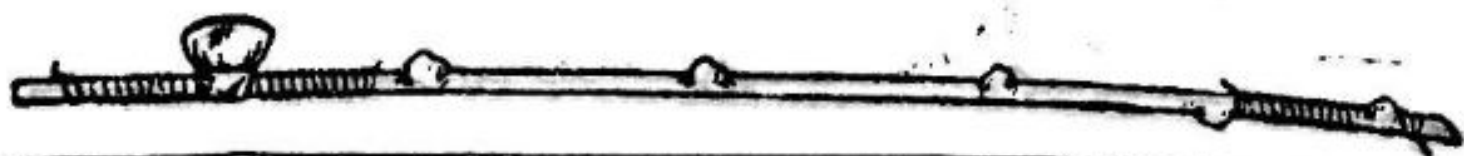
डालनी चाहिये।" करपात्री जी महाराज एकदम तपककर बोले, "यह तो ऐसा ही सुझाव है जैसे कोई कहे पहिले तैरना सीख लो फिर पानी में उतरना, अजी साहब जिस प्रकार पानी में उतरे बिना कोई तैरना नहीं सीख सकता उसी प्रकार गोहत्या बन्दी कानून के बिना आज गोपालन सम्भव नहीं है। आज शहरों में गाय रखना जुर्म है नगरनिगम वाले घरों से गाय निकालकर कांजी हाऊस में बन्द कर देते हैं। शहर से बाहर गाय रखने को बाध्य करते हैं नहीं ले जाने पर भारी जुर्माना करते हैं। ऐसी स्थिति में गोपालन की आदत कैसे डाली जाये। अतः सरकार को पहिले गोहत्या बन्दी कानून बनाकर गोसंवर्धन की सुविधा देनी चाहिवे तब गोपालन हो सकेगा।" महाराज श्री के इस तर्क पूर्ण उत्तर को सुनकर आनरेरी मजिस्ट्रेट साहब चुप हो गये।

वेदार्थ पारिजात लिख रहे हैं

ज्येष्ठ मास में विदिशा के पास मरखेड़ा में अ० भा० धर्मसंघ के विशेषाधिवेशन में महाराज श्री पधारे थे। एक दिन दोपहरी में एक पण्डित आकर स्वामी जी की कुटी का द्वार खट-खटाने लगे। पण्डित के साथ एक व्यक्ति और था द्वार खटखटाकर पण्डित जी ने अपने साथी से कहा—"दोपहरी है स्वामी जी विश्राम कर रहे होंगे"। उसी क्षण महाराज ने द्वार खोलते हुये कहा, "नहीं भाई वेदार्थ पारिजात लिख रहे हैं" पण्डित जी सहमे बोले "महाराज क्षमा करें हम संसारी जीव हैं आप महात्मा हैं इतनी तेज दोपहरी में भी ग्रंथ रचना कर रहे हैं आपको विश्राम कहाँ" ?

इनको पहिचानते हो

रामायण महाभारत काल निर्णय के लिये काशी के वृन्दावन बिहारी भवन में देश के इतिहासज्ञों का एक अधिवेशन बुलाया गया इसी अवसर पर अ० भा० धर्म संघ की कार्यकारिणी की भी बैठक थी। महाराज श्री की प्रतिभा के सामने आधुनिक इतिहासकार तो कोई आये नहीं धर्मसंघ की बैठक अवश्य हुई। बैठक की समाप्ति पर पर काशी के श्री जगन्नाथ पंचौली (जन्नू गुरु) नामक एक ब्राह्मण देवता महाराज श्री को प्रणाम कर समीप में आकर बैठ गये, महाराज श्री उनका मुझसे परिचय कराते हुये बोले—"इनको पहिचानते हो"। मैंने कहा, "नहीं तो" महाराज विनोदी स्वर में बोले, "यह एक सेर भाँग एक बार में खा जाते हैं"। महाराज का इतना था कि वे ब्राह्मण देवता बोले, "महाराज मुझे अब नशा ही नहीं आता मैंने तो अफीम को नागिन बनाकर लम्बी-लम्बी बत्ती बनाकर कई दिन खाई। अब ये वस्तुएं इतनी मंहगी हो गयी कि ले हीं नहीं सकते। महाराज बोले "छोड़ो इन सब व्यसनों को भगवान् का भजन ही सस्ता है उसी को करो और हमको भी पूजन करने दो।"

● ●

स्वामी करपात्री जी
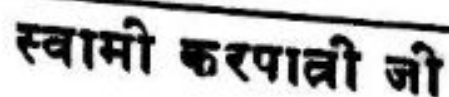
—परिपूर्णानन्द वर्मा
ख्यातिलब्ध पत्रकार, कानपुर

करपात्री जी से मेरी न तो घनिष्ठता थी और न मैं उनके निकटस्थ होने का दावा कर सकता हूँ। पर जीवन में तीन बार ही उनसे मिलने का जो सौभाग्य हुआ था उससे यह अनुभव अवश्य हुआ कि उनका जितना विरोध किया जाता था तथा जितना हठधर्मी समझा जाता था, वैसी बात थी नहीं। "रामराज्य" की जिस कल्पना का वे प्रतिपादन करते थे, उसका कुछ अंश भी भारत के किसी राजनैतिक दल ने यदि अपनाया होता तो देश का बड़ा कल्याण होता। "धर्म निरपेक्ष" राज्य की कल्पना को या विधान को सभी राजनैतिक दलों ने इतनी नासमझी तक अपना लिया है कि हिन्दू सनातन अपनी गीता, धर्मशास्त्र या कोई स्मृति भी स्कूल, कालेज में पढ़ नहीं सकता। वर्षों पहले उत्तर प्रदेश के एक शिक्षा निदेशक ने एक इण्टर कालेज को सरकारी सहायता इसलिए बन्द कर दी कि उसने लड़कों के एक उत्सव में गीता के प्रथम अध्याय का संवाद प्रस्तुत किया था। स्कूल के भाग्य से डाक्टर सम्पूर्णानन्द जी शिक्षा मन्त्री थे। उन्होंने निदेशक को लथाड़ा था तथा ग्रांट चालू करा दी थी। डा० सम्पूर्णानन्द जी ने हर माध्यमिक शिक्षण संस्था में "रामलीला" को नाटक के रूप में प्रस्तुत कराया था पर उनके मुख्य मन्त्री पद से हटते ही यह कार्य बन्द करा दिया गया। करपात्री जी महाराज ऐसी "धर्म निरपेक्षता" के कट्टर विरोधी थे और हम उनसे सहमत थे।

राजनैतिक मामले या छुआछूत के सम्बन्ध में हमारा उनका मतभेद था पर यह कहना नितांत अनुचित है कि वे हरिजनों से घृणा करते थे। उनसे बातचीत में मैंने इतना जरूर समझा था कि वे "जन्मना वर्ण" से अधिक महत्व देते थे "कर्मणावर्ण" पर। चातुर्वर्ण्य व्यवस्था में उन्हें विश्वास था पर वे उसके वैदिक काल के रूप के अधिक हिमायती थे, न कि पौराणिक युग की बिगड़ी स्थिति के। मन्दिर-प्रवेश के विषय पर मेरी उनकी कभी बात नहीं हुई। पर जिस हिन्दुत्व की रक्षा के लिये वह सतत प्रयत्नशील थे आज वही कार्य विश्व हिन्दू संघ तथा धर्म संघ भी कर रहा है। उसके प्रेरणा श्रोत करपात्री जी अवश्य थे—यह निश्चित है।

करपात्री जी तपस्वी थे, ऐसा उनसे एक बार ही मिलने से स्पष्ट हो जाता था। उनकी वाणी में ओज ही नहीं था, सात्विक भावना से निकला प्रवाह था। स्वभाव के सरल, मृदुल तथा सबसे बड़ा गुण था दूसरों की बात को सुनना। मेरी उनकी पहली भेंट बड़े कुअवसर पर हुई। पूज्य बापू—महात्मा गाँधी की हत्या के बाद कुछ लोग भ्रमवश गिरफ्तार कर लिये गये थे। उनमें श्री करपात्री जी भी थे। मैं वाराणसी के सेंट्रल जेल का मुआयना कर रहा था कि एक कोठरी में करपात्री जी बड़ी श्रद्धा से अपने साथ लाये ठाकुर जी का पूजन कर रहे थे। उन्हें सीकचों के भीतर देखकर मुझे दुःख हुआ था—मैंने उन्हें और उनके ठाकुर जी को प्रणाम किया। करपात्री जी ने केवल मुस्करा कर मुझे
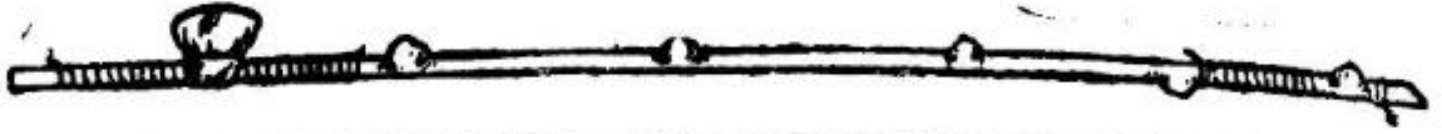
आशीर्वाद दिया। जेल वालों ने मुझे विश्वास दिलाया कि उनके लिये पूरी सुविधा दी जाती है। केवल दूध ग्रहण करते हैं। गंगा जल का भी प्रबन्ध है।

इसके बाद वर्षों बीत गये। वे कानपुर आये थे। सत्ती-चौरा घाट पर बगलामुखी पीठ में ठहरे थे। इस पवित्र स्थल के जीर्णोद्धार में तथा ब्रिटिश काल में नष्ट मन्दिर के पुनः स्थापन में मैंने अपने भरसक बड़ा परिश्रम किया था। करपात्री जी के आगमन की मुझे सूचना मिली। तीसरे प्रहर मैं उनसे मिलने गया। डेढ़ घन्टे प्रतीक्षा की – वे आसन कर रहे थे। जब भेंट हुई उस समय लगभग ४५ मिनट तक क्या बातें हुईं यह तो नहीं लिखूंगा पर मैंने पाया कि उस महापुरुष का रोम-रोम हिन्दू-सनातन धर्म की सेवा के लिये पुकार रहा है। ऐसे दीवानों की टोली चाहता है जो धर्म का डंका फह-राये। उनका न तो किसी धर्म से–दूसरे मजहब से कोई विरोध था, न बैर भाव। राष्ट्रीय एकीकरण तथा सभी धर्मों के प्रति आदर वे चाहते थे पर स्व-धर्म की निर्मल गंगा को देश में पुनः बहा देना चाहते थे। वह शासन के अहिंसात्मक ढंग से उसी अंश तक विरोधी थे जिस अंश तक धार्मिक विषयों में बाधक हो। उन्हें और कोई लोभ नहीं था। उनसे बात करने से मुझे यह स्पष्ट लगा कि वे "अन्तः शाक्ता, बहिः शैवा" हैं। इस पर और अधिक नहीं लिख सकूंगा। उनसे इस वार्ता में मैं इस तरह आसक्त हो गया कि मैंने अनुभव किया कि उनके प्रकांड पांडित्य के सम्मुख मैं एक शिशुमात्र हूँ।

करपात्री जी से मेरी अन्तिम और तीसरी भेंट उनके गंगा तट के निवास स्थान पर हुई थी। मुझे बुलाया गया था। शाम का समय था। भक्त मंडली जमा थी। मैं इतनी अधिक बातें करने लगा कि कुछ भक्तों ने टोका :—

"आप ही कहियेगा कि महाराज से भी सुनियेगा।" करपात्री जी ने टोकने वालों को मना किया। फिर, हम दोनों ने अनेक विषयों पर चर्चा की और अन्त में करपात्री जी ने कहा कि "हम फिर मिलेंगे और 'धर्म तथा राजनीति' पर बात करेंगे।" पर यह अवसर फिर नहीं आया। भारत ने एक महान तपस्वी तथा विचारक खो दिया। ●●

वे तेजस्वी व संघर्षशील संन्यासी थे

—सुप्रसिद्ध पत्रकार, श्री शिवकुमार गोयल
पिलखुवा।

पूज्य स्वामी श्री करपात्री जी महाराज की मेरे परिवार पर अनन्य कृपा-दृष्टि थी। मेरे पिता श्री भक्त रामशरण दास जी उनके धर्म संघ के अनन्य समर्थक थे तथा पूज्य स्वामी जी पिताजी से अपार स्नेह करते थे। जब कभी स्वामी जी ने गोरक्षा आन्दोलन, हिन्दू कोड बिल विरोधी आन्दोलन तथा धार्मिक मर्यादाओं की रक्षा सम्बन्धी अभियान चलाये पिताजी ने न केवल लेखनी के माध्यम से उनमें सक्रिय योगदान किया अपितु स्वयं भी सत्याग्रह कर जेल जाने को सदैव तत्पर रहे।

सनातन धर्म पर कहीं से भी आक्षेप होता कि पिता जी डटकर उसका उत्तर देने को सदैव तत्पर रहते थे। यहाँ तक कि गांधी जी ने जब राम, कृष्ण व रामायण, महाभारत के बारे में कुछ शास्त्र विरोधी बातें लिख दीं तो पिता जी ने उनके विरुद्ध लेख लिखकर उन्हें चुनौती दे डाली। पूज्य स्वामी करपात्री जी महाराज ने उस समय पिताजी को पत्र लिखकर उनके लेख का न केवल समर्थन किया अपितु स्वयं भी गांधी जी के इन विचारों की अपने भाषणों में धज्जियां उड़ा डाली थीं।

एक बार सर्वोदयी नेता श्री जयप्रकाश नारायण पिलखुवा में सर्वोदय इण्टर कालेज का शिलान्यास करने पधारे। उन्होंने धर्म शास्त्रों का मखौल उड़ाने वाली कुछ बातें कह डालीं। पिताजी उनसे विचार विमर्श कर उनकी बातों का उत्तर देने लगे। पूरा विवरण समाचार पत्रों में प्रकाशित हुआ। एक दिन स्वामी जी का पत्र मिला—"आपने जयप्रकाश जी को बहुत तर्कपूर्ण उत्तर दिये हैं। इसी प्रकार तेजस्विता के साथ लेखनी चलती रहनी चाहिये।"

इस घटना के बाद पूज्य स्वामी जी दिल्ली आये तो उन्होंने पिताजी को दिल्ली बुलवाया तथा जयप्रकाश जी के साथ हुए वाद-विवाद का पूरा वर्णन रुचि के साथ सुनते रहे। आशीर्वाद देते हुए बोले—"आप तो शास्त्रार्थ महारथियों वाला कार्य कर रहे हैं।" पिताजी उनके श्री चरणों में झुक गये थे—ये शब्द सुनकर।

सनातन धर्म पर कोई भी नेता प्रहार करता तो पिताजी उनके भाषणों व लेखों की कतरने अपने पास सुरक्षित रखते। सनातन धर्म जगत की तमाम गतिविधियों से वे परिचित रहते। स्वामी जी जब कभी दिल्ली आते पिताजी को सूचना अवश्य भिजवाते। पिताजी व मैं धर्म संघ विद्यालय पहुंचते तो महाराज श्री सभी उपस्थित सज्जनों को टरका देते—"रामशरण आ गये हैं—हमें इनसे एकांत में बातें करनी हैं।" अकेले होते ही वे बोल उठते—"खोलो अपना थैला और बताओ देश में क्या-क्या हो रहा है ?" मैं उनके अपार स्नेह को देखकर दंग रह जाता। वे घन्टों-घन्टों तक पिताजी से देश की स्थिति पर चर्चा करते रहते। उन्हें लेख लिखने के सुझाव देते। मार्कण्डेय ब्रह्मचारी जी से कहते—"भई, उस लेख का उत्तर रामशरण देंगे। हमने इन्हें बता दिया है।"

वे अकस्मात पिलखुवा पधारे

सन १९६२ के दिनों की बात है। लोक सभा के चुनाव होने वाले थे।

एक दिन मैं पिताजी के पास बैठा हुआ था कि सामने से एक सज्जन तेजो से आये तथा बोले—"महात्माओं से भरी गाड़ी आप के यहाँ आ रही है।"

पिताजी के साथ-साथ हम सब उठे तथा मौहल्ले की गली तक पहुंचे। गाड़ी तब तक चौक तक पहुंच चुकी थी। हमने देखा कि गाड़ी से शास्त्रार्थ महारथी पं० माधवाचार्य शास्त्री जी महाराज उतर रहे हैं। उन्होंने बताया कि स्वामी करपात्री जी महाराज आये हैं तो हम सब हक्के बक्के रह गये।

'धर्म की जय हो' के उद्घोषों के बीच हमने स्वामी जी महाराज का स्वागत किया। उन्हें पिताजी के संग्रहालय में ले गये। देखते ही देखते सैकड़ों व्यक्ति इकट्ठे हो गये।

स्वामी जी ने पिता जी से कहा—"हम लोग विशेष उद्देश्य से आये हैं।"

पिता जी ने हाथ जोड़ कर कहा—"महाराज श्री आज्ञा कीजिये।"

"हम आपको मेरठ क्षेत्र से रामराज्य परिषद का लोकसभा प्रत्याशी बनाना चाहते हैं—आप का नामांकन पत्र दाखिल कराने आये हैं।"—स्वामी जी ने कहा।

"महाराज श्री, यह तो जाप जानते ही हैं कि राजनीति के दाव-पेचों से मैं सर्वथा अनभिज्ञ हूं। मुझे तो आप धर्मसंघ का एक सैनिक ही बना रहने दें। लोकसभा में पं० माधवाचार्य जी महाराज जैसी विभूति जाने चाहिये। आप मेरे घर दर्शन देने पधारे—क्या यह संसद की सीट से कम महत्व की बात है मेरे लिये।" पिताजी ने हाथ जोड़ कर कहा।

स्वामी जी जोर से हंस कर बोले—"माधवाचार्य जी, हम पहले ही कह रहे थे, रामशरण को जाल में फंसाना आसान नहीं है। इन्हें तो धर्मरक्षा के मोर्चे पर ही लगे रहने दो।"

धार्मिक पत्रकारिता के उन्नायक

पूज्य स्वामी जी ने सनातन धर्म के प्रचार के उद्देश्य से अनेक पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन शुरु कराया। पूज्य स्वामी कृष्णबोधाश्रम जी महाराज के परामर्श से दैनिक 'सन्मार्ग' का दिल्ली, काशी तथा कलकत्ता से प्रकाशन किया गया। धर्मसंघ के मुख पत्र के रूप में मासिक 'सन्मार्ग' एवं पाक्षिक 'सिद्धांत' प्रकाशित हुआकाशी के महान पत्रकार पं० गंगाशंकर मिश्र को 'सन्मार्ग' के सम्पादन का भार सौंपा गया। कुछ ही दिनों में 'सन्मार्ग' प्रमुख हिन्दी दैनिकों में माना जाने लगा।

'सन्मार्ग' के दिल्ली संस्करण का सम्पादन पं० चन्द्रशेखर शास्त्री (वर्तमान में पुरी पीठाधीश्वर श्री शंकराचार्य स्वामी निरंजन देवतीर्थ जी महाराज) करते थे। उन दिनों 'सन्मार्ग' में प्रकाशित पिता जी (भक्त रामशरण दास) के किसी लेख को दिल्ली प्रशासन ने आपत्तिजनक करार दे दिया था। 'सन्मार्ग' में जब कुछ दिनों तक पिताजी के लेख नहीं छपे तो पूज्य स्वामी जी ने पूछा—"रामशरणदास

के लेख क्यों नहीं आ रहे ?" "महाराज, उनके गर्म आक्रामक लेखों से दिल्ली प्रशासन नाराज है। इस-लिये नहीं छाप रहे "—'सन्मार्ग' के उप सम्पादक श्री जयवंशी झा ने विनम्रता से उत्तर दिया।

"आप लोग उनकी भाषा को थोड़ा नम्र कर लिया करें। उनके सामयिक लेख तो जाने ही चाहिएं"—स्वामी जी ने रास्ता सुझाया और अगले ही दिन से पिताजी के लेख पुनः छपने लगे।

इस प्रकार पूज्य स्वामी जी पत्रकारिता के प्रति स्वयं भी रुचि लेते थे। 'सन्मार्ग' व 'सिद्धांत' में प्रकाशित लेखों के बारे में वे प्रायः अपनी सम्मति सम्पादकों को देते रहा करते थे। धार्मिक क्षेत्र की पत्रकारिता के उन्नयन में महाराज श्री का सक्रिय अनुपम योगदान रहा।

डा० लोहिया प्रभावित हुए

१९६६ में गोहत्या बन्दी आन्दोलन के सिलसिले में महाराज श्री दिल्ली की तिहाड़ जेल में बन्द थे। मेरे पिता श्री भक्त रामशरणदास जी आर्य संन्यासी महात्मा अमर स्वामी जी के साथ सत्या-ग्रह करते हुये गिरफ्तार कर तिहाड़ जेल भेज दिये गये। शास्त्रार्थ महारथी पं० माधवाचार्य शास्त्री तथा उनके तीनों पुत्र भी जेल में बन्द थे। तिहाड़ जेल में स्वामी जी के कारण कुम्भ जैसा धार्मिक दृश्य उपस्थित हो गया था।

मैं गोरक्षा आन्दोलन के प्रचार का कार्य देखता था अतः प्रतिदिन तिहाड़ जेल जाना होता था। मैंने एक दिन देखा कि समाजवादी नेता डा० राम मनोहर लोहिया, जो किसी आन्दोलन के कारण जेल में बन्द थे, पूज्य स्वामी जी के दर्शन करने उनकी बैरक में आये। लोहिया जो समाजवादी थे किंतु स्वामी जी के व्यक्तित्व व पांडित्य से प्रभावित थे। उन्होंने स्वामी जी से धर्म और गोरक्षा के बारे में अनेक प्रश्न किये तथा उनके तर्कपूर्ण उत्तर सुनकर चकित रह गये। अन्त में बोले—"महाराज, मैं जेल से रिहा होते ही गोहत्या बन्दी के लिये पूरा प्रयास करूंगा।"

हिन्दू महासभा के अध्यक्ष प्रो० रामसिंह जी भी तिहाड़ जेल में थे। डा० लोहिया स्वामी जी की बैरक से बाहर निकले तो प्रो० रामसिंह जी ने हंसकर कहा–"आज तो आप एक महान विभूति के दर्शन करके आ रहे हैं।" लोहिया जी ने उत्तर दिया —"भाई, मैं स्वामी करपात्री जी के संघर्षमय जीवन के प्रति बहुत आदर रखता हूं। बड़े-बड़े धर्माचार्य नेहरु के आगे दुम हिलाते घूमते थे, साधु समाज सरकारी संस्था बना चापलूसी करता रहा है किंतु मैं प्रारम्भ से ही इस निर्भीक संन्यासी को सरकार के सामने सीना ताने संघर्ष करते देखता रहा हूं।"

वे कुछ देर मौन हुये व बोले – "जब से मैंने स्वामी जी का "रामराज्य और मार्क्सवाद" ग्रंथ देखा है तब से मैं यह भी मानने लगा हूं कि यह सन्त घोर अध्ययनशील तथा प्रकांड पंडित भी है। उनसे वैचारिक मतभेद अलग बात है किंतु उनकी विद्वत्ता के समक्ष तो नतमस्तक होना ही पड़ता है।"

इसके बाद डा० लोहिया ने गोरक्षा आन्दोलन के समर्थन में न केवल वक्तव्य दिया अपितु ब्रह्मचारी प्रभुदत्त जी का अनशन तुड़वाने वे स्वयं वृन्दाबन तक गये।

स्वामी जी देश के पहले संन्यासी थे जिन्होंने भारत विभाजन का न केवल वक्तव्यों से विरोध किया अपितु 'भारत अखण्ड हो' का उद्‌घोष करते हुए सत्याग्रह कर अपने को गिरफ्तार भी कराया। उस समय हिन्दू महासभा के महान क्रांतिकारी नेता स्वातन्त्र्यवीर सावरकर ने कहा था— "आज देश को, हिन्दू समाज को स्वामी करपात्री जी जैसे निर्भीक धर्माचार्य की आवश्यकता है।"

स्वामी जी ने अंग्रेजों के शासन काल में ही गोहत्या के कलंक को दूर करने के लिये अभियान चलाकर ब्रिटिश सत्ता को खुली चुनौती देते हुए कहा था —"धर्म प्राण हिन्दू समाज गोहत्या जैसे कलंक को सहन कदापि नहीं करेगा। वह बड़े से बड़ा बलिदान देने के लिये तत्पर है।"

सरकार की ओर से जब कभी हिन्दुत्व पर प्रहार किया गया स्वामी जी ने निर्भीकता के साथ उस चुनौती को स्वीकर कर मुंह तोड़ उत्तर दिया। यही कारण था कि बड़े-बड़े कांग्रेसी नेता भी स्वामी जी की तेजस्विता की धाक मानते थे।

महिलाओं का उद्धार

भारत विभाजन के दौरान पूर्वी बंगाल के नोआखाली व अन्य स्थानों पर मुस्लिम गुण्डों ने हजारों हिन्दू ललनाओं का अपहरण कर उनके सतीत्व से खिलवाड़ की तो पूरे देश में तहलका मच गया था। बाद में कुछ गर्भवती हिन्दू युवतियों को उनके चंगुल से मुक्त कराकर भारत लाया गया तो यह समस्या सामने आई कि महिलाओं का क्या किया जाये ?

पूज्य स्वामी करपात्री जी उन दिनों सनातनधर्मी जगत के सर्वमान्य नेता माने जाते थे। सभी की दृष्टि महाराज श्री की ओर थी। उन्होंने धर्म संघ के मंच से स्पष्ट घोषणा की "धर्मशास्त्रों के अनुसार अपहृत की गई हिन्दू युवतियों का कोई दोष नहीं है। यदि वे जबरन बलात्कार की शिकार बनाई गई तो उनका क्या दोष ? उन्हें हिन्दू समाज में ससम्मान वापस ले लिया जाना चाहिये गंगाजल का सेवन कराकर उन्हें शुद्ध माना जाना चाहिए।"

स्वामी जी के इस उद्‌घोष के बाद हजारों हिन्दू युवतियों को समाज में पूर्ववत स्थान मिल गया था।

इसी प्रकार जब ज्योतिर्मठ के शंकराचार्य स्वामी स्वरूपानन्द सरस्वती जी महाराज ने सीमावर्ती क्षेत्रों के लोभ व दबाव के बल पर ईसाई बने बनवासियों को पुनः सनातन धर्म में दीक्षित करने का अभियान चलाया तो स्वामी जी ने कहा था—"विदेशी मिश्नरियों ने हमारे धन पर डाका डाला और मौका मिलने पर हमने उसे पुनः प्राप्त कर लिया। इससे अच्छी बात और क्या होगी ?"

वाराणसी में मैं एक बार आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के पास बैठा हुआ था। जर्मनी के कोई संस्कृत विद्वान उनसे इन्टरव्यू लेने आये हुए थे। उन्होंने चलती बार पूछा—"काशी में और किस

से मिलना चाहिये ?" आचार्य ने कहा—"आप स्वामी करपात्री जी महाराज से भेंट अवश्य करें। भारत की प्राचीन संस्कृति के वे मूर्त रूप हैं। संस्कृति व संस्कृत के तो वे एकमात्र प्रतिनिधि कहे जा सकते हैं।" आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी स्वामी जी के प्रति कितनी अगाध श्रद्धा रखते हैं। यह मैंने पहली बार अनुभव किया।

पूज्य महाराज श्री की पिताजी पर कितनी कृपा दृष्टि व अपार स्नेह था यह पिताजी के ब्रह्मलीन होने के बाद उस समय पता लगा जब स्वामी जी निधन का समाचार मिलते ही भावविह्वल हो उठे थे। शास्त्रार्थ पंचानन पं० प्रेमाचार्य शास्त्री तथा श्री देवदत्त शास्त्री वाराणसी में उनके दर्शन करने गये तो वे बोले—"रामशरण के अभाव की पूर्ति नहीं हो सकती। सनातन धर्मी जगत में ऐसा खरा व्यक्तित्व व शास्त्रीय मर्यादाओं का संरक्षक दूसरा नहीं है।"

मुझे भिजवाये संदेश में भी उन्होंने कहा था—"उनके चित्र संग्रहालय को बनाये रखना, सनातन धर्म के प्रचार में यथासम्भव योगदान करते रहना। यह तुम्हारा सौभाग्य है कि तुम ऐसी दुर्लभ विभूति के पुत्र हो।"

पूज्य स्वामी जी के इन शब्दों को पढ़कर मैं धन्य हो उठा था कि हमारा कितना सौभाग्य है कि जो ऐसी आध्यात्मिक विभूति की हमारे परिवार पर इतनी कृपा व स्नेह रहा। ●●

अपने वर्णाश्रम के अधिकारानुसार श्रौत-स्मार्त एवं तद्-अविरुद्ध मार्ग पर चलने वाले ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, अन्त्यज, ब्रह्मचारी, गृहस्थ, वनस्थ, संन्यासी किंबहुना संसार के सभी स्त्री-पुरुष—ये सभी 'साधु' हैं। इन शास्त्रानुमोदित सन्मार्गस्थ साधुओं के त्राणार्थ ही भगवान का अवतार है। दुष्कृतियों का विनाश और धर्म-संस्थापन भी इनके परित्राण में ही उपयुक्त हो जाता है।

—करपात्र स्वामी

अनन्त श्री स्वामी करपात्री जी : एक संस्मरण

—श्री राधेश्याम खेमका
सम्पादक 'कल्याण', कर्णघण्टा, वाराणसी।

अपने शास्त्र कहते हैं कि किसी के जीवन में कोई सन्त या महापुरुष एक क्षण के लिये भी आ जाए तो यह भगवान की विशेष कृपा का फल है। सन्त का सान्निध्य जीवन को ऊपर उठाता है अर्थात उसकी आध्यात्मिक उन्नति होती है। इसके साथ ही यदि मानव जीवन का वास्तविक लक्ष्य मन में निर्धारित हो जाये तो भगवत्प्राप्ति भी हो सकती है।

२०वीं शताब्दी में अनन्तश्री स्वामी करपात्री जी महाराज एक महान संत, आचार्य, भगवद्भक्त और युगपुरुष के रूप में अवतरित हुए। उनकी सन्निकटता जिन थोड़ों लोगों को प्राप्त हुई उनमें भी अधिकतर लोग उनके बाह्य स्वरूप से ही परिचित हो सके, उनकी जन्मजात साधुता के आंतरिक परिवेश में सबका प्रवेश होना कठिन भी था। फिर भी क्षणमात्र के लिये भी उनका सान्निध्य जिसे प्राप्त हुआ वह कल्याण का भागी बना। भगवत्कृपा से मुझे भी अपने जीवन के कुछ क्षणों में उनकी स्नेहयुक्त सन्निधि प्राप्त हुई जिसमें उनकी कृपा, प्रेम, सत्संग और साहचर्य प्राप्त करने का अवसर प्राप्त हुआ। उनकी सन्निकटता में जो कुछ अनुभूति मुझे मिली उसका यत्किंचित अंश यहाँ संस्मरण के रूप में प्रस्तुत किया जा रहा है जिससे उनके साधुतापूर्ण मनोभावों की झलक दैनिक-दिनचर्या और जीवन-यापन की व्यावहारिकता का दिग्दर्शन पाठकों को हो सकेगा। साथ ही यह भगवद्भक्त साधकों के लिये प्रेरणा का स्रोत भी बनेगा।

कर्म, ज्ञान और भक्ति का त्रिवेणी सङ्गम

महाराज श्री का जीवन कर्म, ज्ञान और भक्ति इन तीनों की त्रिवेणी का एक सङ्गम था। यद्यपि वे ज्ञानयोगी थे परन्तु उनके कार्यक्रमों को देखने से ऐसा लगता था कि वे किसी कर्मयोगी से कम नहीं हैं। इसी प्रकार से भक्ति भी उनकी इतनी प्रगाढ़ थी जिसकी तुलना किसी सामान्य भक्त से नहीं की जा सकती।

त्याग-वैराग्य की प्रतिमूर्ति

वैसे तो महाराज श्री जन्मजात, स्वभाव से ही साधु थे पर एक जीवन में उन्होंने गृहस्थी से लेकर विरक्ति तक जितना कार्य सम्पन्न किया उतना कार्य अन्य कोई शायद ही कर सके। जीवन के पूर्वार्ध में उनके तीव्र त्याग और तपस्या की प्रशस्ति तो सर्वविदित है। जिन लोगों ने उनके त्याग और वैराग्य का दर्शन किया और हम जब उनसे सुनते हैं तो आश्चर्यचकित हो जाते हैं। पर जीवन के उत्तरार्ध में लोक-हितार्थ और धर्म की रक्षा के लिये उनके द्वारा जो कार्य सम्पन्न हुए वे कम महत्व के नहीं हैं।

धर्मरक्षार्थ विभिन्न कार्यक्रम

सर्वप्रथम लोक-जीवन में महाराज श्री का पदार्पण दिल्ली में हुए विशाल यज्ञ से ही प्रारम्भ हुआ। तदनन्तर कई यज्ञ-यागादि कानपुर, वाराणसी, पटना तथा अन्य स्थानों में महाराज द्वारा बृहद रूप में सम्पन्न हुए। अखिल भारतीय धर्म संघ, अखिल भारतीय रामराज्य परिषद, अखिल भारतीय गोरक्षार्थ अहिंसात्मक धर्मयुद्ध समिति, धर्मवीर दल, धर्मसंघ शिक्षा मण्डल आदि विभिन्न संस्थाओं की स्थापना महाराज ने की। इसके साथ ही लोक-जीवन को धर्म की ओर प्रवृत्त करने के लिए 'सन्मार्ग' जैसे विभिन्न समाचार-पत्र, साप्ताहिक, मासिक 'सिद्धांत' जैसे आध्यात्मिक पत्रों का संचालन किया गया। स्मार्त यज्ञों के साथ सर्ववेद शाखा सम्मेलन, अखिल भारतीय धर्मसंघ महाअधिवेशन तथा गो-रक्षा आदि विभिन्न सांस्कृतिक सम्मेलनों का आयोजन होता जिनमें जगद्गुरु शंकराचार्य, रामानुजा-चार्य, निम्बार्काचार्य तथा अन्य सभी धर्माचार्य और विद्वद्गण प्रायः सम्मिलित होते, विचार-विनिमय होता तथा धर्म से सम्बन्धित विभिन्न समस्याओं पर प्रश्नोत्तर, शंका-समाधान आदि होते। इन सब कार्यों को सम्पन्न करते हुए भी महाराज श्री का व्यक्तिगत जीवन संसार के प्रपंचों से रहित था। लोक हित में धर्म की रक्षा के लिए सर्वसाधारण को सत्कार्य में प्रवृत्त करने की दृष्टि से ही वे इन सब धर्म-कार्यों में प्रवृत्त थे।

दैनिक दिनचर्या

उनकी दैनिक दिनचर्या भी विलक्षण थी जिसे उनके भक्तगण भी नहीं जान पाते। रात्रि में १ बजे प्रायः वे नित्य उठ जाते और तत्काल स्नान कर अपने जप-ध्यान-समाधि में बैठ जाते। प्रातः ३ बजे शौचादि कृत्यों से निवृत्त होकर पुनः स्नान करते तथा ३॥ से ५ बजे तक प्रातः एकाकी भ्रमण (४ ५ मील पैदल घूमने) का कार्यक्रम चलता। भ्रमण के समय स्तोत्र-पाठ तथा जप चलता रहता। प्रातः ५ बजे से ८ बजे तक अर्चन-पूजन। महाराज की अर्चा-पूजा प्रतिदिन ३ बार होती थी। प्रातः-कालीन पूजा प्रायः एकाकी, एकांत में होती थी। मध्याह्नकालीन पूजा दिन में १२ बजे लगभग होती थी। सायंकालीन पूजा रात्रि में प्रायः ७॥ से ८॥ बजे तक होती। दोपहर और रात्रि का पूजन सर्वसा-धारण भक्तजनों के मध्य में होता। प्रातः ८ से १२ तथा सायं ६ से ७॥ के समय में सर्वसाधारण से मिलने-जुलने तथा पठन-पाठन, स्वाध्याय और लेखन आदि का कार्य होता। महाराज श्री के पूजन में श्रीयन्त्र, शालिग्राम-शिला, एकादश नर्मदेश्वर तथा बाणलिंग, पारदलिंगादि कई शिवलिंग रहते। इसके अतिरिक्त सायंकालीन पूजा में एकादश पार्थिवेश्वर का प्रतिदिन निर्माण कर पूजन किया जाता तथा षडङ्ग रुद्राभिषेक भी सायंकालीन पूजा का ही अङ्ग था। महाराज का नियम था कि वे पूजनोपरांत शंखध्वनि करते थे। उनकी शंखध्वनि बड़ी तीव्र होती थी। इसे सुनकर आस-पास के लोग प्रसाद लेने पहुंच जाते। महाराज स्वयं अपने हाथ से प्रसाद-वितरण करते। उनके प्रसाद की यह विशे-षता थी कि कितने भी लोग प्रसाद ग्रहण करें, वह प्रायः समाप्त नहीं होता था। पात्र में कुछ-न-कुछ प्रसाद बचा रहता था जिससे बाद में आने वाले लोगों को भी प्रसाद के लिये निराश न होना पड़े। दिन

में एक बजे से पांच बजे तक महाराज की पुन एकांत-साधना चलती जिसमें प्रायः योगासन के साथ लगभग ३ घन्टे लगातार शीर्षासन का क्रम भी चलता। शीर्षासन में ही वे श्री दुर्गासप्तशती पाठ तथा अपनी अधिकांश पूजा सम्पन्न करते। एक बार मुझे, जिज्ञासा करने पर, महाराज ने अपने सम्पूर्ण योगासन देखने की अनुमति प्रदान कर दी तथा इसी क्रम में प्रसङ्गवश उन्होंने यह भी बताया कि योगासन करते समय भगवदाराधन, पाठ और जप अवश्य करना चाहिये, तभी इसे करने की सार्थकता है। उदाहरणस्वरूप उन्होंने कहा कि समुद्र में सीप खोजने के लिये मछुए भी प्राणायाम करते हैं तथा दूसरी ओर देवाराधन आदि में भी प्राणायाम किये जाते हैं। इन दोनों प्रकार के प्राणायामों में कोई अन्तर है या नहीं ? अतः मात्र नश्वर शरीर की रक्षा के लिये ही योगासन करना कोई बुद्धिमत्ता नहीं है। शारीरिक स्वस्थता तो योगासन करने पर स्वतः प्राप्त होगी ही योगासन का उद्देश्य तो देवाराधन ही होना चाहिये जिससे आध्यात्मिक लाभ मिल सके और समय का पूर्ण सदुपयोग हो सके।

भिक्षा में संयम

चौबीस घन्टे में एक बार सायंकाल लगभग ५ बजे सूर्यास्त के पूर्व महाराज की भिक्षा होती थी जिसमें नमक और चीनी इन दोनों का प्रयोग नहीं होता। गोदुग्ध भी उपलब्ध होने पर भिक्षा के साथ एक बार ही लेते। यह बात प्रसिद्ध थी कि महाराज को भिक्षा करने में समय नहीं लगता ३ मिनट या ५ मिनट में ही उनकी भिक्षा हो जाती जो कुछ समय लगता भगवान का भोग लगाने में ही लगता। प्रातः-रात्रि तथा अन्य समय में एक बार की भिक्षा के अतिरिक्त वे फल इत्यादि भी ग्रहण नहीं करते थे। आवश्यकता पड़ने पर यदा कदा औषधि या उससे सम्बन्धित अनुपान आदि ही स्वीकार करते।

चातुर्मास्य काल

चातुर्मास्य के समय महाराज की दिनचर्या का पूर्णावलोकन होता था, कारण इस समय वे लगातार दो मास काशी में ही निवास करते। और तो दिनचर्या प्रायः उनकी वही रहती, पर इस समय पठन-पाठन-स्वाध्याय तथा सत्सङ्ग-कथा का कार्य अबाध गति से चलता। देश के विभिन्न क्षेत्रों से सन्त महात्मा और मूर्धन्य विद्वान तथा साधक वहाँ पधारते। प्रातः ८ बजे से १२ बजे तक ब्रह्मसूत्र, उपनिषद, गीता तथा अन्य गूढ़-गम्भीर ग्रंथों का पठन-पाठन और स्वाध्याय चलता।

न्याय, सांख्य, मीमांसा, तन्त्र और वेद-वेदांगों से सम्बन्धित भारतीय संस्कृति का कोई भी प्राचीनतम ग्रंथ जो दूसरी जगह लगने में कठिनाई होती, वह महाराज के सामने लोग रखते जिसे पढ़ाने में महाराज की विशेष रुचि रहती। वे अपनी पूजा से अतिरिक्त अन्य कार्यों की अपेक्षा स्वाध्याय और सत्संग को प्राथमिकता देते। सायंकाल ६ बजे से ७॥ बजे तक उनकी कथा-सत्सङ्ग का कार्यक्रम रहता। महाराज की यह एक विशेषता थी कि स्वाध्याय और सत्सङ्ग-कथा के समय वे समाधि जैसी स्थिति में हो जाते थे। पठन-पाठन और कथा में वे इतने तल्लीन हो जाते कि सामने कौन आया और

कौन गया, इसका उन्हें भान भी नहीं होता। सायंकाल की कथा के बाद रात्रि ७॥ से ८ बजे तक वे आने वाले लोगों से मिलते। रात्रि ८ बजे स्नान कर सायंकालीन पूजा पर बैठ जाते।

परिपक्व वैराग्य

जाड़ा, गर्मी, बरसात—सभी ऋतुओं में वे प्राय: एक चादर ओढ़कर ही सोते। एक बार की बात है, पूस का महीना था। अनवरत वर्षा और शीतलहरी चल रही थी। रात्रि में सोने के समय महाराज ने प्रतिदिन ओढ़ने वाली पतली ऊनी चादर ओढ़ ली। भीषण ठंड में वहाँ खड़े ब्रह्मचारी ने एक कम्बल लाकर उढ़ाना चाहा। महाराज श्री ने कहा कि यह कम्बल मेरे पास रख दो, अभी आवश्यकता नहीं है। आवश्यक होने पर ओढ़ ली जायेगी। उसी दिन मुझे महाराज के किसी अन्तरङ्ग भक्त से मालूम हुआ कि महाराज श्री का यह नियम है कि वे सदा एक चद्दर ही ओढ़ कर सोया करते हैं, पर महाराज अपने इस वैराग्यपूर्ण आंतरिक भाव को परिलक्षित नहीं होने देना चाहते थे। उस दिन मुझे यह अनुभूति हुई कि वैराग्य की परिपक्वता का दर्शन जो यहाँ हो रहा है, वह शायद अन्यत्र दुर्लभ है। महाराज का स्वभाव था कि वे अपने विषय में प्राय: कोई चर्चा नहीं करते, पर प्रसंगवश कभी-कभी कुछ बातें सामने आ जातीं।

एक बार मैं नारद घाट में कुछ स्वाध्याय के निमित्त महाराज के पास बैठा था। उसी समय हरी पत्तियों को पीसकर बनी हुई, देखने में भांग जैसी, एक गोली महाराज ने जल के साथ ग्रहण की। मैंने कौतूहलपूर्ण दृष्टि से महाराज की ओर देखकर पूछा यह क्या है महाराज? स्वामी जी ने कहा – पीसी हुई नीम की पत्ती की गोली है। इसे चैत्र कृष्ण में १५ दिन लेने से रक्त स्वच्छ रहता है। मेरे शरीर में थोड़ा कम्पन-सा हुआ। मैंने कहा – महाराज! नीम की तो एक पत्ती भी बड़ी कड़वी होती है। यह आप कैसे लेते हैं? महाराज ने कहा—इसका कोई स्वाद थोड़े लिया जाता है? यह तो गले के पास जीभ पर रखकर पानी से निगल जाते हैं। इसी सन्दर्भ में महाराज ने बताया कि पहले जब वे दक्षिण की पैदल यात्रा में थे तो वहाँ भिक्षा की कोई व्यवस्था न होने से इसी तरह आटे की गोलियाँ बनाकर पानी के साथ वे निगल जाते थे। वहाँ एक ब्रह्मचारी बैठे थे। उन्होंने पूछा कि महाराज आटे की गोलियों से पेट में आँव नहीं हो जायेगी? महाराज ने कहा—भाई, मैं इसे एक दिन छोड़ कर एक दिन लेता था। पेट की जठराग्नि में सब भस्म हो जाता था। आँव तो अधिक खाने पर तथा पेट भरे रहने पर होता है। मैंने फिर जिज्ञासा की कि एक दिन छोड़ कर क्यों लेते थे? इस पर महाराज ने कहा—यह इसलिये कि कम से कम एक दिन भिक्षा की कोई चिन्ता न रहे और निश्चिन्तता रहे।

निर्जल एकादशी व्रत

महाराज जी नियम के अटल थे। प्रत्येक एकादशी को उनका निर्जल व्रत रहता। मार्ग में
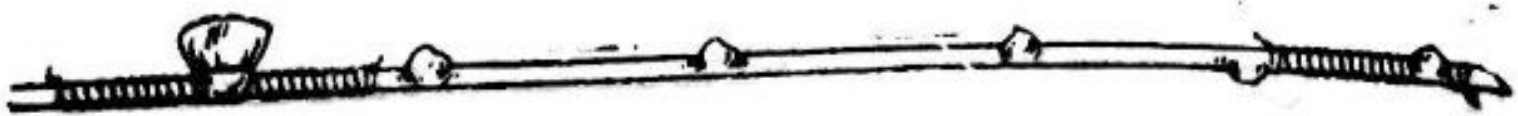
या कहीं भी भीषण से भीषण गर्मी में भी वे एकादशी को जल ग्रहण नहीं करते। एक बार वाराणसी में केदार घाट पर महाराज श्री विशेषरूप से लम्बे समय तक अस्वस्थ हो गये। कई दिनों की चिकित्सा के बाद स्वास्थ्य में कुछ सुधार हो रहा था, परन्तु कमजोरी अत्यधिक थी। इसी समय एकादशी तिथि निकट आ रही थी। वैद्य जी ने निर्जल व्रत के लिये स्पष्ट मना कर दिया था। महाराज का यह अनुमान हुआ कि एकादशी तिथि मुझे नहीं बतायी जायेगी। तब उन्होंने दर्शनार्थ आने वाले विद्वानों से एकादशी तिथि की सम्पुष्टी की तथा अपने निकट रहने वालों को यह निर्देश किया कि एकादशी को मेरा व्रत खण्डित मत करना। तदनुसार महाराज ने उस दिन भी निर्जल व्रत ही किया, परन्तु उनके शरीर की अवस्था निर्जल-व्रत के लायक थी नहीं, शाम होते-होते कमजोर स्वास्थ्य के कारण जल न लेने से चेतना में भी कमी आने लगी। संयोगवश सायंकाल के बाद पञ्चांग के अनुसार द्वादशी तिथि का अदार्पण हो गया था। महाराज की शारीरिक स्थिति को देखते हुये ब्रह्मचारी ने रात्रि में ही महाराज को बताया कि एकादशी पूरी हो गयी। अब द्वादशी के पारण के लिये दूध तैयार है। महाराज ने अपनी अर्धचेतनावस्था में दूसरा दिन समझकर पारण स्वीकार किया। इस प्रकार महाराज के स्वास्थ्य की रक्षा व्रता सकी। इसी तरह एक बार वाराणसी के सुप्रसिद्ध चिकित्सक ने महाराज श्री को दूध का कल्पशा प्रारम्भ कराया। कल्प में दूध की मात्रा प्रतिदिन बढ़ायी जाती है। इस कल्प में ७-८ किलो तक दूध की मात्रा पहुंच चुकी थी। संयोगवश बीच में ही एकादशी आ गयी। कल्प के मध्य निर्जल व्रत सम्भव नहीं था। अब यह प्रश्न उठा कि निर्जल व्रत छोड़ा जाय या कल्प ? महाराज ने इस समय भी अपना कार्य नहीं छोड़ा। व्रत को रक्षा के लिये बीच में ही कल्प-चिकित्सा छोड़नी पड़ी। एकादशी की तरह तमाष्टमी, शिवरात्रि आदि व्रत भी महाराज के कठिन होते थे। जन्माष्टमी को रात्रि १२ बजे की जवती के बाद महाराज केवल तुलसी का हो प्रसाद ग्रहण करते। फलाहार का भोग दर्शनार्थं भक्तों में अपकरण कर दिया जाता।

तुलसी प्रसाद की विशेषता

तुलसी प्रसाद में महाराज की अनन्य आस्था थी। वे एकादशी के निर्जल व्रत में भी तुलसी-दल ग्रहण करने का निषेध नहीं करते। एक बार काशो में श्री वृन्दावन बिहारो भवन में महाराज श्री के पास अनन्त श्री जगद्गुरु शंकराचार्य ज्योतिष्पीठाधीश्वर स्वामी कृष्णबोधाश्रम जी महाराज तथा पुरी पोठाश्वर शंकराचार्य स्वामी निरंजनदेव जो ठहरे हुये थे। प्रातःकालीन पूजा के बाद पुरीपीठाधीश्वर ने पेय पदार्थ (ठंढाई) का भगवान को भोग लगाया तथा स्वामो कृष्णबोधाश्रम जी महाराज से किंचित स्वीकार करने का आग्रह किया। पर उन्होंने स्पष्ट अस्वीकार कर दिया, कारण उनका भी यह नियम था कि वे दिन में १२ बजे एक बार भिक्षा करते, इसके पूर्व कुछ भी नहीं लेते। पुरी के शंकराचार्य ने विशेष आग्रह किया और कहा कि आप स्वीकार नहीं करेंगे तो मैं भी इसे ग्रहण नहीं करूंगा। इसपर श्रो करपात्री जो ने यह निर्णय दिया कि इसमें से तुलसो निकालकर इन्हें दे दो। तुलसी प्रसाद लेने

से आप की और इनकी दोनों की बात पूरी हो जायेगी। महाराज का यह निर्णय दोनों ने स्वीकार
किया।

लगभग ७-८ वर्ष पूर्व की बात है कि पूज्य स्वामी करपात्री जी महाराज अपना चातुर्मास्य काशी में सम्पन्न कर रहे थे। एक दिन अपनी कुटी में बैठ कर कोई पुस्तक देख रहे थे। मैं भी उनके पास बैठा कुछ आध्यात्मिक प्रश्न पूछ रहा था। पूज्य स्वामी जी बीच-बीच में समाधान करते जाते थे। इसी बीच एक नवागन्तुक व्यक्ति वहाँ आकर बैठ गये। थोड़ी देर बाद उन्होंने महाराज से निवेदन किया कि "स्वामी जी ! मेरे भोजन की कोई व्यवस्था नहीं है।" तत्काल महाराज श्री के मुख से यह शब्द निकला कि "भगवान के नाम का स्मरण करो, उनकी कृपा से ही इसकी व्यवस्था हो जायेगी।" ....ऐसा कहने के कुछ क्षण बाद महाराज श्री मेरी ओर मुख करके बोले—"देखो ! मैं यह बात ऊपर-ऊपर से नहीं कह रहा हूँ। यह बात मैं भीतर से कह रहा हूँ। इस संसार में तो कोई तत्व है नहीं। किस क्षण क्या हो सकता है, इसे कोई नहीं जानता। यदि कोई सार है तो वह है एकमात्र भगवन्नाम का सहारा और दूसरा काशी का आश्रय।" इतना कहते-कहते स्वामी जी महाराज भावविह्वल हो गये। जिस समय उनके द्वारा यह बात कही गयी, उस समय उनकी भाव-भंगिमाओं से मुझे ऐसा परिलक्षित हुआ मानो अपने जीवन की साधनाओं का अनुभव और सम्पूर्ण शास्त्रों एवं सत्संगों का सार उनकी इस वाणी से प्राप्त हो रहा है।

काशी में शरीर त्याग का संकल्प:—काशी में महाराज श्री की अटूट श्रद्धा थी। वे यह मानते थे कि जन्म-जन्मान्तर की साधनाओं के बाद भी त्याग-वैराग्य और तप से युक्त योगियों को जो वस्तु दुर्लभ है वह मोक्ष काशी में शरीर त्यागने मात्र से प्राप्त होता है। इसलिये वे सदा काशी के लिये कहते—'मरणं मङ्गलंयत्र'। महाराज श्री का यह नियम था कि वे प्रतिवर्ष चातुर्मास्य काशी में ही करते, कारण यति-संन्यासी चातुर्मास्यकाल में दो मास तक किसी भी परिस्थिति में एक स्थान की सीमा पार नहीं करते। इसलिये पिछले २०-२५ वर्षों में दूसरे स्थान पर चातुर्मास्य के आग्रह को महाराज ने कभी स्वीकार नहीं किया। उन्होंने स्पष्ट रूप से अपने ब्रह्मचारी को यह आदेश दे रखा था कि कहीं भी किसी समय मेरे अस्वस्थ होने पर गाड़ी तुरन्त काशी की तरफ मोड़ देना। उनका यह मानसिक संकल्प था कि शरीर-त्याग काशी में ही करना है। काशी में भी केदारखण्ड में शरीर-त्याग का वे विशेष महत्त्व मानते थे। काशी की महिमा का वर्णन करते हुये वे सदा कहते कि 'असारे खलु संसारे सारमेतत् चतुष्टयंम्। गङ्गाम्भः सतांसंगाः काश्याम् वासः शिवार्चनम्'—अर्थात् इस असार संसार में चार बातें ही सारभूत हैं—(१) गङ्गाजल, (२) सत्पुरुषों का सङ्ग, (३) काशी का वास, (४) भगवान् शिव का पूजन ये चारों ही सार भूत बातें काशी में प्राप्त हैं।

पंचक्रोशी परिक्रमा:—अन्तिम वर्षों में प्रतिवर्ष महाराज काशी की पंचक्रोशी यात्रा भी

करते। उनके साथ सैकड़ों हजारों की संख्या में भक्तमण्डली जाती। यात्रा के क्रम में 'हर-हर महादेव शम्भो काशी विश्वनाथ गंगे' यह कीर्तन चलता। इससे अतिरिक्त वार्तालाप आदि करना अमूल्य समय का अपव्यय माना जाता था। इसके अतिरिक्त काशी-रहस्य और काशीखण्ड की कथा—सत्संग का कार्यक्रम भी चलता। उनका यह विश्वास था कि 'अन्य देशे कृतं पापं वाराणस्यां विनश्यति। वाराणस्यां कृतं पापं अन्तर्गृहे विनश्यति। अन्तर्गृहे कृतं पापं पञ्चक्रोश्यां विनश्यति। पञ्चक्रोश्यां कृतं पापं वज्रलेपो भविष्यति।' इसीलिये वे साथ चलने वाले लोगों को निरन्तर सावधान रखते कि मार्ग में क्रोध, परनिन्दा, असत्य-भाषण आदि पापकर्म न बन जायें तथा नियम-संयम का पूर्ण पालन होता रहे। काशी को अखण्ड ज्योतिर्लिंग, साक्षात् भगवान् शिव का विग्रह मानकर इसकी परिक्रमा की जाये। यात्रा-क्रम में काशी की सीमा के भीतर मल-मूत्रादिका त्याग भी वर्जित रहता। इस प्रकार काशी में महाराज श्री की अविचल आस्था थी।

महाराज सबके कल्याण के लिये शास्त्र को ही प्रमाण मानते थे। इसीलिये उनके जीवन का सम्बल था 'शास्त्रीय सिद्धान्तों की रक्षा'। जीवन-पर्यन्त निर्भीकता पूर्वक उन्होंने इसका निर्वाह भी किया। शास्त्र की रक्षा के लिये सरकार के लाठी-डण्डे तथा गोलियों की भी उन्होंने कभी परवाह नहीं की। 'हिन्दूकोड बिल' और 'गोहत्या' के विरोध में उन्होंने कारागार की कठिन यातनाओं को भी सहन किया। एक बार गोहत्या बन्दी आन्दोलन के दिल्ली की तिहाड़ जेल में महाराज का सत्संग चल रहा था। उसी समय जेल के खूंखार कैदियों ने एकाएक लोहे की छड़ों से महाराज पर आक्रमण कर दिया। उस समय सर्वेश्वर-सर्वशक्तिमान परमपिता-प्रभु ने महाराज के जीवन की रक्षा की। आँख पर विशेष चोट आयी। डाक्टरों ने यह घोषित कर दिया कि एक आँख की ज्योति तो चली गयी तथा दूसरी आँख की ज्योति के भी जाने की सम्भावना है। पर भगवान् आदित्य नारायण ने दोनों आँखों की ज्योति की रक्षा की। तभी से महाराज की सूर्योपासना भी विशिष्ट रूप से चलने लगी। वे प्रतिदिन देर तक पूर्णविधि पूर्वक सूर्य नमस्कार आदि करते।

सनातन धर्म विजय-महोत्सव—एक बार स्वामी दयानन्द सरस्वती के निर्वाण के १०० वर्ष पूरे होने पर आर्य समाज ने उनका शताब्दि समारोह मनाया और यह घोषणा की कि स्वामी दयानन्द के अनुयायी आर्य समाजी विद्वान् शास्त्रार्थ में दिग्दिगन्त को विजय करते हुये काशी पधार रहे हैं यहाँ अवतारवाद, मूर्तिपूजा और श्रद्धाञ्जलि रुढ़ियों का खण्डन करेंगे जो चाहे उनसे शास्त्रार्थ कर सकते हैं। महाराज श्री इन चुनौतियों को कब सहन कर सकते थे। उन्होंने तुरन्त इस चुनौती को स्वीकार करते हुये कहा कि 'धार्मिक-क्षेत्रों में भी पंचशीलका सिद्धान्त मानना चाहिये। अपनी-अपनी आस्था मान्यता और विश्वास के अनुसार सबको अपना धार्मिक कार्य सम्पन्न करने का अधिकार है। पर किसी के धर्म में हस्तक्षेप और आक्रमण को कभी सहन नहीं किया जा सकता। यह बात सारे देश में फैल गयी। देश के कौन-कौने से सन्त-महात्मा, आचार्य और विद्वान् काशी पधारने लगे सबको यह विश्वास था कि स्वामी करपात्री जी महाराज के रहते शास्त्रार्थ में कभी सनातन धर्मी पराजित नहीं हो सकते। आर्य समाज के पण्डाल के निकट ही सनातन धर्म विजय-महोत्सव का भी एक विशाल पण्डाल बना।

प्रारम्भ में तो उस पक्ष के लोग शास्त्रार्थ के लिये तैयार ही नहीं हुये, बाद में उनमें से कुछ लोगों ने शास्त्रार्थ का प्रयास किया, पर वे टिक कहाँ सकते थे। अन्त में महाराज श्री ने निष्कर्ष रूप में शास्त्रीय सिद्धान्तों का प्रतिपादन और सभी प्रश्न और शंकाओं का समाधान प्रस्तुत किया। काशी की सड़कों पर, गलियों में, घरों में सब तरफ शास्त्रार्थ की ही चर्चा चलती रहती। सात दिनों तक यह विचित्र समा बंधी रही। यह महाराज के जीवन काल का एक ऐतिहासिक आयोजन था।

महाराज का यह स्वभाव था कि वे शास्त्र के विरुद्ध कुछ भी सुनना नहीं चाहते थे। कोई कितना भी निकटतम व्यक्ति क्यों न हो, यदि वह शास्त्रीय सिद्धान्तों के विरुद्ध कुछ कहता या लिखता तो महाराज तत्काल उसका खण्डन करते और उस बात का युक्ति और तर्क सहित शास्त्र के पक्ष में उत्तर भी देते।

विदेश यात्रा—एक बार की चर्चा में महाराज ने मुझसे कहा कि चिंतन होना तो कोई बुरा नहीं, पर जब किसी बात का अभिनिवेशपूर्वक चिन्तन होता है तो ऐसा लगता है कि किसी प्रारब्ध के दोष से ही ऐसा हो रहा है। कभी-कभी इस प्रकार की स्थिति हम लोगों की भी हो जाती है। मैंने उत्सुकतापूर्वक महाराज की ओर देखकर पूछा—ऐसा क्यों होता है महाराज ? महाराज जी ने कहा कि शास्त्र के विपरीत जब कोई बात सामने आती है तब हो जाता है। उदाहरण में उन्होंने कहा कि श्री माधवाचार्य जी शास्त्री का एक लेख शास्त्रीय दृष्टि से विदेश-यात्रा के समर्थन में देखा, तबसे जब तक मैंने उसका उत्तर नहीं लिखा तथा जब तक उस सम्बन्ध में माधवाचार्य जी से बातचीत नहीं हुई तब तक यह स्थिति बनी रही। विदेश यात्रा के सम्बन्ध में महाराज यह कहते कि आज तो प्रायः पण्डित और सनातनधर्मी सभी विदेश-यात्रा करते हैं। मैं किसे मना करता हूँ। अपनी कमजोरियों के कारण शास्त्र के विपरीत कोई व्यक्ति आचरण कर सकता है, परन्तु यदि उसे वह शास्त्र-सम्मत सिद्ध करने की चेष्टा करता है तो यह घोर अन्याय है। सत्पुरुषों को ईमानदारीपूर्वक अपनी कमजोरियों को स्वीकार करते हुये शास्त्र का यथार्थ प्रतिपादन करना ही श्रेयस्कर है। एक बार संसद-सदस्य सेठ गोविन्ददास जी ने धर्म-प्रचारार्थ विदेश-यात्रा के लिये विशेष आग्रह किया तथा उनके नियमानुकूल व्यवस्था तथा प्रबन्ध करने की जिम्मेदारी भी स्वयं लेनी चाही, परन्तु महाराज ने उसे कतई स्वीकार नहीं किया।

मन्दिर मर्यादा का संरक्षण तथा श्री काशी विश्वनाथ की स्थापना—मन्दिर प्रवेश के सम्बन्ध में भी महाराज का मत स्पष्ट था वे हरिजनों के हृदय से हित-चिन्तक थे। एक बार कानपुर में अखिल भारतीय वर्षीय धर्म संघ का महाधिवेशन चल रहा था। उत्तर प्रदेश के मुख्यमन्त्री बाबू सम्पूर्णानन्द जी वहाँ पधारे, महाराज श्री भी वहाँ उपस्थित थे। सम्पूर्णानन्द जी ने अपने भाषण में हरिजन प्रवेश आदि बातों की चर्चा की। उनके भाषण के बाद महाराज ने बड़ी युक्तिपूर्वक सभी बातों का उत्तर दिया और कहा कि अपने शास्त्र सम्पूर्ण जीवों के कल्याण का उपाय बताते हैं तथा अधिकारानुसार उनके कर्त्तव्य का निर्देश करते हैं जिससे उनका वास्तविक कल्याण होता है। यदि कोई

डाक्टर किसी दुधमुँहे बच्चे के लिये गन्ना खाना लाभकारी बताता है तो उसके अभिभावक गन्ने को मूल रूप से उस बच्चे को नहीं खिला सकते। गन्ने का रस निकालकर उसका कन्द तैयार करना होगा तथा उस कन्द का सत् देने पर ही बच्चे को गन्ने का लाभ मिल सकेगा। इसी प्रकार यदि कोई अन्त्यज मन्दिर के शिखर का दर्शन करता है और मन्दिर की बाह्य सेवा करता है तो उसे शास्त्रानुसार वही फल होगा जो किसी ब्राह्मण को मन्दिर के भीतर रहकर जप-तप सेवा-पूजा-अर्चा करने से मिलता है। महाराज का यह भाव था कि सभी मन्दिरों में भगवान् के गर्भ मन्दिर को प्राङ्गण से अलग रखा जाये तथा सभी वर्ण-आश्रम के लोग बाहर प्राङ्गण से ही भगवान का दर्शन आराधन करें। तथा मन्दिर के भीतरअर्चा-पूजा शास्त्र विधि अनुसार केवल पुजारियों द्वारा पवित्रता से सम्पन्न हो जिससे आज के सामाजिक परिवेश के कानून की भी रक्षा हो जाये, साथ ही शास्त्रानुसार मन्दिर की मर्यादा का भी रक्षण हो सके। इस व्यवस्था के निमित्त महाराज श्री ने पुराने काशी विश्वनाथ मन्दिर में अत्यधिक प्रयास किया। प्रारम्भ में तो कुछ समय तक इस प्रकार की व्यवस्था चली। बाद में सरकार तथा पण्डों ने मिलकर यह व्यवस्था समाप्त कर दी और मन्दिर की मर्यादा भी भंग कर दी गयी। तब महाराज ने काशी के मूर्धन्य विद्वानों एवं पण्डितों की सभा बुलायी जिसमें विचार विमर्श के बाद यह निर्णय हुआ कि चूंकि श्री काशी विश्वनाथ का मूल मन्दिर ज्योति लिङ्ग आज भी उपलब्ध नहीं है।

मुसलमानी काल से अब तक चार मन्दिरों की स्थापना हो चुकी है। अहिल्याबाई द्वारा स्थापित यह मन्दिर भी चौथा मन्दिर है। अतः शास्त्रानुसार मन्दिर-मर्यादा के रक्षण हेतु नये मन्दिर श्रीकाशी विश्वनाथ की स्थापना करना ही श्रेयस्कर है। तदनुसार मीरघाट पर नवीन श्री काशी विश्वनाथ मन्दिर की स्थापना बड़े समारोह के साथ की गयी, जहाँ आज भी महाराज द्वारा निर्धारित शास्त्रीय नियमानुसार पूजा-अर्चा की व्यवस्था है तथा सबको गर्भ-मन्दिर के बाहर से दर्शन-पूजन का समान अधिकार है। जो भारतवर्ष के सभी मन्दिरों के लिये शास्त्र-मर्यादा का एक आदर्श प्रस्फुटित करता है।

स्नेहीजनों में भगवत्-बुद्धि भगवान् की पूजा का अमोघ साधन— बातचीत के क्रम में एक बार महाराज ने कहा कि अपने धर्म शास्त्रों में मनुष्य के कल्याण के लिये भगवत्-सेवा, आराधन-पूजन की बड़ी सरल विधियों का प्रतिपादन है। घर में पति-पत्नी, माता-पिता, पुत्र-पौत्र और बन्धु-बान्धुओं में मनुष्य का स्वाभाविक स्नेह-प्रेम होता ही है। मोह-ममता के वशीभूत होकर उनकी सेवा अर्चा भी करनी ही पड़ती है। यदि उन पारिवारिक सदस्यों में मोह-ममता की जगह भगवद्बुद्धि कर ली जाये, वृद्ध माता-पिता को माता अन्नपूर्णा एवं भगवान् शिव का स्वरूप मान लें, पति को परमेश्वर, पुत्र को मदनमोहन श्याम सुन्दर, लाडले पौत्र को लड्डूगोपाल, पुत्र वधु को राधा-रानी कुमारी कन्या को भगवती जगदम्बा– इस प्रकार यदि भावना बना ली जाये तो पारिवारिक जनों के निमित्त किये गये सभी कार्य स्वतः भगवान् की पूजा में परिवर्तित हो सकते हैं। महाराज श्री ने कहा कि जब पत्थर की मूर्तियों में भगवान् की पूजा हो सकती है तो सचल सजीव स्नेही जनों में भगवत्-भक्ति हो जाने पर भगवान् की पूजा क्यों नहीं हो सकती।
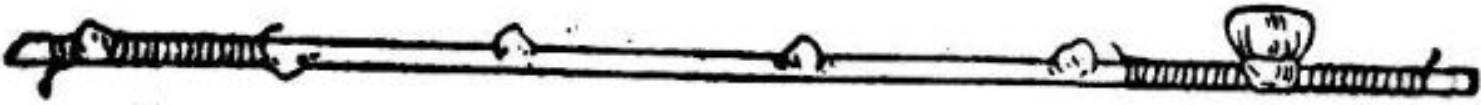
अतिथि सत्कार मुख्य धर्म—एक बार मैंने महाराज से पूछा कि जैसे जप, स्वाध्याय, तप ब्राह्मण का मुख्य धर्म है, युद्ध करना क्षत्रिय का मुख्य धर्म है। इसी प्रकार वैश्य का विशेष धर्म क्या है ? तब महाराज ने उत्तर दिया कि—'अतिथि सत्कार।' कोई अतिथि घर में आ जाये तो भोजन, जल इत्यादि से उसका सत्कार करना चाहिये। यदि भोजन करने के समय आ जाये तो पहले अतिथि को भोजन कराकर स्वयं करे। यहाँ तक कि भोजन करने के पूर्व कुछ समय तक दरवाजे पर खड़ा होकर अतिथि की प्रतीक्षा करनी चाहिये।

अच्छे धन की अच्छी बरकत—"बेईमानी, चोरी तथा अन्य तरीकों से कमाये हुये धन की बरकत भी वैसी ही होती तथा सत्यता और ईमानदारी से कमाया हुआ धन कभी घटता नहीं।" इस सन्दर्भ में महाराज ने पद्मपुराण की वह कथा प्रस्तुत करते हुये जिसमें भगवान् राम द्वारा ब्राह्मण वेश धारी भगवान् शंकर का आतिथ्य एवं माता अन्नपूर्णा द्वारा बाबा विश्वनाथ को स्वयं भोजन कराके तृप्त करने का रोचक प्रसंग वर्णित है—कहा कि—अच्छी नियत से कमाया हुआ धन कभी घटता नहीं और बुरी नियत से अर्जित धन कभी ठहरता नहीं, साथ ही दुःख का कारण भी बनता है।

साधु के लिये कलंक—एक बार किसी सन्दर्भ में महाराज ने कहा कि कभी-कभी किसी साधु की पुस्तकों में सदियों में तथा बिछावन आदि में रुपये-पैसे निकलते हैं, यह साधु के लिये कलंक है।

कर्त्तव्य के पालन में समय का विभाजन आवश्यक—एक बार मैंने जिज्ञासा की कि महाराज, मन में यह समझते हुये भी कि संसार नश्वर है और यह प्रपंच साथ नहीं जायेगा, इसीलिये पूरा समय भगवद्-चिन्तन-आराधन तथा सेवा में ही लगाया जाये, परन्तु गृहस्थ-जीवन की जिम्मेदारियों को देखते हुये यह सम्भव प्रतीत नहीं होता, अतः इससे कैसे छुटकारा मिले ? तब महाराज ने कहा कि प्राचीन लोग अपने समय का विभाजन करके ही सब कार्य करते थे। कितनी देर व्यापार का कार्य करना है, इतनी देर सत्संग-स्वाध्याय, पूजा-अर्चा तथा सेवा करनी है। सभी कार्य घड़ी के हिसाब से कर्त्तव्य रूप में करना चाहिए। महाराज ने यह भी कहा कि जङ्गल में जाकर यदि घर का चिन्तन होवे तो इसकी अपेक्षा घर में रहकर यदि भगवान् का चिन्तन हो जावे तो वही कल्याणकारी है।

कहाँ तक लिखा जाये स्मृति पटल पर असंख्य घटनाएँ उभर रही हैं परन्तु लेख का कलेवर विराम देने हेतु बाध्य कर रहा है; अतः उन ब्रह्म रूप से अनन्त ब्रह्माण्ड के अणु अणु में व्याप्त देवता स्वरूप उनके कमनीय कलेवर का ध्यान करते हुये यही प्रार्थना है कि वह हमें सदैव दृढ़तापूर्वक उस सनातन मार्ग पर अग्रसर होने की प्रेरणा देते रहें जिसके लिये यावज्जीवन वे प्रयास करते रहे।

□ □

न तस्य प्रतिमा अस्ति

—श्री आचार्य रामनाथ सुमन धौलाना, गाजियाबाद।

वाणी और आचरण, सिद्धान्त और व्यवहार, विद्या और तप तथा लेखनी और वाग्मिता का अप्रतिम सामञ्जस्य ईसा की इस शताब्दी में यदि कहीं एक व्यक्ति में देखने को मिला है तो निःसन्देह अनन्त श्री विभूषित यतिचक्रचूड़ामणि धर्म सम्राट् स्वामी करपात्री जी महाराज में। जिन महानुभावों ने एक बार भी उनके दर्शन किये हैं वे उनकी प्रभविष्णुता से प्रभावित हुये बिना नहीं रहे। जिनने उनकी वाणी को एक बार भी सुना है वे उनकी विद्वत्ता, शास्त्रों पर अधिकार एवं विषय प्रतिपादन प्रतिभा की प्रशंसा किये बिना नहीं रहे। जिनको उनके किसी निबन्ध अथवा ग्रंथ का अध्ययन करने का अवसर मिला है वे उनकी शास्त्रानुकूल विवेचन शैली, लौकिक दृष्टान्तों का पदे-पदे निदर्शन तथा सिद्धान्त पक्ष की पुष्टिपुरःसर प्रतिष्ठा देखकर मुग्ध हुये बिना नहीं रहते। आद्य शंकराचार्य भगवान् के तिरोभाव के उपरान्त ऐसी बहुमुखी प्रतिभा का आविर्भाव निश्चय ही, धार्मिक जगत् पर अकारणकरुण वरुणाकरुणालय भगवान् आशुतोष की कृपा का ही परिणाम था। भक्ति और ज्ञान के क्षेत्र में सिद्धान्त और व्यवहार का अदभुत सामरस्य देखकर आचार्य बलदेव उपाध्याय का यह कथन सर्वथा सटीक प्रतीत होता है कि—"आध्यात्मिक तत्त्वों के विवेचन में लौकिक उदाहरणों का समावेश कर स्वामी जी महाराज गम्भीर विषयों का निरुपण उतनी सरलता से सीधी भाषा में करते हैं कि वह श्रोता तथा वक्ता के हृदय में हठात् प्रवेश कर जाता है।······वे खूसट वेदान्ती नहीं हैं जो वेदान्त के शुष्क तत्त्वों के चिन्तन में अपनी प्रतिभा का उपयोग करता है, प्रत्युत, वे रसामृतमूर्ति, सौन्दर्य सार सर्वस्व भगवान् निकुञ्ज विहारी की निकुञ्जलीला के परमाराधक भक्तिरसाप्लुत उपासक हैं जिनकी कमनीय वाणी से भक्तिरस के मधुमय कण बिखर पड़ते हैं।"

सनातन धर्म के मूर्त्त अवतार श्रद्धेय स्वामी जी ने अपने ग्रंथों में सनातन धर्म के उन सभी सिद्धान्तों का सशक्त लेखनी से समर्थन किया है जिनके विषय में पाश्चात्य ही नहीं उनके मानस पुत्र भारतीय कहे जाने वाले तथा अपने को वैदिक कहने वाले तथा कथित विद्वानों ने विचिकित्सा प्रदर्शित की है अथवा जिनका खण्डन करने का दुःसाहस दिखाया है। वेदों की अपौरुषेयता, वेदों का स्वतः प्रामाण्य, वेद शाखाओं का शास्त्रीय विवेक, मन्त्र-ब्राह्मण भाग का वेदत्व, रामायण महाभारत काल मीमांसा तथा रामायण मीमांसा जैसे विपुलकाय निबन्ध-ग्रंथों द्वारा जहाँ स्वामी जी ने सिद्धान्तों के आधारभूत वैदिक तथा ऐतिहासिक साहित्य की प्रामाणिकता की पुष्टि की है वहीं अवतार मीमांसा, निराकार से साकार, निर्गुण या सगुण, मूर्ति पूजा, मृतकश्राद्ध, जन्मना जाति तथा स्वर्गलोक आदि की मान्यता का प्रबल युक्तियों द्वारा शास्त्रानुसारी प्रतिपादन किया है। शिव-विष्णु-गणपति-गायत्री तथा भगवती आदि के स्वरूप का उनका तात्त्विक विवेचन जहाँ उनके वैदुष्य का बोध कराता है वहीं उनकी अद्वैत वेदान्त निष्ठा का पदे-पदे परिचय कराता है। कतिपय प्रसंग में स्वामी जी द्वारा किये गये विवेचन को देखने से हमारे कथन की पुष्टि सुतरां स्वतः हो जायेगी।

क—"वेद अपौरुषेय हैं, इनका कोई कर्ता नहीं, यदि कोई कर्ता होता तो उसका स्मरण

होता। वैदिक सम्प्रदाय अविच्छिन्न होने पर भी कर्ता का स्मरण न होना अपौरुषेयत्व का हेतु है। प्रलय में भी सम्प्रदाय का विच्छेद नहीं होता, अपितु कर्मोपासनादिजन्य संस्कारों वाले ब्रह्मा को सुप्त-प्रतिबुद्धन्याय से गत कल्प के वेदों की आनुपूर्वी का स्मरण हो जाता है।

'वाचा विरूपनित्यया' तथा 'यो ब्रह्माणं विदधाति पूर्वं यो वै वेदाश्च प्रहिणोति तस्मै।' आदि मन्त्र वेद को नित्य बताते हैं और सृष्टि के आदि में ब्रह्मा के निर्माण का उल्लेख तो करते हैं, वेदों के निर्माण का नहीं। परमात्मा ब्रह्मा का निर्माण करके उन्हें वेद दे देता है। बौद्ध अष्टक, वामदेव, विश्वामित्रादि ऋषियों को तथा वैशेषिक हिरण्य गर्भ को वेदों के कर्ता के रूप में जो स्मरण करते हैं यह उनका अज्ञान है, क्योंकि यदि यह सत्य बात होती तो बौद्धों और वैशेषिकों में मत भेद न होता। कुमार सम्भव आदि के कर्ता के विषय में कोई विवाद नहीं करता। मनु 'अनादि निधना नित्या वागुत्सृष्टा स्वयम्भुवा।' कहकर तथा व्यास 'अतएव च नित्यत्वम्' कहकर वेद की नित्यता का ही समर्थन करते हैं। इत्यादि,

ख — निर्गुण-निराकार ब्रह्म के सगुण-साकार रूप में अवतार लेने का प्रतिपादन करते हुये श्रद्धेय स्वामी जी कहते हैं - वेदान्तवेद्य, अदृश्य, अग्राह्य भगवान् अपनी अचिन्त्य दिव्य लीलाशक्ति से परममनोहर, सगुण-साकार सच्चिदानन्द रूप में व्यक्त होकर अमलात्मा परमहंसों के भजनीय बनकर उनके भक्तियोग के विधायक बनते हैं।

तथा परमहंसानां मुनीनाममलात्मनाम्।
भक्तियोगविधानार्थं कथं पश्येम हि स्त्रियः॥ (भागवत)

गुलाब के बीज या नाल में शाखा-उपशाखा, कण्टक-पत्रादि की उत्पादिनी शक्ति की अपेक्षा जैसे सौगन्ध्य-माधुर्य-सौरस्य सम्पन्न पुष्प के उत्पादन की शक्ति विलक्षण है वैसे ही, भगवान् में प्रपञ्चोत्पादिनी महाशक्ति की अपेक्षा स्वरूपभूत मधुर मनोहर मङ्गलमयी मूर्ति का प्रादुर्भाव करने वाली शक्ति भी है। जब कौतुकी कृपालु की लीला से निराकार जीव साकार होता है (क्योंकि सर्वमत से जीव निराकार तथा निरवयव है) और स्पर्शविहीन आकाश स्पर्शयुक्त वायु के रूप में, रूपरहित वायु रूपवान् तेज के रूप में, रसगन्धविहीन तेज रसयुक्त जल के रूप में तथा गन्धविहीन जल गन्धवती पृथ्वी के रूप में अवतीर्ण होता है तब क्या वे प्रभु निराकार होकर भी साकार रूप में प्रकट नहीं हो सकते ?

ग — मूर्ति पूजा का समर्थन प्रतिपादन करते हुये स्वामी जी कहते हैं — स्वामी दयानन्द का यह कहना निःसार है कि 'मूर्ति पूजा, नाम स्मरण आदि मिथ्या है, क्योंकि वेद आदि सत्य ग्रंथों में इन बातों का कहीं चिह्न भी नहीं पाया जाता।' मूर्ति पूजा का निषेध करने वाला कोई भी वाक्य वेद में उपलब्ध नहीं है, अतः मूर्तिपूजा का खण्डन करना अप्रमाणिक है।

'संवत्सरस्य प्रतिमां यां त्वा रात्र्युपास्महे।
सा न आयुष्मतीं प्रजां रायस्पोषेण संसृज॥ अथर्व ३।१०।३॥

यह मन्त्र मूर्तिपूजा का ही प्रतिपादक है। आर्य समाजी मूर्तिपूजा को इसलिये नहीं मानते

कि पत्थर की मूर्ति अचेतन है। सदा चैतन्यगुण विशिष्ट सर्वत्र व्यापक परमात्मा की ही उपासना का वे विधान करते हैं। परन्तु इस मन्त्र में संवत्सर की प्रतिमा की उपासना विहित है। यह भी अचेतन की ही उपासना हुई। स्वामी दयानन्द ने स्वयं ही इस मन्त्र की व्याख्या इस तरह से की है—विद्वान् लोग संवत्सर की जिस क्षण आदि काल के विभाग करने वाली रात्रि की उपासना करते हैं, हम लोग भी उसी का सेवन करें। पृ० ३४६ ॥

संवत्सर भी एक वर्ष के परिमाण वाला काल ही है। उसमें रहने वाला गुण विशेष ही परिमाण है। यह काल और उसमें रहने वाला गुण दोनों अचेतन हैं। इस तरह अचेतन काल की उपासना का विधायक यह मन्त्र मूर्ति-पूजा का समर्थक है। इतना ही नहीं, संस्कार विधि में स्वामी दयानन्द स्वयं लिखते हैं— 'ओषधे त्रायस्व' हे औषध तुम इस बालक की रक्षा करो, इसको कुछ भी नुकसान न पहुंचाओ।' यह प्रार्थना कुशा से की जाती है। अचेतन तृण की प्रार्थना करना मूर्तिपूजा ही तो है। 'ओं विष्णोर्द्रंष्ट्रोऽसि' इस मन्त्र में छुरे को विष्णु की दाढ़ बताया गया है। क्या निराकार की भी दाढ़ हो सकती है? 'ॐ शिवो नामासि स्वधितिस्ते पिता०।' इस मन्त्र में भी छुरे से प्रार्थना की गयी है स्वामी दयानन्द ने इसकी व्याख्या की है—'हे छुरे, तू इस बच्चे को मत मार।' अचेतन छुरे से प्रार्थना मूर्तिपूजा नहीं तो क्या है?

घ—पितृ-श्राद्ध जैसे किसी भी विषय पर श्रद्धेय स्वामी जी की लेखनी चलते ही प्रमाणों का अम्बार उपस्थित हो जाता है। विरोध पक्ष के कुतर्कों तथा अर्थ के अनर्थों का अत्यन्त दृढ़ता के साथ खण्डन करते हुये स्वपक्ष की वे पुष्टि करते चले जाते हैं। यम-पितर श्राद्ध के स्वरूप का सविस्तार विवेचन करते हुये वे लिखते हैं—

"यमाय सोमः पवते यमाय क्रियते हविः।
यमं ह यज्ञो गच्छति अग्नि दूतो अरंकृतः॥ अथर्व १८।२।१॥

स्वामी दयानन्द यहाँ यम पद से न्यायाधीश, मजिस्ट्रेट आदि का ग्रहण करते हैं तब क्या इन्हीं के लिये सोम आदि की आहुति उनके मत से दी जायेगी? इनके लिये अग्नि को दूत किस तरह बनाया जायेगा? वेद में तो—योममार प्रथमोमर्त्यानाम्······यमं राजानं हविषा सपर्यत॥ अथर्व १८।३।३॥ यमराज को मनुष्यों में सबसे पहले मरने वाला प्राणी बताया गया है। 'यमो वा अकामयत०॥ तै० ब्राह्मण ३।१।५॥ यहाँ पितृराज्य पर विजय पाने के लिये यज्ञ के अनुष्ठान की बात यम के सम्बन्ध में कही गयी है। 'अङ्गिरैभिर्यज्ञियैः० अथर्व ॥१८।१।६॥ इत्यादि मन्त्र में यम का पिता विवस्वान् बताया गया है। पितृगण का स्वरूप बताते हुये मनु महाराज कहते हैं कि 'हिरण्य गर्भ के मरीचि आदि पुत्रों के पुत्र पितृगण कहे जाते हैं। विराट के पुत्र 'सोम सद्' नाम से साध्यों के पितर हैं और मरीचि के पुत्र 'अग्निष्वात' नाम से देवताओं के पितर कहे जाते हैं। अत्रि से उत्पन्न सन्तान 'बर्हिषद' के नाम से बोली जाती है जो देव, दानव यक्ष गन्धर्वादि के पितर कहे जाते हैं। ब्राह्मणों के पितर सोमपा कहे जाते हैं जो भृगु की सन्तान हैं, क्षत्रियों के पितर हविर्भुज कहलाते हैं जो अङ्गिरा के पुत्र हैं, वैश्यों के पितर आज्यपा हैं जो पुलस्त्य के पुत्र हैं और शूद्रों के पितर सुकाली हैं जो

वसिष्ठ के पुत्र हैं । ऋषियों से पितर उत्पन्न हुये और पितरों से देव-दानव । देव-दानवों से यह चराचर जगत् उत्पन्न हुआ है ।' श्राद्ध का स्वरूप आचार्य आपस्तम्ब ने इस प्रकार बताया है—'मनु ने प्रजा के कल्याण के लिये श्राद्ध शब्द को एक कर्म विशेष का वाचक माना है । इस कर्म के देवता पितर है । इसमें ब्राह्मण आहवनीय अग्नि का काम करते हैं । जैसे देवताओं तक हवि को पहुँचाने के लिये उसको अग्नि में अर्पित किया जाता है उसी प्रकार पितरों को कव्य पहुंचाने के लिये श्राद्ध में ब्राह्मण भोजन कराया जाता है । यह कर्म प्रत्येक मास में करना चाहिये । इस प्रकार ब्रह्मपुराण, नृसिंहपुराण, बृहस्पति, मरीचि, याज्ञवल्क्य आदि के प्रमाणों से यह प्रतीत होता है कि केवल मृत व्यक्ति को निमित्त बनाकर ब्राह्मणों को भोजन कराना ही श्राद्धपद का अर्थ है । इसका जीवित पिता, पितामह प्रभृति को आदर-पूर्वक भोजन कराने से किसी भी प्रकार का कोई सम्बन्ध नहीं है ।

ङ—वेदान्त के अद्वैत सिद्धान्त को व्यवहार के धरातल पर सिद्ध करने वाला श्रद्धेय स्वामी जी का अप्रतिम व्यक्तित्व वस्तुतः गुरोर्गरीयान् और महतो महीयान् है । अपने 'सर्वसिद्धान्त समन्वय' निबन्ध में नास्तिक-चार्वाक तक का समन्वय करके वे अपनी प्रतिभा व युक्ति कौशल से बड़े से बड़े विद्वान् को भी हतप्रभ कर देते हैं । वे लिखते हैं—चाहे कैसा भी नास्तिक क्यों न हो वह अपने अभाव से घबराता है । वह यही चाहता है कि मैं सदा बना रहूं । ......जगत् की अनेकानेक वस्तुओं में चाहे जितना भी सन्देह हो, परन्तु 'मैं हूँ या नहीं' ऐसा आत्मविषयक सन्देह किसी को भी नहीं होता । जगत्, परमेश्वर, धर्म, कर्म सभी का अभाव सिद्ध करने वाले शून्यवादी को भी अनिच्छया स्वात्मा का अस्तित्व मानना ही पड़ता है । कारण जो सबके अभाव का सिद्ध करने वाला है यदि वह रह गया तब तो स्वाति रिक्त ही सबका अभाव सिद्ध होगा, अपना अभाव नहीं सिद्ध हो सकता । इस प्रकार सर्व-निराकर्ता, सर्वनिषेध की अवधि के साक्षी स्वात्मा को स्वीकार करना ही पड़ेगा अन्यथा शून्य भी अप्रामाणिक हो जायेगा । अतः वही अत्यन्त अबाधित सर्वबाध का अधिष्ठान एवं साक्षीभूत अस्तित्व या सत्ता ही भगवान् का 'सत्' रूप है । इसी प्रकार बोध व प्रकाश के लिये प्राणिमात्र में उत्सुकता भगवान् का 'चित्' रूप है और संसार के प्राणिमात्र के देह, इन्द्रिय, मन, बुद्धि-अहंकार आदि की सभी चेष्टाओं व हलचलों का एकमात्र उद्देश्य आनन्द जिसे नास्तिक से नास्तिक भी नहीं नकार सकता, भगवान् का 'आनन्द' रूप ही है। इस तरह सभी 'सच्चिदानन्द' भगवान् के उपासक हैं ।''

इस प्रकार हम कहते हैं कि ज्ञान और भक्ति को सांसारिक क्लेश कष्टों के निवारण का समान रूप से साधन समझने वाले आचार्यों की मणिमाला में सुमेरु स्थानीय, परम श्रद्धास्पद, युगपुरुष धर्म सम्राट् स्वामी करपात्री जी महाराज अद्वितीय व्यक्तित्व के निधान रहे हैं । उनकी ज्ञानगरिमा, भक्तिमहिमा, शीलशुचिता एवं सिद्धान्त निष्ठा वन्दनीय है, अभिनन्दनीय है । उनके भक्त अपने हृदय में उनका ध्यान करते समय कहते हैं कि 'न त्वत्समोऽस्त्यभ्यधिकः कुतोऽन्यो लोकत्रयेऽप्यप्रतिमप्रभाव ॥' उनका प्रत्यक्ष देहदर्शन न होने पर सहसा मुख से यह वचन निकल पड़ता है—

न तस्य प्रतिमा अस्ति यस्य नाम महद्यशः ।

श्री राम भक्त करपात्री जी

—महन्त रामकृष्ण दास महात्यागी
मन्दिर श्री राम हनुमान वाटिका, नयी दिल्ली-११०००२

भक्ति रसार्णव व भक्ति सुधा ग्रंथ, पूज्य करपात्री जी महाराज के हृदय में भगवद्भक्ति के उच्छ्वलित विन्दु हैं। प्रभु के नाम स्मरण—करते ही, उनके हृदय से भगवान के प्रति व्यक्त होने वाले विशेषण भक्ति प्रवाह के प्रबल प्रवेग का ही द्योतक हैं।

स्वामो करपात्री जी महाराज की दीक्षा भले ही अद्वैत शांकर सम्प्रदाय में हुई हो किंतु वे मन, कर्म, वचन, हृदय से परम रामभक्त थे। उनकी प्रगाढ़ रामभक्ति अनेकशः भक्तों का प्रेरणा स्रोत रहा है व है।

राजनैतिक, धार्मिक, सामाजिक आदि विविध सभाओं व गोष्ठियों में वे श्रीमद् बाल्मीकि रामायण के—

> नमोऽस्तु रामाय सलक्ष्मणाय, देव्यै च तस्यै जनकात्मजायै।
> नमोऽस्तु रुद्रेन्द्र यमानिलेभ्यो, नमोऽस्तु चन्द्रार्क मरुद्गणेभ्यः॥

उपरोक्त श्लोक से ही मंगलाचरण करते थे व "श्री राम जय राम जय जय राम" का संकीर्तन करते थे व करवाते थे। स्वामी जी को उपरोक्त राम-नाम कीर्तन अतिप्रिय था। और वे कहा करते थे कि यह कीर्तन प्राचीन भारत का राष्ट्रगान है। इसके गान से राष्ट्र का अभ्युदय होता है। "मार्क्सवाद और रामराज्य" ग्रंथ में आधुनिक प्रचलित सभी प्रकार के राजनैतिक वादों का तर्क युक्ति व आध्यात्मिकता के आधार पर खण्डन करके राजनैतिक जगत में रामराज्य को ही सुप्रतिष्ठित किया। भारत की अखंडता के रक्षा के लिये अप्रैल १६४७ में सत्याग्रह किया व जेल की यातनाएं सहे। उसी समय विशुद्ध राजनैतिक संगठन का अभाव खटका व विशुद्ध राजनैतिक दल की स्थापना की। राजनैतिक संगठन का नामकरण भी मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान राम के आदर्श को सामने रखकर उन्हीं के नाम के साथ अपने दल का नाम "रामराज्य परिषद" रखा।

भगवान राम के आदर्श व मर्यादा का पालन ही विश्व कल्याण का उपाय है ऐसा उनका दृढ़ मत था। सनातन धर्म की परम्पराओं व भगवद् अवतारों या शास्त्रों के विरुद्ध किसी ने कुछ कहा या लिखा, उसका वे सक्रिय विरोध करते थे। भगवान राम के लीला-चरित के विरोध में लिखे गये ग्रंथों की समुचित समीक्षा किया जो "रामायण मीमांसा" के नाम से प्रकाशित है। उक्त ग्रंथ के परिशिष्ट में रामोपासना को ध्यान, विनियोगादि तांत्रिक विधियों से प्रतिष्ठित किया है।

प्रकाण्ड विद्वान : स्वामी श्री करपात्री जी महाराज

—श्री दिनेश सिंह
संसद सदस्य, १-त्यागराज मार्ग, नई दिल्ली।

सरयूपारीण ब्राह्मणों का ग्राम है ओझोली जनपद गोरखपुर में। हमारे पूर्वज कालाकांकर के राजा साहिब पं० राम निधि ओझा के व्यक्तित्व, धर्मज्ञता, पांडित्य एवं सदाचरण से ऐसे प्रभावित हुये कि उन्हें सपरिवार प्रतापगढ़ के ग्राम भटनी में पधारने का निवेदन किया और इस प्रकार ओझा जी सपरिवार ओझोली से भटनी आकर रहने लगे। यहीं स्वामी जी ने सन १९०७ में जन्म लिया। इस प्रकार विद्वानों के इस पवित्र कुल से हमारे वंश का अत्यन्त घनिष्ठ सम्बन्ध रहा है। अपने पिता के धार्मिक संस्कार स्वामी जी में भरने स्वाभाविक थे। स्वामी करपात्री जी हमारे यहाँ के निवासी थे। वह एक प्रकांड विद्वान एवं महात्मा थे, वैदिक, तान्त्रिक एवं शास्त्रीय विषयों पर उन्होंने अत्यन्त मौलिक ग्रंथों की रचनाएं की हैं। ऐसे उद्‌भट्‌ विद्वान की विद्वत्ता से लोग प्रेरणा ले ऐसी मैं हृदय से कामना करता हूँ। ●●

(पृष्ठ ५०४ का शेष)

स्वामीजी नित्य राम रक्षा स्तोत्र का पाठ करते थे अस्वस्थता में भी राम रक्षा स्तोत्र, भगवद् लीला, चरित व महिमा का श्रवण करते थे। स्वामी जी का हृदय भगवद् लीला कथा सुनते हुये भर जाता था। अश्रु पात होने लगता था। उनका सम्पूर्ण जीवन राम भक्ति व सनातन धर्म के लिये समर्पित था।

पूज्यपाद श्री करपात्री जी महाराज के त्याग, तप व निष्ठामय जीवन व राम भक्ति से भक्त जनों को प्रेरणा लेनी चाहिये। ✲✲

लोकोत्तर व्यक्तित्व

—श्री रामजी मिश्र
प्रसारण अधिशासी, आकाशवाणी, अल्मोड़ा

प्रख्यात है भारत भूमि नर रत्न प्रसू है। इसने समय-समय पर ऐसी अनेक विभूतियों को जन्म दिया है, जिन्होंने अपने कर्म एवं ज्ञान की प्रभामयी रश्मियों से भारत ही नहीं, अपितु समस्त तमसाच्छन्न जगती को आलोकित किया है। राम, कृष्ण, शंकराचार्य एवं पूज्य स्वामी करपात्री जी महाराज के मननीय जीवन के इतिहास के पृष्ठ इस बात का समर्थन एवं सम्पोषण करते हैं। संसार में ऐसे व्यक्तित्व से विभूषित महापुरुष उँगलियों पर गिने जा सकते हैं जिनकी महत्ता, उदारता, प्रभाव और स्वभाव की विनम्रता से उस समय का सम्पूर्ण वातावरण प्रभावित होने से नहीं बच सकता। वर्तमान समय में इस प्रकार के व्यक्तित्व से सम्पन्न परम पूज्य श्री स्वामी करपात्री जी थे, जिनके दिल दिमाग ने सारे संसार की चिंतन धारा के मूल को प्रभावित किया है। उनकी उपलब्धि और अविचल चारित्रिक दृढ़ता का समादर मानव जाति के सम्मान का आवश्यक अंग है। भगवान श्रीकृष्ण ने गीता में महापुरुषों, विश्वविभूतियों को अपना अंशभू: तेज कहा है —

> यद् यद्विभूतिमत् सत्वं, श्रीमदूर्जितमेव वा।
> तत्तदेवावगच्छ त्वं, मम् तेजोऽशसम्भवम्।।

यह निर्विवाद रूप से सत्य है कि परम पूज्य महाराज श्री विश्व की महनीय विभूति थे उनमें धर्म और राजनीति का अलौकिक सामञ्जस्य प्रादुर्भूत था। वे प्राणिमात्र के कल्याण तथा विश्व के कल्याण की कामना करते थे और यही उनका उद्घोष था। महापुरुषों के वास्तविक चरित्र की अभिव्यक्ति तो उनके नित्य के व्यवहार से होती है। पूज्य महाराज श्री के साथ यात्रा करने का मुझे सौभाग्य प्राप्त था, यात्रा क्रम में भी उनके कार्यक्रमों, नित्य प्रति के व्यवहारों में कोई लोप नहीं आता था। जनसभाओं में वे नियत समय पर अवश्य पहुंचते थे। कभी-कभी तो भिक्षा करने के तत्काल बाद वे मंच पर पहुँचकर जनसभाओं को सम्बोधित करते थे। श्रद्धालुजन उन्हें मूर्तिमान सनातन धर्म मानते थे। राजनैतिक तथा धार्मिक सभी क्षेत्रों में उनके लोकातिशायी अद्भुत चरित्रों का पार नहीं है। किसी भी क्षेत्र में उनके गुणों का अन्त नहीं था, वे धर्म और नियम के बड़े पक्के थे, उनकी सारी जिन्दगी आस्तिकता से देदीप्यमान थी। पूज्य महाराज श्री का व्यक्तित्व एक हीरे के समान था जिसे किसी भी ओर से देखा जाए सुन्दर ही लगता है। वे विभिन्न पर्यवेक्षक को विभिन्न रूपों में दिखाई देते थे यह बात पर्यवेक्षक पर निर्भर थी कि वह उनको किस चश्मे से, किस स्थान पर खड़े होकर, किस पृष्ठ भूमि में देखता है। पूज्य महाराज श्री के व्यक्तित्व में दार्शनिक, राजनेता और तपस्वी के गुण एक साथ अद्भुत सामंजस्य के साथ अनुस्यूत थे।

श्री करपात्री जी

मनीषा राम शास्त्री, शामली।

वास्तव में अध्यात्म मार्ग पर चलकर ही इस जीव का कल्याण हो सकता है। इस परम सत्य का प्रसार व प्रचार करने के लिए ही ब्रह्मस्वरूप विरक्त सन्त शिरोमणि श्री करपात्री जी महाराज इस धर्म प्राण देश में ज्ञान-वैराग्य और भक्ति के मार्ग को पुष्ट कर अपने अनुभवगम्यशास्त्र ज्ञान तथा विशुद्ध शरीर से एक उदाहरण उपस्थित कर ब्रह्मलीन हो गये।

महाराज ने अपने सदुपदेश से गाँव-गाव और नगरों, तीर्थों में पैदल ही भ्रमण कर जो सच्चे धर्म का उपदेश दिया है उसे भूलना कठिन है। हमारे सामने जो उनके द्वारा रचित अमूल्य ग्रंथ हैं। ये ग्रंथ वेदादि शास्त्रों के समान ही आस्तिक मनुष्यों को सन्मार्ग दिखाते रहेंगे। इस प्रकार के ग्रंथों को धार्मिक लोग प्रमाण मान कर यदि स्वाध्याय करते रहेंगे तो माया पिशाची का मानमर्दन होता रहेगा। प्राणिमात्र का मोह मदान्धर नष्ट होकर दुःख की निवृत्ति और सुख की प्राप्ति होती रहेगी। आज तक किसी सन्त ने इतना ज्ञान का भण्डार नहीं दिया कि जितना ज्ञान वैराग्यरसिक इन महात्मा ने प्रदान किया है। बड़े-बड़े तार्किक भी श्री चरणों में नतमस्तक होते देखे गये हैं कभी किसी धनीमानी नेता के प्रभाव में आकर सत्य सिद्धांत से यह सन्त कभी विचलित नहीं हुए। देश की धार्मिक, राजनैतिक, बौद्धिक उन्नति का मार्ग अपने प्रवचनों में तथा अपने रचित ग्रंथों में महाराज ने सिद्ध कर दिया कि—"सत्य वक्ता त्यागी पुरुष देश को लाखों में भी एक नहीं मिलेंगे मैं ऐसे सन्तों का प्राप्त होना भाग्योदय ही मानता हूँ।"

श्री चरणों में नतमस्तक श्रद्धाञ्जलि अर्पित करता हूँ।
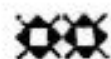
(पृष्ठ ५०६ से आगे)

नास्तिकता के इस दुर्दान्त समय में कभी भी किसी एक व्यक्ति ने भाराक्रांत विशाल जन समूह के ऐसे दीर्घव्यापी संघर्ष का नेतृत्व और स्वरूप प्रदान करने में इतना बड़ा योगदान नहीं किया था। किसी भी धर्मोपदेष्टा का मूल्यांकन उसके युग और उसकी उन समस्याओं के सन्दर्भ में होना चाहिये जिसका कि उसे सामना करना पड़ा था। स्वामी करपात्री जी महाराज निर्विवाद रूप से अपने इस शताब्दी के चुने हुये महान विशिष्टतम् व्यक्तियों में से एक थे। वे एक युगपुरुष थे जो आज की और आगे की आने वाली पीढ़ियों के लिये प्रकाश स्तम्भ की भाँति दीप्य तथा प्रकाश बिखेरते हुये देदीप्यमान हैं। ऐसे महान राष्ट्रनायक सनातन धर्म संरक्षक भारत माता के अनुपम रत्न परम पूज्य महाराज श्री की आत्मा को अपनी श्रद्धामयी श्रद्धांजलि अर्पित करता हूँ। उनकी कीर्ति दिगदिगन्त व्याप्त है और तब तक रहेगी जब तक गंगा में गंगाजल तथा हिमालय में हिम रहेगा।

श्री पूज्य स्वामी करपात्री जी तथा ज्योतिष

—उमराव पाण्डेय, ज्योतिषाचार्य
श्री धर्मज्ञानोपदेश संस्कृत महाविद्यालय, मालवीय नगर, प्रयाग

कर्मकाण्ड तथा ज्योतिष का अन्योन्याश्रय सम्बन्ध है। काल-शुद्धि का विचार प्रत्येक यज्ञ और संस्कारों में किया जाता है यहाँ तक काल शुद्धि को हमारे शास्त्रों में महत्व दिया गया है कि यदि जिस क्षण वारवेला का समय उपस्थित हो जाय वहीं पर कार्य रोक देना चाहिये। बहुत से लोग जो शास्त्र को सर्वोपरि महत्व प्रदान करते हैं वे प्रायः मार्ग में चलते समय वारवेला लगने पर यात्रा करना भी बन्द कर देते हैं। इसी प्रकार शकुनों का भी विचार बड़ा प्रबल है जो ज्योतिष का एक अङ्ग समझा जाता है। "प्रत्यक्षं ज्योतिषं शास्त्रं चन्द्राकौं यत्र साक्षिण" के आधार पर नास्तिक भी ज्योतिष को बाध्य होकर नमन करता है। पूज्य स्वामी जी तो शास्त्र के पूर्णपक्षपाती थे। शास्त्र मर्यादा की रक्षा हेतु पूज्य चरण ने अपना एकांत का वास छोड़कर जनमानस के बीच पैदल यात्रा करके यत्र तत्र सर्वत्र जब शास्त्र के विरुद्ध किसी प्रकार का अवरोध उत्पन्न हुआ उस समय सिंह गर्जना के साथ विरुद्ध पक्ष को निरस्त करके शास्त्र की सदा सर्वतोभावेन प्रतिष्ठा स्थापित कर वेद भगवान को प्रसन्न किये। नितांत शांत तथा परम एकान्त कोयल घाटी का वह निर्जन स्थान आज भी साक्षी है जहाँ से पूज्य चरण चलकर इस कोलाहल जगत में महामना मालवीय तथा श्री गाँधी जी जैसे भ्रमित लोगों को शास्त्र का मार्ग प्रदर्शित कराकर सरकारी धर्म विरुद्ध चक्रव्यूह का भेदन किये। चक्रव्यूह भेदन के अन्य अङ्गों का वर्णन करने पर यह लेख न रहकर महाग्रंथ का रूप धारण कर लेगा अतएव मात्र ज्योतिष से सम्बन्धित चक्रव्यूह भेदन का ही उल्लेख करना उचित समझता हूँ। पूज्य चरण यज्ञ युग के साथ ही सर्ववेद शाखा सम्मेलन का भी कार्यक्रम चलाते रहे उसमें प्रायः ज्योतिष का स्थान प्रमुख रखते थे। प्रायः कहा करते थे कि —"राधा बिनु आधा कृष्ण सीता बिनु राम।"

"ज्योतिष बिनु सभी शास्त्र बैठे निष्काम" इस उक्ति से सिद्ध होता है कि ज्योतिष को आदेश शास्त्र मानकर अपने जीवन को शास्त्रपिता की सेवा में लगा दिये। जहाँ कहीं पर ज्योतिष के विरुद्ध बिना मुहूर्त का कोई यज्ञ या पूजन होता था वहाँ पर वे जाना पाप समझते थे इसका प्रत्यक्ष है कि एक बार दिल्ली में मूर्ति स्थापना हो रही थी उसमें परमपूज्य श्री स्वामी करपात्री जी आमन्त्रित थे जब उन्हें यह ज्ञात हुआ कि स्थापना शुक्रास्त के समय की जा रही है वे उसमें जाने से मना कर दिये जिसका परिणाम हुआ कि स्थापना कार्यक्रम रोक दिया गया। प्रायः कुम्भपर्व पर विवाद उपस्थित हो जाया करता है उसके सम्बन्ध में पूज्य चरण की जो पुस्तक "धर्मकृत्योपयोगितिथ्यादि निर्णयः कुंभ-पर्व निर्णयश्च" नाम से प्रकाशित हुई तथा ज्योतिष और धर्म शास्त्र के विद्वानों को एक दिशा प्रदान की उससे उस महान प्रतिभा के प्रति किस शास्त्र प्रेमी का हृदय नतमस्तक नहीं होगा? सभी लोग
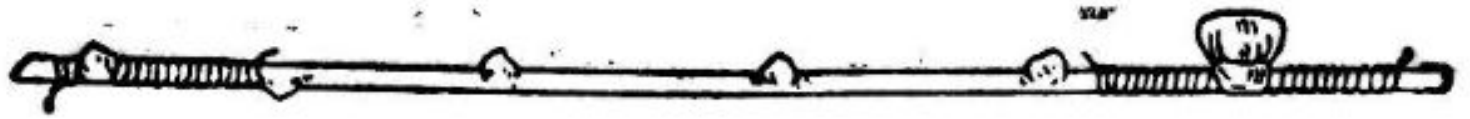
आश्चर्य में पड़ गये कि यह महात्मा कब और कहाँ पर इतनी गहराई के साथ ज्योतिष का अध्ययन किये। उनके लेख में जब सिद्धान्त शिरोमणि, सिद्धान्त तत्वविवेक, सिद्धांत चूड़ामणि, सिद्धांत सार्व-भौम, काल माधव, सूर्य सिद्धांत, ज्योतिष सिद्धांत संग्रह तथा "वाणवृद्धि रसक्षयः" के आधार पर तिथि तथा कुम्भपर्व का निर्णय विद्वानों के सामने उपस्थित हुआ उस समय अटक से कटक तक और हिमा-लय से कन्याकुमारी तक के विद्वान आश्चर्यचकित रहे। सभी लोगों के मुख से यही बात निकलने लगी कि यह सामान्य मानव नहीं कोई देव, यक्ष या गन्धर्व में से इस धरा धाम को अलंकृत करने हेतु अवतरित हुआ है। पूज्य चरण ने यह कभी नहीं स्वीकार किया कि बहुमत कह रहा है अतः इसे मान लिया जाय। यदि शास्त्र सम्मत वचन उपलब्ध है और बहुमत अपने स्वार्थ को लेकर उसे निरस्त करना चाहा तो पूज्य स्वामी जी बहुमत को ठुकरा दिये तथा शास्त्रके वचन को पुष्ट करते हुये बहुमत को भी अपने अनुकूल करने का उचित तर्क से बाध्य कर दिये। इसका प्रमाण सम्वत २०२२ का कुम्भ है। प्रायः लोगों की यही धारणा है कि कुम्भ १२ वर्ष पर ही आता हैं पर पूज्य पाद ने यह भ्रांति दूर कर दिया कि ग्रहों में बीज संस्कार मानकर कभी-कभी ११ वर्ष पर ही कुम्भ मनाया जा सकता है। सन १९७७ के कुम्भ पर भी विशेष विचार विमर्श हुआ था। पूज्य पाद स्वामी श्री सूर्य सिद्धांत को प्राथ-मिकता देते हुये धर्मशास्त्र के अनुकूल ही व्रत तथा तिथि और कुम्भ का निर्णय स्वीकार करते थे। उनका कहना था कि सभी शास्त्र एक दूसरे के पूरक हैं। वेद सबका मूल है अतएव सबका समन्वय करते हुए किसी भी भारतीय को धर्म का पालन करना चाहिये। सूर्य सिद्धांत के सम्बन्ध में महाराज का निम्न उदाहरण सुस्पष्ट है।

"सूर्यसिद्धांतशास्त्रेण समानीता ग्रहाः सदा।
नित्ये कर्मण्युपादेया न तु दृग्गणितागताः॥

उक्त सिद्धान्तों से यह स्पष्ट होता है कि पूज्य श्री स्वामी जी का जीवन अपने शास्त्रों के प्रति उत्सर्ग था। अमृतसर, उज्जैन, काशी तथा प्रयाग और कई स्थानों में जो शास्त्रचर्चा हुई उसमें पूज्य चरण का ही मत सभी लोगों ने स्वीकार किया। अपने महान आचार्य तथा अंशभूत ईश्वरांश पूज्य पाद शंकराचार्य, श्री रामानुजाचार्य, श्री बल्लभाचार्य, श्री निम्बार्काचार्य और श्री मध्वाचार्य जी ने उपनिषद तथा गीता तक ही अपने लेखनी को चलाया। वेद पर लोगों ने सायण, उव्वट और शावर तथा महीधर के अतिरिक्त कुछ लिखने का प्रयास नहीं किया किंतु पूज्य श्री करपात्री जी महाराज ने अनेक कुतर्क वादों का खण्डन करते हुये अपने आर्षमत के प्रतिपादन के साथ-साथ अपनी अद्वितीय प्रतिभा से जनमानस को आन्दोलित किया जिसका प्रत्यक्ष उदाहरण है "वेदार्थ पारिजात" और "ऋग्वेदका भाष्य" जो सदा सर्वदा अमर रहेगा। अद्वैतमतावलम्बी होते हुये कर्मकांड का इतना पक्षपाती शायद श्री राम और भगवान् श्री कृष्ण को छोड़कर दूसरा कोई नहीं हो सकता है। जैसे कर्म-कांड लीला की रक्षा हेतु प्रभु का अवतार होता है उसी प्रकार हमारे पूज्य स्वामी का भी अवतार माना जाय तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी।

वन्दनीय विभूति : स्वामी करपात्री जी

—डा० सुरेन्द्र शर्मा, 'सुशील'
एम० ए०, पी-एच० डी०, साहित्यरत्न
मन्त्री—भक्तरामशरणदास स्मृति ग्रंथ समिति, गाजियाबाद

यूं तो इस संसार में सब प्राणी जन्म लेते हैं और अपनी बुद्धि से धर्माधर्म का निर्णय करके परलोकवासी हो जाते हैं किंतु ऐसा तो कोई बिरला ही जन्म लेता है जिससे उसका कुल भी पवित्र हो जाय और जननी भी कृतार्थ हो जाती है—निम्नाङ्कित पंक्तियों में यही भाव है —

'कुलं पवित्रं जननी कृतार्था, वसुन्धरा पुण्यवती च तेन।
अपारसंवित्सुखसागरेऽस्मिँल्लीनं परे ब्रह्मणि यस्य चेतः ॥'
'पुत्रवती जुगति जग सोई।'
'यः प्रीणयेत् सुचरितैः पितरं स पुत्रः।'

ऐसे ही विरले, 'महापुरुष' अथवा 'आप्तपुरुष' की संज्ञा प्राप्त करते हैं और दैवी शक्ति के प्रतिनिधि रूप में धर्म का उत्थान और अधर्म का पतन करते हैं। स्पष्ट भी है कि साधारण बुद्धि वाले व्यक्तियों से महापुरुषों की बुद्धि विलक्षण ही होती है, महापुरुष अपने जीवन में देश और धर्म के सुधार की चिंता करते हैं जबकि साधारण बुद्धि वाले 'अयं निजः परोवेति' को गणना में तल्लीन रहते हैं। आज के इस भौतिकवादी युग में किसी भी जनसमूह का किञ्चिन्मात्र नेतृत्व करने वाले व्यक्ति को समाज झट से 'महापुरुष' की संज्ञा दे देता है फिर चाहे वे 'महापुरुष' देश और धर्म के घोर शत्रु अथवा द्रोही ही क्यों न रहे हों, यह विचारधारा नितांत अनुचित है। सत्य तो यह है कि देश और धर्म के सांगोपांग हितचिंतन में जिसने मनसा वाचा कर्मणा अपना जीवन समर्पित कर दिया हो वही व्यक्ति 'महापुरुष' की संज्ञा से अभिहित होगा। धर्मसम्राट पूज्य स्वामी श्री करपात्री जी महाराज ऐसे आप्त-पुरुषों में अग्रगण्य थे उन्होंने अपने जन्म से जहाँ अपने वंश को पवित्र कर दिया वहीं उन जैसे सुपुत्र को जन्म देकर कृतार्थ जननी पुत्रवती हो गयी। २०वीं शताब्दी में जिन महापुरुषों ने अपनी प्रगाढ़ विद्वत्ता, एवं अक्लांत कर्मनिष्ठा से भारतीय संस्कृति का विशुद्ध नवजागरण किया उनमें पूज्य स्वामी जी अपना महत्त्वपूर्ण स्थान रखते हैं। उनकी ओजमयी वाणी का जिन लोगों ने दर्शन किया है उनकी स्पष्टोक्ति है कि पूज्य स्वामी जो अपने सिद्धांतों के रक्षण के लिये प्राण भी दे सकते थे, उनका व्यक्तित्व आजकल के ढुलमुलपंथियों जैसा नहीं अपितु हिमाद्रि की भाँति अडिग था, उनका चरित्र जाह्नवी जैसा निर्मल था, गौरक्षा, उनके जीवन की प्रतिष्ठा का प्रश्न बन चुका था। उनकी इस उल्लेखनीय विशेषता से कौन अभागा हिन्दू अपरिचित है कि जो बात वे मंच से एक बार कह देते थे वह शास्त्रानुमोदित तो

होती ही थी, सिंह की दहाड़ जैसी भी होती थी, साथ ही उनकी स्पष्ट घोषणा होती थी कि—है कोई माई का लाल ! जो हमारे प्रश्नों का उत्तर दे ? यदि किसी सज्जन को शास्त्र की कुलकुली उठ रही हो तो वह मैदान में आकर उसे मिटा ले।'' चाहे सारे संसार ने उसका विरोध किया हो परन्तु जो बात शास्त्र सम्मत होती थी उसे वे डंके की चोट कहते थे। उन्होंने परिस्थिति में ढलकर कभी भी सिद्धान्त में लोच नहीं आने दिया इस विषय में उनका यह वाक्य कितना हृदयंगम करने योग्य है कि ''प्रवाह के साथ मुर्दा बहता है जीवित व्यक्ति प्रवाह को चीरकर अपना रास्ता बनाता है।'' सिद्धान्त की इस दृढ़ता में फिर चाहे उनके सामने भारत विभाजन का प्रश्न हो, या हिन्दुकोड का या गोहत्या बन्दी का या दहेज पर सरकारी नियन्त्रण का या जनेऊ तोड़ो आन्दोलन का या मन्दिर मर्यादा का—स्वामी जी ने सभी पर शास्त्रीय आज्ञा निर्देश करते हुए अपना सिद्धान्त शास्त्रीय पक्ष को ही माना। स्वमति-प्रभव तर्कों से शास्त्रीय सिद्धान्तों पर चोट करने वाले तथाकथित भगवानों, अवतारों, सुधारकों, विद्वानों, पण्डितों, कथावाचकों तथा शोधकर्त्ताओं आदि पर यदि किसी ने निर्भीक होकर लेखनी चलायी है तो स्वामी करपात्री जी उनमें सर्वप्रथम हैं। उनकी इस लेखनी के नीचे फिर चाहे सम्भोग से समाधि की ओर ले जाने वाला रजनीश आया हो, या अधुनातन अवतार आये हों, या गोलवल्कर जी रहे हों, या महापण्डित राहुल सांकृत्यायन भी क्यों न हो, अथवा विदेश यात्रा के पक्षधर पं० माधवाचार्य शास्त्री हों (केवल पं० जी के इस पक्ष पर ही पूज्य स्वामी जी ने असहमति प्रकट की थी शेष पक्षों पर दोनों का अन्योन्याश्रित सम्बन्ध था) या कामिल बुल्के हों—पूज्य स्वामी जी ने सभी को शास्त्रीय पक्ष से अवगत कराया था। विनम्र भाषा किंतु शास्त्रीय पक्ष का प्रबल पोषण उनकी अपनी महती विलक्षणता थी।

स्वामी करपात्री जी के जीवन के विविध पक्षों में जहाँ उनका अद्भुत वैदुष्य, असीम त्याग, असाधारण तप, प्रशंसनीय वैराग्य और सनातन सिद्धान्त पोषण आदि सभी की व्यापक प्रसिद्धि विश्व-विश्रुत है वहीं उनके द्वारा प्रतिपादित सनातन सिद्धान्तों की जानबूझकर अवहेलना करके भारत सरकार द्वारा उनको शान्तिभङ्ग करने के आरोप में जेल की दर्दनाक यातनाएं देना भी किसी को अश्रुत नहीं है। कौन हिन्दु धर्मावलम्बी नहीं जानता कि गोरक्षा के प्रसंग में पूज्य स्वामी जी और उनके अनेक अनुयायियों को तिहाड़ जेल में वर्णनातीत यातनाएं दी गयीं। विश्वस्तसूत्र आज भी भर्राते हुए गले से कह उठते हैं कि उन्हीं दिनों स्वामी जी की एक आँख की ज्योति भी जाती रही, जेल में भगवद्भजन एवं उपदेश में रत श्री करपात्री जी पर लोहे के डंडों से नम्बरी सजा-याफ्ता कैदियों द्वारा अकस्मात भीषण हमला किया गया जिससे स्वामी जी तत्काल बेहोश होकर गिर पड़े कई प्रहार उनके सिर, कमर, हाथ और पैर आदि पर किये गये वह तो एक महात्मा ने उनके शरीर पर गिरकर उन प्रहारों को अपने ऊपर ले लिया अन्यथा स्वामी जी का इस आघात से प्राणांत भी हो सकता था।' अब पाठक तटस्थ होकर विचार करें कि जिस महापुरुष ने अपना सम्पूर्ण जीवन भीषण तपस्या और अश्रुत त्याग

में लगाकर ईमानदारी से राष्ट्र और धर्म की अहर्निश सेवा की हो, जिसने अपनी वाचिक सेवा से लाखों करोड़ों लोगों को स्वधर्म (स्वकर्त्तव्य) का पाठ पढ़ाया हो, जिसने करोड़ों लोगों के अभ्युदय के लिये अपने जीवन के प्रत्येक क्षण को समर्पित कर रखा हो, ऐसे उस दिव्यदेही को जेलों में अमानवीय कष्ट देकर भारत सरकार ने किस कल्याण की कामना की है ? जिस सरकार ने ऐसी दिव्य विभूति को अपने शासनकाल में ऐसे कठोर दण्ड दिये हों वह सरकार फिर अपने अभ्युदय का स्वप्न देखे यह कदापि संभव नहीं।

यद्यपि यह सत्य है कि आसुरी शक्ति का जब-जब शासन रहा है तभी उसने साधु-सन्तों को प्रताड़ित किया है किंतु यह तथ्य भी उल्लेखनीय है कि ऐसे राजाओं का और राज्यों का आज भी पुतला बनाकर फूंका जाता है, स्मरण ओर अनुकरण तो उन्हीं राजाओं और राज्यों का किया जाता है जिनमें वशिष्ठ और विश्वामित्र जैसे सन्तों के सत्परामर्श से ही शासन व्तवस्था चलती हो। राजा दिलीप के राज्य में सुव्यवस्था का और कोई ईति न होने का एकमात्र कारण महर्षि वशिष्ठ का ब्रह्मवर्चस्व ही था—

> **पुरुषायुषजीविन्यो निरातङ्कानिरीतयः ।**
> **यन्मदीयाः प्रजास्तस्य हेतुस्त्वद्ब्रह्मवर्चसम् ॥** रघुवंश, १/६३

आज सम्पूर्ण समाज को यदि समत्व का भाव और पारम्परिक सौहार्द्र का प्रत्यक्ष दर्शन करना है तो उसे भौतिकवाद की आँधी से अपने प्रत्येक घटक को बचाकर, आध्यात्मिक उपायों को मनसा वाचा कर्मणा अपने जीवन में उतारने वाले साधु-सन्तों और महात्माओं के चरणों में जाना होगा, स्वकर्त्तव्य को समझना होगा साथ ही शास्त्रीय सिद्धान्तों में श्रद्धा और विश्वास रखकर उनका यथा-सम्भव पालन करना होगा, तभी इस विषम विषय विश्व में शान्ति सम्भव है। शाश्वत सिद्धान्त है कि चित्र के साथ-साथ चरित्र को भी जिस दिन मानव पूजा करने लगेगा उस दिन उसे निश्चय ही वास्तविक शांति मिलेगी। पूज्यपाद स्वामी करपात्री जी महाराज के प्रति सच्चे श्रद्धासुमन समर्पित इसी शिव संकल्प से करें कि उनके सदुपदेशों का यथासम्भव, यथाशक्ति पालन करें।

बोलो भक्त और भगवान की जय ।
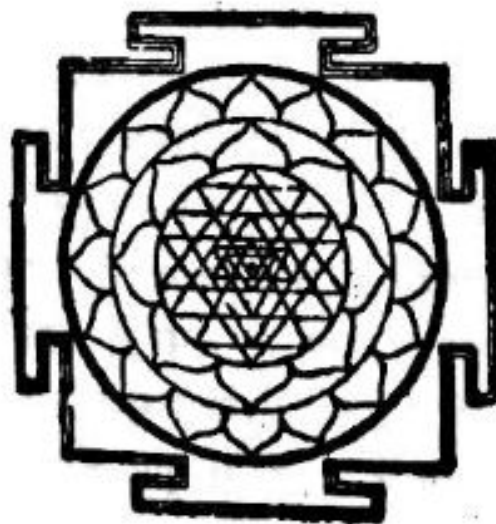
"भगवत्प्रेम से निर्मल एवं एकाग्र मन पर सहज ही में परमात्मस्वरूप की अभिव्यक्ति हो जाती है। प्रापंचिक व्यवहार में आध्यात्मिक, आधिदैविक, आधिभौतिक अनेक तापों से तप्त होना पड़ता है। परन्तु, जिनके हृदय में भगवान् की पदनखमणि-चन्द्रिका की आभा रहती है, उन्हें वे ताप उसी तरह नहीं तपा सकते, जैसे शारदी चान्द्रमसी ज्योत्सना के विकासित होने पर सूर्य-ताप नहीं तपा सकता। जैसे सर्प के विष से परिश्रान्त होकर नकुल विश्रान्ति के लिये अरण्य में जाकर विषघ्नी दिव्य महौषधियों का सेवन करता है, वैसे ही संसार-विष से व्याकुल संसारियों को भी सत्संग में जाकर भगवत्स्मृति का सेवन करना चाहिये।"
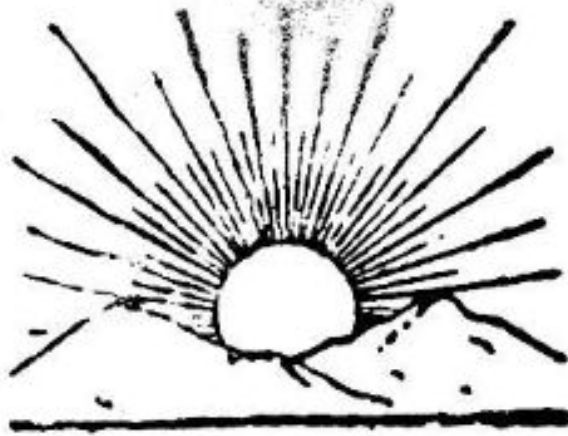
कर्मनिष्ठ तपस्वी, करपात्री स्वामी

— वाणीभूषण राजेन्द्रमोहन कटारा सम्पादक निरावरण-हाथरस।

इस युग में इस वर्तमान समय में प्रायः साधु सन्त महात्मा वैरागी और संन्यासी अपने को संसारी लोगों से कहीं अधिक ऊपर मानते हुये कर्मों से विरक्ति दिखाते हैं और देश, धर्म, समाज के हित का कोई भी कार्य करने में आगे नहीं आते तब निर्विवाद रूप में यह बात स्वीकार करनी पड़ेगी कि ब्रह्मलीन स्वामी श्री करपात्री जी महाराज एक ऐसे संन्यासी हुए जिनका जीवन आरम्भ काल से ही जन-जन के कल्याण में संलग्न रहा। वे यदि चाहते तो न जाने कितनी बड़ी चल और अचल सम्पत्ति अर्जित कर जाते परन्तु बार-बार सिद्धियों के घिराव में आने पर भी निस्पृह निष्कलंक और निरपेक्ष ही बने रहे। मैंने प्रथम बार रामघाट की कुटी पर माघ के कट-कटाते शीत और वर्षा के फुहारों में भी उड़िया बाबा जी के सत्संग में दैनिक नरवर पाठशाला से पधारते और तीन-तीन घण्टे तक एक आसन से केवल एक लंगोटी और कटिवस्त्र धारण किये पाषाणवत बैठे देखा। एक दो दिन नहीं महीनों यही क्रम रहा। मुझ पर उस वीतराग तपस्वी के साधन की गहरी छाप पड़ी और सम्पर्क स्थापित हुआ। बहुत दिनों के पश्चात् एक बार स्वामी जी महाराज आलू वाले बाबा के स्थान पर पधारे और मेरे आग्रह पर जब भिक्षा को आये तो कर ही (हाथ) आपका भोजन पात्र था जल भी अंजुली से ग्रहण करते थे इसीलिये लोग उन्हें करपात्री कहने लगे थे। आगरा में आपके ब्रह्म सम्बन्धी तथा भक्ति परक संयुक्त प्रवचनों ने बड़े से बड़े विद्वानों को मुग्ध कर प्रशंसा करने को विवश कर दिया। मैं उस समय खिलाफत आन्दोलन के प्रभाव में पड़कर भारत के स्वतन्त्रता संग्राम में कार्यरत था तभी स्वामी जी महाराज को भी स्वतन्त्रता के सम्बन्ध में अभिमत पाया और जब उनसे बातें हुई तो उन्होंने कहा कि जहाँ अन्य प्रकार के उपाय किये जा रहे हैं वहाँ परमपिता परमात्मा से भी स्वतन्त्रता के लिये अनुष्ठान उपासना आराधना द्वारा शक्ति प्राप्ति करने में हम प्रयत्नशील हैं। यद्यपि वे ब्रह्मविद् वरिष्ठ थे इसमें सन्देह नहीं परन्तु नारद विश्वामित्र और समर्थ रामदास की भाँति अधार्मिकता को भी समाप्त करने का दृढ़ निश्चय किये हुये थे जिसे देश और विदेश के अधिकांश लोगों ने देखा और जाना। मार्क्सवाद और रामराज्य' तथा अन्य अनेक ग्रन्थ लिखकर तथा अपने व्यक्तिगत धार्मिक कार्यक्रमों को चलाते हुये राजनीतिक क्षेत्र में भी अनवरत प्रयत्नशील रहे। गोरक्षा तथा भारत में रामराज्य की स्थापना के लिये जो कार्य महाराज श्री ने किया वह इतिहास के पृष्ठों में सदैव स्मरण किया जाता रहेगा। शंकराचार्य जैसे धर्म गुरु का पद भी आप कर्त्तृत्त्व के आगे अधिक नहीं मानते थे। महाराज श्री की आभा प्रतिभा मेधवपन तथा सनातन धर्म की कट्टरता एवं उत्कृष्ट साधन किसी से छिपे नहीं हैं। आपने धार्मिक, सामाजिक, राजनीतिक तथा आर्थिक परिस्थितियों के सम्बन्ध में समय-समय पर जो भी भविष्यवाणियाँ कीं वे सभी की सभी यथा समय सही उतरती रहीं।

एक बार नहीं अनेक बार कई एक देश के बड़े नेताओं से जिनका नामोल्लेख उचित नहीं,

पूछा कि गोरक्षा एवं रामराज्य के सम्बन्ध में पूज्य स्वामी करपात्री जी की माँग का मिलकर समाधान क्यों नहीं कर लिया जाता तो उनका स्पष्ट उत्तर था कि स्वामी जी के पास ऐसी सिद्धि है कि सामने पहुँचने पर व्यक्तियों के विचार ही बदल जाते हैं और देश में धर्म-निरपेक्षता का जो वातावरण बनाया गया है उनके तर्कों और दलीलों के आगे टिक न सकेगा। इसलिये सरकार के बड़े लोगों ने उनके सामने न जाने का ही निश्चय कर रखा है। जिसका प्रमाण श्री गुलजारीलाल जी नन्दा अभी विद्यमान हैं। किसी भी विषय के शास्त्रार्थ में अपना पक्ष जिस दृढ़ता से आप रखते थे वह वास्तव में देखते ही बनता था। धार्मिक मर्यादाओं और भारतीय संस्कृति के विरुद्ध कोई और किसी की कैसी भी बात सुनना उन्हें भाता नहीं था। प्रत्येक स्थिति और प्रत्येक काल में शास्त्र को ही प्रमाण मानना उन्हें अभीष्ट था। इससे अधिक और क्या हो सकता है। एक बार तिलकराम के अहाता में एक सम्मेलन में ब्रह्मलीन ज्योतिष्पीठाधीश्वर जगद्गुरु शंकराचार्य स्वामी कृष्णबोध आश्रम जी महाराज ने कहा था कि 'करपात्री स्वामी साक्षात् शंकर के अवतार हैं और इनकी बात न मानने पर जनता तथा देश का हित नहीं हो सकता। कई बार लोगों के द्वारा यह कहे जाने पर कि निरावरण नाम बदल दिया जाये महाराज श्री ने स्वीकार नहीं किया और बहुतों के समक्ष अपना आशीर्वाद देते हुये स्पष्ट कहा कि कटारा जी को हमारी अन्तः प्रेरणा प्राप्त है और वास्तविकता यह है कि वे ईश्वर की भाँति हम सबके सदा साथ हैं। □□

भविष्य द्रष्टा महापुरुष

—परमविदुषी ऋषि कन्या सुश्री चित्रा देवी शर्मा, बहादुरगढ़, (हरियाणा)

'भारतीय वैदिक संस्कृति का प्रबल पोषक, मध्यकालीन मार्तण्ड बिना अवसर के ही अस्त हो गया। शिवलोकवासी अमर-सेनानी धर्मावतार श्री करपात्री जी महाराज के भौतिक संघात से यद्यपि हमारा वियोग हो गया है तथापि चिदानन्दमय एवं यशस्वी देह से वे अनन्तकाल के लिये अमर हो गये हैं। स्थान स्थान पर शोक सभाएँ हुयी और हो रही हैं। मुझे भी सभा के लिये कहा गया। किन्तु मेरे लिये तो यह असमंजस उपस्थित हो गया, कारण कि—

"सोचिय गृही जो मोह बस, करै कर्म पथ त्याग।
सोचिय यति प्रपंच रत, विगत विवेक बिराग॥"

शोक सभाएँ वे करें जिन्होंने महाराज जी के विचारों का समर्थन न किया हो अथवा जिनकी आँखों से वह महापुरुष ओझल हो गये हों। मैंने तो सन् १९३६ में हरिद्वार में भविष्य द्रष्टा इस महा-

पुरुष का प्रथम प्रवचन सुना था। उसी दिन से अपना तन, मन, धन इस उपदेष्टा के मूलभूत विचारों के अनुसार कार्यों में अर्पण कर दिया। फिर शोक क्यों ?

मेरी आँखों से यह महापुरुष ओझल भी नहीं हुये। कारण, कि 'भक्ति सुधा', के तीनों भाग, 'विचार पीयूष', 'वेदार्थ-पारिजात', 'मार्क्सवाद और रामराज्य', 'पूंजीवाद-समाजवाद और रामराज्य', तथा 'रामायण मीमासा'—जैसे ग्रंथों के रूप में, जब तक मैं रहूँगी, वे साहित्य लोकालोक के दिव्य पुरुष मेरे सम्मुख ही रहेंगे। फिर शोक क्यों ?

'लोकेऽस्मिन्द्विधा निष्ठा पुरा प्रोक्ता मयानघ।'

शास्त्र सम्मत इन दोनों निष्ठाओं का इस लोक संग्रही महात्मा ने पूर्णतया पालन किया। "द्वाविमौ पुरुषौ लोके सूर्यमण्डलभेदिनौ' आजन्म धर्म कार्यरत इस महात्मा का मेरे हृदय पर वैसा ही प्रभाव रहा है जैसा कि धर्म-शास्त्रों ने धर्म रक्षक का कहा है। फिर शोक क्यों ? कार्य विशेष के द्वारा ही सत्पुरुष अपने आप को प्रगट करते हैं। स्वामी करपात्री जी के कार्यों में विश्व कल्याण की सद्भावना निहित है।

'पर उपकार बचन मन काया। संत सहज सुभाव खगराया॥'

ज्ञान-वैराग्य-निधि, अनुपम प्रतिभा सम्पन्न यह महात्मा प्रस्थान से पूर्व ही भारतीय धर्म-धरा पर अपना कीर्त्ति-स्तम्भ स्थापित कर चुके थे।'

—०"श्री करपात्री – कीर्त्ति —स्तम्भ"०—

हे जगद्गुरु श्री पाणिपात्र, हे श्रुति विवस के सूर्य प्रचण्ड।
हे वसुधा-भूषण गतत्रिदूषण, चिदानन्दघन बोध अखण्ड॥
हे श्रुतिपथपालक, कलिकुलघालक, अरिदलशालक शान्तमना।
हे स्वम्भु अंशक धर्म प्रशंसक, दम्भ, दम्भ प्रध्वंसक तपोधना॥
ऋषिवन्दित भारत वसुधा पै, जब मोह पटल विस्तार हुआ।
तब दिव्यज्ञान आलोक लिये, 'श्रीचरणों' का अवतार हुआ॥
धर्म की जय हो अधर्मनाश, यह 'रामवाण' जय घोष लिये।
पुनः धर्मयुद्ध में कूद पड़े, सब सुरों ने जय जयकार किये॥
कहीं अद्वैत-ज्ञान कहीं कर्मकाण्ड, कहीं विधि उपासन वर्णन की।
कहीं वर्ण-धर्म उपदेष्टा बन, शोभा दरशायी नरतन की॥
कहीं 'धर्मसंघ' संस्थापन कर, कहीं 'महिलासंघ' बनाया है।
कहीं रामराज्य जयघोष किये, धर्मध्वज नभ में फहराया है॥
कहीं वेदशास्त्र सम्मेलन करः कहीं शास्त्रार्थ रचाया है।
कहीं ज्योतिष जल पै काई को, प्रयत्न से दूर हटाया है॥

कहीं ब्रह्म कुमारियाँ बादल बन, सूरज को ढकने आती हैं।
दो वचन पावन की रचना में, वे अपना पता न पाती हैं॥
शिष्य संग अनेक लिये, जब पोपपाल चढ़ि आया है।
तब शास्त्रार्थ की घोषणा में निज सिंगीनाद बजाया है॥
हे धर्मवीर ! हे कर्मवीर ! जग में कीन्हा उजियारा है।
भौतिक बादल भेदन में, अद्‌भुत प्रयास तुम्हारा है॥
'श्रुति पथ' रघुवर अनुगामी, था कर्त्तव्य कर्म से काम तुम्हें।
तुम स्वयं भू हो या वृहस्पति हो, क्या कहूं अभिनन्दन में ?
मैं 'चित्रा' अकिंचन धन्य हुई, श्री चरण कमल रज वन्दन में॥

महाराज श्री के कीर्त्तिस्तम्भ पर मेरे ये भाव सुमन समर्पित हैं। आशा है मेरी यह श्रद्धाञ्जलि उस दिवंगत दिव्य पुरुष को अवश्य ही स्वीकृत होगी।

□□

ब्रह्मलीन अनन्त श्री स्वामी करपात्री जी महाराज साक्षात्भगवतावतार

—लेखक—पं० गोवर्धननाथ मिश्रः सदस्य
केन्द्रीय धर्मसंघ एवं रामराज्य परिषद, अध्यक्ष पण्डित परिषद हाथरस।

नमस्तस्मै, मुनीन्द्राय, कुर्म हे करपात्रिणे।
येषां वेद भाष्येण, चकास्ति सकलं जगत्॥
सनातनस्य धर्मस्य, सत्सिद्धान्त प्रचारकाः।
ब्रह्मलीनाः स्वामिपादाः श्रीमन्तः करपात्रिणः॥

धर्म सम्राट् यतिचक्र चूड़ामणि अनन्त श्री विभूषित प्रातः स्मरणीय परमाराध्य गुरुदेव स्वामी करपात्री जी महाराज साक्षातभगवतावतार थे। सन् १९३२ में पूज्य श्री स्वामी जी महाराज विचरते हुये हाथरस नगर में स्वर्गीय पं० शिव लाल गौड़ के आश्रम पर पधारे। उस समय हाथरस नगर को दूसरी काशी कहते थे। जिस समय पूज्य स्वामी जी महाराज ने यहाँ के विद्वानों के मध्य श्रीमद्भागवत प्रवचन किया, उस समय समस्त विद्वान मण्डल तेजस्वी वीतराग निर्भीक संन्यासी की अलौकिक प्रतिभा देखकर अवाक रह गया तथा उस समय पूज्य महाराज श्री की भाषा इस प्रकार थी
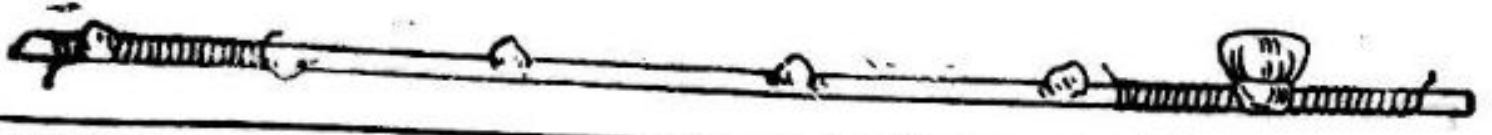
"जिस प्रकार माया ब्रह्म के संश्लेषजन्य अन्योन्याश्रय की अविच्छिन्न शक्यता के सम्बन्धाकर्ष और समवायी कारण से हेतु हेतु महं भू तत्व का आविर्भाव होता है, उसी प्रकार रेल की सवारी में स्थावर चीजें जंगम प्रतीत होती हैं।" पुनः महाराज श्री सन् १६३६ में श्रीकृष्ण, ब्रह्मचर्याश्रम पर पधारे, उस समय श्रीमद्भागवत के एकादश स्कंध पर--"कोनु राजन्निन्द्रिय वान मुकन्द चरणाम्बुजम् ।" की व्याख्या निरन्तर दो सप्ताह तक बोलने पर भी पूर्ण न हो सकी। यह देखकर समस्त विद्वान कहने लगे कि यह संन्यासी तो साक्षात् शुकावतार है।

एक बार वृन्दावन धाम में ब्रह्मीभूत पूज्यपाद स्वामी श्री उड़िया बाबा के आश्रम का निर्माण हो रहा था, उस समय पूज्य श्री चरण भी स्वामीरामदेव जी महाराज के साथ वृन्दावनधाम में मिर्जापुर वाली धर्मशाला में वेणुगीत पर 'नद्यस्तदातदुपधार्य मुकुन्द गीत, मावर्त लक्षित मनोभव मग्नवेगाः।' को तन्मय होकर व्याख्या कर रहे थे। सौभाग्य से मैं भी वहाँ पहुंच गया। उस पीयूष वर्षा के समय व्रज मण्डल के बड़े-बड़े सम्प्रदायाचार्य कहने लगे कि श्रीमद्भागवत हमारी निधि है। यह संन्यासी इस प्रकार के भाव कहाँ से इस प्रकार विलक्षण ढंग से प्रवचन कर रहा है। इसी श्लोक पर महाराज श्री निरन्तर चिरकाल तक बोलते रहे।

जिस समय भारतीय संसद भवन में मन्दिर प्रवेशादि बिलों द्वारा सनातन धर्म पर कुठाराघात होना प्रारम्भ हुआ, उस समय पूज्य स्वामी श्री करपात्री जी महाराज ने भारत के विद्वानों व सनातनियों को साथ लेकर सन् १६४० ई० विजयादशमी के शुभ दिन 'धर्म संघ' की स्थापना की थी, उस समय पराम्बा की कृपा से चार जय घोष प्राप्त हुये "धर्म की जय हो, अधर्म का नाश हो, प्राणियों में सद्भावना हो, विश्व का कल्याण हो"।

वीतराग तपोमूर्ति समस्त शास्त्र पारंगत विद्वान महात्मा पूज्य श्री स्वामी कृष्णबोधाश्रम जी महाराज जो आगे चलकर ज्योतिष्पीठाधीश्वर जगद्गुरु शंकराचार्य के रूप में विराजमान हुये, जिनकी मेरे ऊपर पुत्रवत् असीम कृपा रही तथा मेरी हठ को कभी नहीं टाला – उन साक्षात् नारायण स्वरूप को साथ लेकर अखिल भारतीय धर्म संघ का प्रचार प्रसार किया तथा उन्हीं महापुरुष के सक्रिय सहयोग से अ० भा० धर्म संघ के तृतीय महाधिवेशन पर भारत की राजधानी देहली में शतमुख कोटि होमात्मक महायज्ञ किया जो पाण्डवों के यज्ञ के पश्चात् इस युग में प्रथम यज्ञ था। यह महायज्ञ ३० जनवरी से ६ फरवरी सन् १६४४ ई० तक हुआ जिसमें समस्त भारत के मूर्धन्य विद्वानों ने भाग लिया। इस यज्ञ के यजमान तपोमूर्ति पं० जीवनदत्त जी महाराज नरवर तथा यज्ञाचार्य महोपाध्याय श्रीधर शास्त्री वारे नासिक थे। इस महायज्ञ में अनन्त श्री स्वामी कृष्ण बोधाश्रम जी की कृपा से ५१ वें कुण्ड पर मुझे भी सौभाग्य मिला। धर्म सम्राट् श्री स्वामी जी महाराज को यज्ञ युग प्रवर्तक कहा जाने लगा। कानपुर, काशी, बम्बई, उदयपुर, मेरठ, हाथरस आदि अनेक स्थानों पर श्री चरणों की कृपा से यज्ञ हुये तथा अ० भा० धर्म संघ का प्रचार प्रसार तीव्र गति से हुआ। १५ अगस्त सन् ४७ में जब भारत स्वतन्त्र हुआ तब अनेकों धर्म विरोधी बिल सरकार की ओर से लोक सभा में पारित होने आये, उस समय पूज्य महाराज ने हिन्दू समाज के सभी कर्णधारों एवं राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के संघ

संचालक श्री गुरु गोलवलकर जी को बुलाकर कहा कि 'हिन्दू धर्म की रक्षार्थ कोई राजनीतिक संस्था को जन्म देकर धर्म विरोधी बिलों का विरोध किया जाये।' उस समय श्री गुरु जी ने कहा कि हम तो राजनीति को चीमटे से भी नहीं छूवेंगे। तदनन्तर भारत हृदय सम्राट् स्वामी श्री करपात्री जी महाराज ने अखिल भारतीय रामराज्य परिषद नामक संस्था को जन्म दिया और सन् १९५० में अ० भा० रामराज्य परिषद का प्रथम अधिवेशन राजस्थान के जयपुर नगर में सम्पन्न हुआ।

जब भारत के प्रधान मन्त्री श्री जवाहरलाल नेहरू तथा मिस्टर जिन्ना भारत माँ की दायीं बायीं भुजा को काटकर हिन्दुस्तान-पाकिस्तान बना रहे थे, तब भारत माँ के वीर सपूत श्री स्वामी जी ने धर्म रक्षार्थ अखिल भारतीय धर्म संघ को ओर से सत्याग्रह का बिगुल बजा दिया। लाखों वीरों ने दिल्ली में सत्याग्रह प्रारम्भ कर दिया। चूँकि हांथरस में तो पूज्य श्री चरण ने धर्मसंघ की स्थापना सन् १९४२ में ही कर दी थी अतः सत्याग्रहियों को बुलाने के लिये मेरठ से धर्मसंघ के नेता आयुर्वेदाचार्य पं० श्याम सुन्दर जी बाजपेयी व हिन्दू नेता श्री गंगाधर जी तिवारी जब हाथरस पधारे तब यह शरीर धर्मवीरों के जत्थे के साथ दिल्ली चल पड़ा ? देहली धर्म संघ भवन से धर्मवीरों का जत्था लेकर संसद के द्वार पर जयघोषों के साथ भारत अखण्ड हो, मन्दिरों की मर्यादा सुरक्षित हो, शासन विधान शास्त्रीय हो आदि नारे लगाये जा रहे थे उसी समय भारी पुलिस फोर्स द्वारा गिरफ्तार कर जेल भेज दिये गये। तब मथुरा के पं० लक्ष्मणदत्त जी गोस्वामी एवं श्री कृष्णानन्द सरस्वतो जी जेल में ही अमर शहीद हो गये। एक बार नहीं अनेकों बार यह शरीर जब-जब धर्मसंघ, रामराज्य परिषद, अखिल भारतीय गोरक्षा महाभियान समिति की ओर से सम्पूर्ण गोवधबन्दी आन्दोलन में दिल्ली, पटियाला आदि जेलों में पूज्य महाराज श्री के आदेशानुसार कर्त्तव्य पालन करता रहा है।

अखिल भारतीय रामराज्य परिषद के प्रचार हेतु ब्रह्मलीन वीतराग अनन्त श्री स्वामी कृष्णबोधाश्रम जी महाराज ने समस्त भारत में पूज्य श्री चरण के साथ परिषद की शाखाएँ नगर-नगर ग्राम-ग्राम में जाकर स्थापित कीं।

समस्त राजनीति शास्त्र पारंगत श्री स्वामी करपात्री जी महाराज जब वृन्दावन कुम्भ के सुअवसर पर पधारे तब मैंने वृन्दावन में श्री चरण से रामराज्य परिषद की शाखा हाथरस में स्थापित करने को प्रार्थना की तो महाराज श्री ने दूसरे ही दिन सन् १९५१ में स्वयं हाथरस पधार कर रामराज्य परिषद की स्थापना की तदनन्तर तपोमूर्ति अनन्त श्री स्वामी कृष्ण बोधाश्रम जी महाराज के आदेशानुसार सन् १९५२ के आम निर्वाचन में परिषद प्रत्याशी श्री पं० राजेन्द्र मोहन कटारा को चुनाव लड़ाया।

सन् १९५७ के आम निर्वाचन में पूज्यपाद श्री स्वामी जी ने विधान सभा के लिये स्वयं मुझे परिषद प्रत्याशी बनाकर खड़ा किया तथा मुझे साथ लेकर मेरे चुनाव क्षेत्र का दौरा किया।

श्री चरण की कृपा से सन् ५२ से सम्प्रति नगर पालिका हाथरस पर रामराज्य परिषद का अधिकार रहा। पालिका सदस्यों के अतिरिक्त पालिकाध्यक्ष पद पर श्री हुकमचन्द्र ओसवाल रहे।

एक बार पुनः निर्वाचन में रामराज्य परिषद प्रत्याशी पं० राधा रमण ज्यो० शास्त्री प्रबल प्रतिद्वन्दी सेठ लखमीचन्द्र गुड़िया को प्रचण्ड मत से पराजित कर विजयी हुये।

ब्रह्मलीन अनन्त श्री स्वामी करपात्री जी महाराज ने अनेक बार कहा कि रामराज्य परिषद का अधिक अधिकार हाथरस नगर पालिका पर दीखता रहा। गत निर्वाचन में भी परिषद समर्थित सज्जन विधान सभा चुनाव में विजयी होकर उत्तर प्रदेश विधान सभा की शोभा बढ़ा रहे हैं।

धर्म सम्राट् महाराज श्री के तत्वावधान में नगर हाथरस के बागला कालेज मैदान में अखिल भारतीय रामराज्य परिषद का अष्टम महाधिवेशन दिनांक २३ फरवरी से ५ मार्च १६५८ ई० तक तरुण तपस्वी श्री स्वामी स्वरूपानन्द जी सरस्वती महाराज की अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ, जो आज ज्योतिष्पीठ एवं द्वारिका शारदापीठ पर जगद्गुरु जी के रूप में आसीन हैं। उक्त महाधिवेशन में ब्रह्मलीन शंकराचार्य श्री स्वामी कृष्ण बोधाश्रम जी महाराज, विदिशापीठाधीश्वर श्री स्वामी आत्म-देवाश्रम जी, पूज्य श्री स्वामी परमानन्द जी सरस्वती, महामहोपाध्याय पं० गिरधर शर्मा चतुर्वेदी, शास्त्रार्थ महारथी पं० माधवाचार्य जी, प्रकाण्ड सुप्रसिद्ध विद्वान डा० प्रतिवाद भयंकर जी, मन्त्री स्वामी नरोत्तमाश्रम जी महाराज, परम विदुषी राजकुमारी श्री प्रभावती जी राजे, ऋषि कन्या श्री मती चित्रादेवी जी आदि के अतिरिक्त अनेक विद्वान महात्मा सन्त, महन्त, विदुषियाँ तथा भारत के प्रत्येक प्रान्तों के प्रतिनिधियों ने इस विशाल आयोजन में उपस्थित होकर हमारे गौरव को बढ़ाया। रामराज्य महाधिवेशन के साथ अष्टोत्तरशत श्रीमद् भागवत सप्ताह व महायज्ञ को काशी, वृन्दावन, मथुरा, देहली आदि व स्थानीय विद्वानों ने सम्पन्न कराया। अखिल भारतीय रामराज्य परिषद के महा-मन्त्री पद को पं० नन्दलाल जी शास्त्री एम० ए० एल० एल० बी० भूतपूर्व सांसद सम्प्रति अनन्त श्री स्वामी नन्दनन्दनानन्द जी सरस्वती जी (शास्त्री स्वामी जी) महाराज सुशोभित कर रहे थे। हमारी क्या सामर्थ थी यह तो पूज्य श्री चरण एवं तपोमूर्ति जगद्गुरु जी की महती कृपा एवं आशीर्वाद से ही सम्पन्न हुआ।

ब्रह्मलीन धर्म सम्राट् श्री स्वामी जी महाराज प्रायः प्रतिवर्ष ही हाथरस पधारने की कृपा करते थे। वह देहली से काशी या काशी से देहली जाते-आते समय चौबे वाले महादेव एतिहासिक स्थल पर गाड़ी खड़ी कराकर मेरे समीप किसी ब्रह्मचारी के द्वारा सूचना पहुंचा देते, मेरे उनके पास पहुंचने पर प्रसन्न मुद्रा में कहते थे कि 'मन्त्री जी सभा का प्रबन्ध कहाँ करना है ?'

परमाराध्य गुरुदेव श्री स्वामी जी महाराज ने स्वयं मुझे श्री विद्या की दीक्षा से दीक्षित किया है। महाराज श्री की असीम अनुकम्पा का हम वर्णन कहाँ तक करें। वह हाथरस नगरी के विद्वानों, धार्मिक जनों को अपने अमृतोपदेश के द्वारा कथा सुधामृत पान कराकर कृतार्थ करते थे।

अखिल कोटि ब्रह्माण्ड नायक परात्परपूर्ण पुरुषोत्तम प्रभु महाराज श्री के अनुयायी वर्ग को सद्बुद्धि प्रदान करें कि पूज्य श्री चरण के बताये हुये मार्ग का अनुसरण करें तथा उनके शेष संकल्प को पूरा करें। ●●

श्री विद्या शक्ति के अनन्य उपासक

श्री करपात्री जी की दिनचर्या

—श्री जगन्नाथ स्वामी एवं रामावतार कौशिक (दीक्षानाम लक्ष्मणानन्दनाथ)
शाहदरा, दिल्ली।

महाराज श्री रात के एक बजे जग जाते थे। शौच, दन्तधावन, स्नान आदि से निवृत्त होकर दो बजे साधना में बैठ जाते थे और ४ बजे तक प्रातः स्मरण, रश्मिमाला, महाषोडशी जप आदि करते थे। ठीक ४ बजे प्रातः भ्रमण पर चल पड़ते, रास्ते में वांछाकल्प-लता पाठ की ४ आवृत्ति करते थे। फिर चण्डीपाठ चालू कर देते और ६ बजे अपने निवास स्थल पर पहुंच जाते तथा शेष चण्डीपाठ को सम्पूर्ण करते। तब तक सेवारत ब्रह्मचारी महाराज जी की श्री विद्या पूजा को भली भाँति टेबल पर लगाकर तैयार कर देता। ७ बजे महाराज जी श्री विद्या की पूजा में बैठ जाते और साढ़े नौ बजे तक सम्पूर्ण श्रीविद्या सांगोंपांग कर लेते थे, खंगमाला, त्रिशतीं एवं ललितासहस्रनाम सहित। साढ़े नौ बजे के बाद योगासन और सूर्य नमस्कार करने लग जाते थे। साढ़े दस बजे तक इसे पूर्ण करके १२ बजे तक भाष्य लिखते थे अथवा विद्यार्थियों विद्वानों को शास्त्र अध्ययन कराते थे। बारह एक बजे तक स्नान कर श्रीविद्या की पंचोपचार पूजा करते थे। एक बजे दरवाजा बन्द करके साढ़े चार बजे तक भाष्य लिखते थे। ४।।-५ बजे तक पुनः आसन करते थे। पांच बजे भिक्षा करने बैठते और स्वाद का त्याग करके १५ मिनट में भिक्षा पूरी कर लेते जो (नमक, मिर्च, खटाई का त्याग कर उदर पूर्ति हेतु होती थी।) सवा पांच बजे से महाराज श्री पुस्तक पढ़ने बैठ जाते थे। यदि कोई मिलने आता और स्वयं कुछ पूछता तो उत्तर देते थे साढ़े सात बजे तक। बस यही दो घन्टे महाराज श्री के दर्शन हेतु भक्तों के लिए होते थे। दिन छिपने के बाद महाराज श्री शिव महिम्न स्तोत्र, शिव कवच, मानस स्तोत्र, उपमन्यु स्तोत्र एवं विष्णु सहस्रनाम का पाठ करते थे। बीच-बीच में लोगों के प्रश्नों का समाधान भी करते थे साढ़े सात बजे तक। साढ़े सात बजे स्नान करके आठ बजे से रुद्राभिषेक, पुरुष सूक्त, श्रीसूक्त (लक्ष्मी सूक्त सहित), अभिषेक गणपति, अथर्वशीर्ष अभिषेक करते और साढ़े नौ बजे बिस्तर पर लेट जाते। दस बजे तक गहरी निद्रा में सो जाते थे। तकिये पर सिर रखते ही कुछ मिनटों में गहरी नींद आ जाती थी।

यह थी महाराज श्री की दिनचर्या रात एक बजे से रात दस बजे तक पूरे २१ घन्टे तक महाराज लगातार साधना में लगे रहते थे। नवरात्रों में विशेष पूजा चलती थी। दुर्गा संपुट पाठ करते थे। विस्तृत श्रीविद्या पूजा करते थे लगातार १२ बजे मध्याह्न तक एक कन्या और सुवासिनी की पूजा करके उसे वस्त्र और दक्षिणा देते थे।

महाराज जी पूर्ण सिद्ध थे—आठों सिद्धियां उनके पास थीं—महाराज जी महा त्रिपुर सुन्दरी स्वरूपा थे।

युग प्रवर्तक स्वामी करपात्री जी महाराज

—रामचन्द्र शर्मा, शास्त्री
एम० ए०, साहित्यरत्न, साहित्याचार्य

मुझे स्मरण है, मैं छठी कक्षा में पढ़ता था मेरे पूज्य बाबा तथा ब्रह्मलीन स्वामी श्री भगवानाश्रम जी महाराज सायंकाल तखत पर बैठकर भजन की प्रतियोगिता किया करते थे। हम कौतूहलवश देखा करते थे कि कौन देर तक बैठें। घण्टों ही यह क्रम चलता। हमारे कुआँ तथा चक पर उनकी कुटी बनवा दी थी। एक दिन मेरे पूज्य पिता जी तथा ताऊ जी बात कर रहे थे कि ब्राह्मण को सिवा दण्डी संन्यासी के किसी के चरण स्पर्श नहीं करने चाहिए, वे ही ब्राह्मणों के गुरु होते हैं तथा सबसे बड़े तपस्वी संन्यासी श्री करपात्री जी महाराज हैं। पात्र भी कोई नहीं रखते, बस हाथ ही उनका पात्र है। बस उनके दर्शन करने की इच्छा बालक हृदय में जम गयी। दिल्ली के प्रसिद्ध ऐतिहासिक शतमुख कोटि होमात्मक यज्ञ में उनका प्रथम दर्शन हुआ। तत्कालीन जगद्गुरु शंकराचार्य ज्योतिष्पीठाधीश्वर स्वामी श्री ब्रह्मानन्द सरस्वती जी महाराज तथा स्वामी श्री कृष्णबोधाश्रम जी महाराज तथा अन्य महात्माओं के दर्शन भी हुए।

धर्मसंघ की स्थापना होने के बाद प्रायः आना जाना भी हुआ। अभी धर्मसम्राट स्वामी श्री करपात्री जी महाराज युवा ही थे कि उन्हें अनेक आन्दोलनों का संचालन करना पड़ गया। भारत की स्वतन्त्रता के साथ-साथ देश के टुकड़े करने की बात भी जोड़ी गयी। आज की पीढ़ी कहती है कि उस समय कैसे लोग थे जिन्होंने भारतमाता के टुकड़े करवा दिये और स्वयं नेता बने रहे। सत्य यह है कि उस समय अनेक नेताओं ने खण्डित स्वतन्त्रता का विरोध किया, स्वातन्त्र्यवीर सावरकर डा० श्यामा प्रसाद मुखर्जी, राजर्षि पुरुषोत्तमदास टण्डन, श्री जय प्रकाश नारायण आदि सभी ने विरोध किया परन्तु सबका विरोध मौखिक ही रहा यह देश का दुर्भाग्य था कुछ नेता लोग तो स्वतन्त्रता देने के अंग्रेजों के वचन को मात्र बहकावा ही जान रहे थे। उन्होंने १५ अगस्त सन १९४७ को अनेक स्थानों में दूर पार्कों बागों में सामूहिक कार्यक्रम रखे और भाषणों में कहा कि लंका विजय के पश्चात भालू बन्दरों ने सूपनखा को देखा और प्रसन्नता से चिल्ला पड़े कि सीता जी आ रही हैं, उन्हें पता ही नहीं था कि सीता जी कैसी हैं। ठीक इसी प्रकार स्वतन्त्रता प्राप्ति का बहकावा है। हाँ यह तरुण तपस्वी उस समय प्रबल आन्दोलन चला रहा था, यदि अन्य नेताओं का सक्रिय सहयोग इन महाराज श्री करपात्री जी को मिला होता तो शायद आज ये बुरे दिन न देखने पड़ते और सम्भवतः भारत के टुकड़े न हुए होते।

धर्म सम्राट स्वामी श्री करपात्री जी महाराज शास्त्रीय मर्यादाओं के प्रति अनन्यनिष्ठ थे। इस कारण वह सिद्धांत पर किसी प्रकार का समझौता नहीं करते थे। प्रत्येक विषय पर चाहे वह

शास्त्रीय हो अथवा राजनैतिक, उनका चिंतन मौलिक था और विषय निरूपिणी शैली विलक्षण। धर्म,
राजनीति, दर्शन एवं भारतीयता का जितनी गहनता से उन्होंने अध्ययन किया है उस गहराई तक प्रायः
कोई भी विचारक नहीं पहुंच पाया। जिस निष्ठा से तपस्यापूर्वक धर्म के सूक्ष्म सिद्धांतों का इन्होंने
साक्षात्कार किया वह सर्वथा विलक्षण है। मंच पर घण्टा आध घन्टा प्रभावशाली भाषण कर विद्वान
कहलाना और बात है परन्तु समस्त विश्व के विचारकों मनीषियों को शास्त्रार्थ के लिये आमन्त्रित
कर मञ्च पर तर्क द्वारा अपने वेद शास्त्रों के मत की स्थापना करना तथा विद्वानों को निरुत्तर कर
देना सर्वथा अलग बात है। यह शक्ति केवल महाराज श्री करपात्री जी ही में थी। सिद्धांत के इतने
कट्टर होते हुये भी व्यवहार में अत्यन्त सरल थे बालक का सा स्वभाव।

संस्मरण – सर्वविदित है कि महाराज श्री हर समय शास्त्र चिंतन में अथवा लिखने में व्यस्त रहते थे। मैं
सरकारी काम से वाराणसी गया था, पूज्य जगद्गुरु जी महाराज ने आदेश कर दिया था कि धर्मसंघ में
ही ठहरना। मैं नारद घाट पहुंचा तो ज्ञात हुआ कि महाराज जी किसी से मिलते नहीं आजकल, किसी
व्रत के लिये तैयारी कर रहे हैं। वह शायद ४० दिन कल्प करने का उपक्रम था। स्थानीय सेवको के
साथ ही मैं पूज्य गङ्गाशङ्कर जी मिश्र के पास से उठकर ऊपर चला गया। श्री करपात्री जी महाराज
विराजमान थे, सब मौन थे। कुछ देर बाद मुझसे सीधा प्रश्न किया कि दिल्ली से आ रहे हो, महाराज
कहाँ हैं आजकल ? मैंने उत्तर दिया कि महाराज श्री जगद्गुरु जो आजकल मेरठ के गाँवों में भ्रमण
कर रहे हैं, शायद पुरा में हैं। इतने नियम के होते हुये भी मुझ अकिंचन से सीधा प्रश्न किया, यह देख
कर सब मेरी ओर देख रहे थे। मेरे कार्य के विषय में भी पूछा कि कितने दिन निरीक्षण करना है और
मेरे निवास आदि के लिये भी श्री नारायण ब्रह्मचारी से पूछा।

गोरक्षा के लिये सत्याग्रह में तिहाड़ जेल में थे। श्रीमद्भागवत की पीयूष वर्षिणी कथा जेल
में भी होती थी। कथा बाँचते हुये ही लोहे की सरियों से आक्रमण कर दिया गया। भक्तों ने उनके
आस-पास लेट कर बचाव किया परन्तु फिर भी भयंकर चोटें लगीं। सिर तथा आँखों में भी गम्भीर
चोट लगी। जेल से छूटने पर उन्हें उनके अनन्य भक्त श्री जुगल किशोर डङ्ग अपने निवास स्थान पर
ले गये। उपचार हो रहा था, धीरे-धीरे स्वास्थ्य लाभ भी। मैं भिक्षा लेकर पहुंच गया। हाथ की चक्की
के पिसे आटे में दूसरा आटा मिला कर ले गया था। महाराज जी को प्रणाम करके बैठना ही चाहता
था कि थैला उन्हें दिखाई दे गया। अपने ब्रह्मचारी को आवाज दी जोर से और बोले, अरे जल्दी चलो,
ब्राह्मण की भिक्षा आयी है, संभालो। सब पदार्थ वहाँ सुलभ होते हुये सभी बड़े आदमियों की उप-
स्थिति में मेरी साधारण सामग्री को इतने आदर से स्वीकार करना, यह सर्वथा अप्रत्याशित बात थी।
जो व्यक्ति जी जान से सेवा कर रहे हैं संकेत मात्र पर सर्वस्व निछावर करने को तत्पर है उनके सामने
इस भिक्षा को यह सम्मान दिया। यह दरबार दीन को आदर।

मैं छोटे मुँह बड़ी बात नहीं कह सकता। इसी कारण इन युग पुरुष के विषय में अपनी ओर
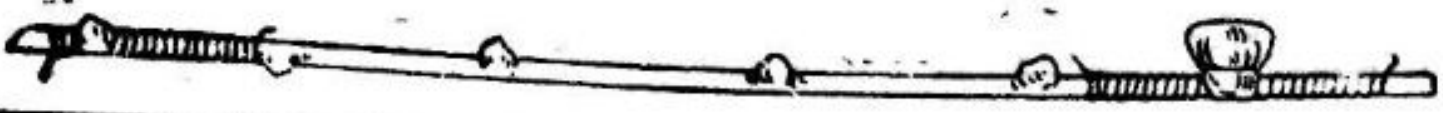
से कुछ नहीं कहना चाहता कि वे कृतभगवत्साक्षात्कार महापुरुष थे परन्तु किसी पुनीत आचरण के वयोवृद्ध विद्वद्वरिष्ठ तेजस्वी तपस्वी संन्यासी की कही बात को तो कह ही सकता हूं। श्री धर्मसंघ विश्वविद्यालय चूरू के कुलपति पूज्यपाद अनन्त श्री स्वामी शिवानन्द सरस्वती जी महाराज ने एक घटना सुनायी। एक बार धर्म सम्राट स्वामी श्री करपात्री जी के साथ वे जगदलपुर के पास कहीं जा रहे थे। समय की बचत के कारण वे यात्रा रात में ही किया करते थे। रास्ता घोर जंगल में था। आधी रात का समय था कि गाड़ी का टायर फट गया, अब क्या करें—'निशा घोर गम्भीर बन, पंथ न सुनहु सुजान।' भूखे प्यासे तो थे ही, घोर जङ्गल, निर्जन स्थान। महाराज श्री बोले, देखो जल की आवाज आ रही है, कहीं नदी होगी, जल ले आओ। आधा मील चलकर नदी मिल गयी जल ले आये। जल पिया। जङ्गल में पड़े-पड़े तीन दिन बीत गये, वहाँ कोई आया न गया। भगवान को नैवेद्य के नाम पर केवल काजू, बादाम के कुछ दाने मात्र थे उनके पास। फल, अन्न आदि कुछ भी तो नहीं। भगवान को नैवेद्य में चढ़ाये एक तोला काजू, बादाम के दानों को ही सब जने प्रसाद रूप में ले लेते। अब क्या करें साथ में ब्रह्मचारी, सेवक तथा ड्राइवर भी हैं, सब तो विविक्तवासी नहीं। ये तो तितुक्षु नहीं हैं, इनके लिये क्या करें? हाँ पूजा अवश्य उत्कृष्ट रूप में सम्पन्न हो रही थी। महाराज श्री बोले, एक काम करो। अन्नपूर्णा स्तोत्र का पाठ करो, फिर देखो क्या होता है? पाठ किया। बड़ा आश्चर्य हुआ कि जहाँ तीन दिन से कोई भी आया न गया वहाँ एक वृद्धा आयी। दुर्गम निर्जन वन में वह वृद्धा आकर बोली - पता चला तुम्हारी गाड़ी खराब हो गयी है, लो दाल है चावल हैं। खिचड़ी बना लो, खा लो। धन्य हो माँ अन्नपूर्णा। इसके बाद फोरेस्ट डिपार्टमेन्ट के अधिकारी आये कि स्वामी श्री करपात्री जी की गाड़ी खराब हो गयी है। उन्होंने रस्सी बंधवाकर गाड़ी खिंचवायी, धक्का लगवाया, गाड़ी पार लगी। कितना बड़ा चमत्कार है।

मैं तो भगवान की कृपा महारानी का आभारी हूं कि हमें महाराज श्री करपात्री जी तथा ब्रह्मलीन जगद्गुरु शंकराचार्य स्वामी श्री कृष्णबोधाश्रम जी महाराज के पावन चरणों में बैठने का सौभाग्य प्राप्त हुआ अन्यथा ऐसे तपोपूत महान तपस्वी धर्मरक्षक, अद्भुत शास्त्रार्थ महारथी, देशभक्त, गोभक्त, धर्मवेत्ता, युग पुरुष हजारों वर्ष बाद ही कभी इस धरा पर आते हैं। अब कलियुग में कब आते हैं, आते हैं या नहीं, कौन जाने। उनकी पावन स्मृति में शत-शत नमन।

●●

सनातन संस्कृति के सजग प्रहरी

श्री स्वामी करपात्री जी महाराज

—शास्त्रार्थ पंचानन प्रेमाचार्य शास्त्री एम० ए०

यतिचक्र चूड़ामणि धर्म सम्राट् श्री स्वामी करपात्री जी महाराज उन लोकोत्तर युग पुरुषों की प्रथम पंक्ति में सन्निविष्ट हैं जिनका आविर्भाव एक ज्योतिपुंज के रूप में अनेक शताब्दियों के अनन्तर हुआ करता है। सनातन संस्कृति के मानदण्डों की सर्वांगीण सुरक्षा में सर्वात्मना समर्पित तथा सद्विचार एवं सद्व्यवहार के समन्वय सूत्रधार के रूप में स्वामी करपात्री जी महाराज को सर्वदा स्मरण किया जायेगा। उन्होंने अपनी अगाध और अटूट शास्त्रनिष्ठा का ऐसा जाज्वल्यमान स्वरूप प्रस्तुत किया था कि अपने जीवन काल में ही वे वेद विहित आचार-विचार परम्परा के प्रतीक रूप में प्रतिष्ठित हो गये थे। वैदिक मान्यताओं के प्रति कट्टर निष्ठा और व्यावहारिक उदारता का ऐसा मणि कांचन संयोग विरल ही देखने में आता है।

वेदों से लेकर हनुमान चालीसा तक समस्त आर्ष ग्रंथों को परम प्रमाण मानने की डिण्डिम घोषणा स्वामी जी भरी सभा में किया करते थे और उक्त आर्ष साहित्य के विरुद्ध मुँह खोलने वाले अथवा लेखनी चलाने वाले महानुभावों का शास्त्र सम्मत एवं तर्क संगत प्रतिवाद करना उनके जीवन का सार सर्वस्व था। शास्त्र विरोधियों की मान्यताओं के अपने प्रमाण तुन्दिल तीखे तर्कों से परखचे उड़ाते समय वे अतिशय कठोर हो जाते थे। परन्तु उनकी यह कठोरता केवल शास्त्रीय विवेचन तक ही सीमित थी। मानवीय स्तर पर तो वे मृणाल के समान कोमल एक वीतराग संन्यासी ही थे। विरोधियों के साथ भी अपनेपन से भरा मृदुल व्यवहार करना उनकी सहज विलक्षणता थी। जो उन्हें द्वन्द्व मुक्त महापुरुषों की श्रेणी में सम्मिलित कर देती थी। उनकी संरक्षकता में काशी से प्रकाशित होने वाला विचार पत्र "सिद्धान्त" उनके इस स्वभाव का दर्पण था। 'सिद्धान्त" में एक स्तम्भ हुआ करता था—वादे वादे जायते तत्वबोधः। इस स्तम्भ के अन्तर्गत शास्त्र विरोधियों के मन्तव्यों को भी प्रकाशित किया जाता था और फिर उन मन्तव्यों का खण्डन किया जाता था। ऐसी प्रशंसनीय शास्त्र निष्ठा और ऐसी स्पृहणीय उदारता क्या सर्वत्र सुलभ हो सकती है ?

लम्बी श्रृंखला – शास्त्रीय मान्यताओं को लेकर अपने जीवन काल में स्वामी जी को जिन लोगों से भिड़ना पड़ा है, उसकी श्रृंखला बहुत लम्बी है। राहुल सांकृत्यायन, भदन्त आनन्द कौशल्यायन, चतुरसेन शास्त्री, डा० अम्बेदकर, विनोबाभावे, डा० काणे, तथाकथित भगवान् रजनीश आदि प्रत्यक्ष शास्त्र विरोधियों के शताधिक नाम ऐसे हैं जिनकी मान्यताओं की खरी-खरी आलोचना स्वामी जी ने अपने विभिन्न ग्रन्थों में की है।

वेल्जियम के निवासी ईसाई प्रचारक फादर कामिल बुल्के ने "राम कथा" नामक एक

पुस्तक लिखी जिस पर प्रयाग विश्वविद्यालय ने उन्हें डाक्टरेट की उपाधि से सम्मानित किया । उक्त पुस्तक में फादर बुल्के ने राम कथा की खूब सराहना की है और रामचरित की व्यापकता, आदर्श-मयता आदि का भी विस्तृत उल्लेख किया है । परन्तु पुस्तक के प्रारम्भ में अपनी सहज ईसाई प्रकृति के कारण डाक्टर बुल्के ने यह सिद्ध करने का प्रयास किया है कि रामचरित्र एक काल्पनिक कथानक मात्र है, इसका ऐतिहासिक सन्दर्भ कुछ भी नहीं है । इस स्थापना ने स्वामी जी को विक्षुब्ध कर डाला । उन्होंने अपने 'रामायण मीमांसा'' नामक बृहत्काय ग्रंथ में बुल्के को आड़े हाथों लिया और संकड़ों पृष्ठों में रामचरित्र की ऐतिहासिकता सिद्ध की ।

इसी प्रकार पुरातत्व के प्रख्यात विद्वान् डाक्टर हंसमुख धी, सांकलिया ने जब यह घोषणा की कि अयोध्या की खुदाई करने पर पुरातत्व सम्बन्धी ऐसे कोई प्रमाण नहीं मिले हैं जिनके आधार पर श्रीराम को ऐतिहासिक पुरुष कहा जा सके तो स्वामी करपात्री जी महाराज ने डाक्टर सांकलिया को प्रयाग कुम्भ के अवसर पर धर्म संघ शिविर में आमन्त्रित किया और उन्हें पुरातात्विक प्रमाणों के आधार पर ही रामचरित्र की ऐतिहासिकता सिद्ध करने का आश्वासन दिया । किन्तु डाक्टर सांकलिया ने सामने आने का साहस नहीं दिखाया । तब उनके पक्ष का भी "रामायण मीमांसा" में ध्वस्त किया गया ।

इतना ही नहीं, जब भारतवर्ष के शिरोमणि मानस व्याख्याता पंडित राम किंकर उपाध्याय ने अपने "मानस मुक्तावली" नामक ग्रंथ की भूमिका में "यदि राम ऐतिहासिक पुरुष हैं——..." इत्यादि वाक्य लिखकर "यदि" के द्वारा श्रीराम की ऐतिहासिकता के आगे प्रश्न चिन्ह लगा दिया तो स्वामी जी ने उन्हें भी क्षमा नहीं किया उनका तीव्र प्रतिवाद किया ।

कामुक चेष्टाओं को समाधि दशा का माध्यम सिद्ध करने वाली आचार्य रजनीश की बहु-चर्चित पुस्तक "संभोग से समाधि" का मुंह तोड़ उत्तर स्वामी जी ने दिया और अपने अकाट्य तर्कों की झड़ी लगाकर रजनीश की बोलती बन्द कर डाली, यह तथ्य सर्व विदित ही है ।

पाश्चात्य विचारकों और उनकी जूठन चाटने में स्वयं को गौरवान्वित अनुभव करने वाले आधुनिक विचारकों के लिये स्वामी जी का बहुमूल्य ग्रंथ "मार्क्सवाद और रामराज्य" किसी वज्रा-घात से कम नहीं है । इस विपुलकाय ग्रंथ में कार्लमार्क्स को पश्चिमी दर्शन का प्रतिनिधि मानकर उसके विश्व विश्रुत "दासकैपिटल" ग्रंथ का तथा सुकरात, प्लेटो, अरस्तू, हीगेल, कॉन्ट आदि अन्य प्रमुख पाश्चात्य दार्शनिकों की विचारधारा का ऐसा प्रौढ़ खण्डन प्रस्तुत किया है कि पाठक आश्चर्य विजड़ित हो जाता है । इसी ग्रंथ में चार्ल्स डार्विन के विकासवाद सिद्धान्त की जो निस्सारता प्रमाणित की है, वह आधुनिक बुद्धिवादियों की आँखें खोल देने के लिये पर्याप्त है ।

दर्शन ग्रंथों की भाँति वेदों पर भी विदेशी विद्वानों और उनके अन्धानुयायी भारतीय पंडितों ने जी भर कर प्रलाप किया है । उन सभी की मान्यताओं को प्रमाण और तर्कों की कसौटी पर कस कर अपने विशालकाय ग्रंथ "वेदार्थ पारिजात" में स्वामी जी ने सर्वथा निर्मूल कर डाला हैं । इसी ग्रंथ में स्वामी जी ने प्रकरण-वशात् आर्य समाज प्रवर्तक स्वामी दयानन्द सरस्वती की वेद-विरुद्ध

स्थापनाओं की भी पर्यालोचना की है।

अपनों से भी आमने सामने—"तस्माच्छास्त्रं प्रमाणं ते कार्याकार्य व्यवस्थितौ" इस भगवद् वाक्य पर स्वामी करपात्री जी की अटूट आस्था थी। यह वाक्य एक प्रकार से उनके जीवन का मूल मन्त्र ही था। आर्ष ग्रंथों को परम प्रमाण मानने और मनवाने में उनका इतना प्रबल आग्रह था कि शास्त्र प्रमाण न मानने वाले कुछ ऐसे विशिष्ट व्यक्तियों के साथ भी उनका वैचारिक सामन्जस्य नहीं हो पाया जिनकी राष्ट्रभक्ति और हिन्दुत्व निष्ठा पर रंचभर भी सन्देह नहीं किया जा सकता। राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के सरसंघ-संचालक श्री गुरु गोलवलकर जी के साथ स्वामी करपात्री जी का मतभेद एकमात्र इसी तथ्य पर आधारित था कि वे संघ की रीति नीति किसी आर्ष ग्रंथ के अनुसार निर्धारित क्यों नहीं करते? भारतीय जनसंघ तथा रामराज्य परिषद् के एकीकरण का प्रस्ताव लेकर जब पं० दीनदयाल उपाध्याय ने स्वामी जी से भेंट को तो उपाध्याय जी से भी स्वामी जी ने यही अनुरोध किया कि वे किसी भी प्राचीन ग्रंथ को अपने उद्देश्यों के आधार रूप में स्वीकार कर लें तथा वर्णाश्रमाचार-सम्मत समाज व्यवस्था को अपना लक्ष्य घोषित कर दें तो तुरन्त दोनों संघटन एक हो सकते हैं। परन्तु किसी कारणवश श्री उपाध्याय जी को स्वामी जी का उक्त अनुरोध स्वीकार न हो सका और परिणामतः वार्ता भंग हो गयी।

राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ की केवल ध्वज को प्रमाण मानने की पद्धति स्वामी जी को पसन्द नहीं थी। परिणाम स्वरूप निर्द्वन्द्व होकर स्वामी जी ने "विचार नवनीत" नामक गुरु जी के ग्रंथ की कड़ी प्रत्यालोचना लिखी और सभी प्रमुख संघी नेताओं को भी खरी खरी सुनाई।

महामहोपाध्याय पं० गिरिधर शर्मा चतुर्वेदी वैदिक विज्ञान के प्रौढ़ व्याख्याता थे तथा सनातन धर्म के दिग्गज शास्त्रार्थी के रूप में प्रतिष्ठित थे। धर्म संघ के मंचों पर आयोजित सर्ववेद शाखा सम्मेलनों में उन्हें शिरोमणि वेद वेत्ता के रूप में सदा आमन्त्रित किया जाता था और स्वामी जी उनके पक्ष को दत्तावधान होकर सुना करते थे। चतुर्वेदी जी ने "वैदिक-विज्ञान और भारतीय संस्कृति" नाम से एक अत्यन्त सुन्दर उपादेय ग्रंथ की रचना की है जिसे बिहार राष्ट्रभाषा परिषद् पटना ने पुरस्कृत कर प्रकाशित किया है।

जीवन के उत्तरार्ध में श्री चतुर्वेदी जी काशीवास करने की अभिलाषा से दुर्गाकुण्ड पर अवस्थित धर्म संघ शिक्षामण्डल में ही निवास किया करते थे। मैं उनके दर्शनार्थ धर्म संघ गया तो संयोगवश वहीं स्वामी करपात्री जी महाराज के दर्शनों का सौभाग्य भी प्राप्त हो गया। वहीं ज्ञात हुआ कि स्वामी जी आजकल महामहोपाध्याय जी के उक्त ग्रंथ का खण्डन लिख रहे हैं। मैंने अत्यन्त चकित होकर जब महाराज से निवेदन किया कि यह ग्रंथ तो सनातन धर्म के एक धुरन्धर विद्वान् ने लिखा है और पुरस्कृत भी है, इसके खण्डन का क्या उद्देश्य? इसके उत्तर में स्वामी जी ने हंसकर मुझसे प्रति-प्रश्न किया—क्या पुरस्कृत हो जाने से कोई पुस्तक अकाट्य भी हो जाती है?

वस्तुतः वेदों की पौरुषेयता और अपौरुषेयता को लेकर चतुर्वेदी जी के साथ स्वामी जी

का मतभेद था। स्वामी जी वेदों को अपौरुषेय मानते थे और मन्त्रान्तर्गत शब्द, उनके अर्थ और क्रम तीनों को अनादि किंवा ईश्वरीय सिद्ध किया करते थे। इसके विपरीत चतुर्वेदी जी केवल अर्थ (ज्ञान) को ईश्वरीय मानते थे शब्द और क्रम को साक्षात्कर्ता ऋषियों द्वारा प्रणीत बताया करते थे। इसी सूक्ष्म विचार भेद के आधार पर खण्डनमन्डन का उक्त क्रम प्रारम्भ हुआ था।

धर्म संघ और सनातन धर्म—पूज्य पितृ चरण शास्त्रार्थ महारथी पं० माधवाचार्य शास्त्री जी के उल्लेख बिना स्वामी करपात्री जी महाराज की जीवन गाथा अपूर्ण ही रहती है, यह एक निर्विवाद तथ्य है क्योंकि ये दोनों ही महापुरुष समान उद्देश्य की पूर्ति के लिये आजीवन धर्म विरोधियों से जूझते रहे। जन-जीवन में वेदोक्त मर्यादाओं के प्रचार प्रसार तथा धर्मानुकूल आचार विचार परम्परा को सुप्रतिष्ठित करने के जिस पुनीत उद्देश्य से धर्म संघ की स्थापना की गयी थी उसकी सर्वांगीण परिपूर्णता में शास्त्रार्थ महारथी पं० कालूराम शास्त्री, कविरत्न पं० अखिलानन्द शर्मा जी के साथ साथ श्री महारथी जी का अविस्मरणीय योगदान रहा है। इतना ही नहीं, धर्म विरोधियों किंवा शास्त्र निन्दकों की कटूक्तियों को धैर्य पूर्वक सुनना और फिर मुस्कुराते हुये चुटकियों में उन्हें चूर चूर कर डालने की विलक्षण शास्त्रार्थ कला का धर्म संघ के मंच पर सूत्रपात निस्सन्देह रूप में महारथी जी द्वारा ही सम्पन्न हुआ था। उस अद्भुत शास्त्रार्थ शैली की अवतारणा ने धर्म संघ की प्रामाणिकता को अधिकाधिक व्यापक तथा उत्तरोत्तर तेजस्वी बनाया था।

दिल्ली महायज्ञ ने समस्त भारतवर्ष में स्वामी करपात्री जी महाराज के अप्रतिम वैदुष्य तथा वर्चस्वी धर्म नेतृत्व का तूर्यनाद किया था। अगणित सनातन धर्मियों के अन्तस्तल में स्वामी जी दिव्य आलोक बनकर इस महायज्ञ के बाद प्रतिष्ठित हुये थे। कौन नहीं जानता कि इस महायज्ञ के प्रमुख आधार स्तम्भों में श्री महारथी जी अग्रगण्य थे। वेद शास्त्र विरोधियों को भरी सभा में ललकार उनकी कुतर्कपूर्ण मान्यताओं के समूलोन्मूलन का महत्वपूर्ण कार्य उक्त महायज्ञ में श्री महारथी जी ने ही संभाला था। और तब से लेकर निरन्तर चालीस वर्षों तक, धर्म संघ के मंच से शंकाओं की लंका फूंकने का दुस्तर कार्य शास्त्रार्थ महारथी जी सम्पन्न करते रहे। इसीलिये सभास्थल में जब भी खंडन-मंडन का अवसर उपस्थित होता तो स्वामी करपात्री जी मुस्कुराकर घोषणा कर दिया करते थे कि यह विभाग 'हमारे शास्त्रार्थ महारथी जी' का है, वे ही इस प्रकरण को सम्भालेंगे।

स्वामी जी के मुख से निकले हुये "हमारे शास्त्रार्थ महारथी जी" इन शब्दों में उनके हृदय का अगाध स्नेह और दृढ़ विश्वास प्रतिबिम्बत रहा करता था। इस स्नेह और पारस्परिक विश्वास का ही परिणाम था कि स्वामी जी महारथी जी की बातों का अधिकाधिक समादर किया करते थे। इस सन्दर्भ में मेरी स्वयं की अनुभूत एक घटना है।

उडुपी के मध्व संप्रदायाचार्य श्री स्वामी विद्यामान्य तीर्थ महाराज के साथ स्वामी करपात्री जी का हरिद्वार में शास्त्रार्थ हुआ। इस शास्त्रार्थ में स्वामी जी ने बड़े संरम्भ के साथ शांकर अद्वैतमत का पक्ष लेते हुये माध्व मत का निराकरण किया। ऋषिकुल ब्रह्मचर्याश्रम के स्नातक मेरे कई सहाध्यायी विद्वान् उक्त शास्त्रार्थ में उपस्थित थे। उनका तथा अन्य प्रत्यक्षदर्शी महानुभावों का यह निष्कर्ष था कि इस शास्त्रार्थ समर में किसी भी पक्ष की जय अथवा पराजय का तो प्रश्न ही नहीं था। हाँ,
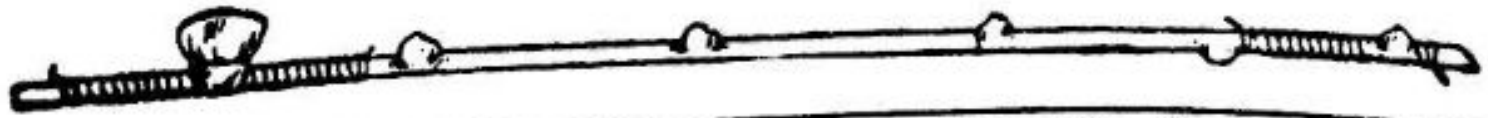
स्वामी विद्यामान्य तीर्थ महाराज के अविच्छिन्न धारा प्रवाह की भाँति निःसृत होने वाले सानुप्रास संस्कृत संभाषण को सुनकर विद्वन्मण्डल अधिक रोमाञ्चित हो उठता था। यद्यपि दोनों ही धर्माचार्यों ने इस शास्त्रार्थ को सामान्य शास्त्रीय विचार के रूप में ग्रहण किया था। परन्तु स्वामी करपात्री जी महाराज के कतिपय अन्धभक्तों ने अतिरिक्त आवेश में आकर देश काल का विचार किये बिना उक्त शास्त्रार्थ का विवरण "माध्वमुख चपेटिका" जैसे घटिया शीर्षक से पुस्तक रूप में छाप डाला जिसे पढ़कर समूचा वैष्णव समुदाय उद्विग्न हो उठा। क्षोभ और लज्जा उत्पन्न करने वाला तथ्य यह था कि धर्म सघ के महाधिवेशनों में स्वामी विद्यामान्य तीर्थ महाराज माध्व संप्रदायाचार्य के रूप में सिंहासनासीन होकर सर्वदा विराजमान हुआ करते थे। ऐसे मान्य धर्माचार्य के साथ शास्त्रार्थ और कोढ़ में खाज की भाँति निम्न स्तरीय पुस्तक छापकर फिर उनकी छीछालेदड़ ! ! ये दोनों ही बातें धर्म संघ की गरिमा को गिराने वाली थी। विक्षुब्ध वैष्णव समुदाय में धर्म संघ के बहिष्कार के स्वर उभरते लगे थे।

इस गृहयुद्ध की विभीषिका से भरे अनासित गरमागरम वातावरण में श्री शास्त्रार्थ महारथी जी दिल्ली धर्म संघ में स्वामी करपात्री जी से मिलने गये। मैं भी उनके साथ था। नमस्कारादि के के अनन्तर श्री महारथी जी ने दो टूक अपना अभिमत प्रस्तुत किया। वे बोले—महाराज ! हमारी आपके प्रति श्रद्धा एक अद्वैतवादी संन्यासी के रूप में कदापि नहीं है। हम तो आपको सर्व सम्प्रदाय समन्वित सनातन धर्म के निर्विवाद नेता के रूप में मानते हैं। मध्व संप्रदायाचार्य के साथ आपके शास्त्रार्थ ने वैष्णव वर्ग को खिन्न कर डाला है। मैं स्वयं श्री वैष्णव मतानुयायी हूँ। यदि आप वैष्णव सिद्धान्त को वेदानुकूल नहीं मानते हैं तो मैं शास्त्रार्थ के लिए सन्नद्ध हूँ। पुनः दिल्ली में शास्त्रार्थ मंच लगवाइए।"

यह सुनकर एक हृदयहारी मुस्कान स्वामी जी के मुखारविन्द पर बिछ गयी। फिर एक महापुरुष की भाँति शान्त और स्थिर स्वर में बोले—"आचार्य जी, आपका आवेश में आना अनुचित नहीं है। किन्तु मैं सत्य कहता हूँ "माध्वमुख चपेटिका" पुस्तक के प्रकाशन में मेरी शतांश में भी सहमति नहीं है। आप निश्चिन्त रहिये। पहले की भाँति भविष्य में भी धर्म संघ समग्र सनातन धर्म के अभ्युत्थान में ही तत्पर रहेगा, किसी पक्ष विशेष का पोषक नहीं।"

इतना ही नहीं, अपने अतिशय औदार्य का परिचय देते हुये स्वामी जी ने सार्वजनिक सभा में भी पुस्तक प्रकाशको को लताड़ा और इस प्रकार अपनी तथा धर्मसंघ की गरिमा को चार चांद लगाए।

उदारता की पराकाष्ठा—स्वामी जी विदेशयात्रा को प्रायश्चित्तानर्ह पाप मानते थे और मैं धर्म प्रचार के उद्देश्य से चार बार यूरोपीय तथा अमेरिकन देशों की यात्रा कर चुका था। पाँचवी बार जाने की तैयारी थी। विदेश यात्रा को शास्त्रीयता और अशास्त्रीयता को लेकर "सिद्धान्त" में और "लोकालोक" में लेख मालाओं का क्रम चल रहा था। उन्हीं दिनों मैं पूज्य पिताजी के साथ दिल्ली में निगमबोध घाट पर स्वामी जी के दर्शनार्थ गया। पिताजी मेरी ओर संकेत करके स्वामी जी

से बोले—महाराज ! यह धर्म प्रचार करने के लिये पाँचवीं बार विदेश जा रहा है। इसे आशीर्वाद दीजिये।"

स्वामी जी महाराज ने मेरी ओर वरदमुद्रा बनाकर तुरन्त कहा—"आशीर्वाद तो इनके लिये सर्वदा है, परन्तु विदेशयात्रा के लिये आज्ञा या अनुमति कभी नहीं है।"

इस पर कुछ आवेश में आकर मैंने भी एक दुस्साहसपूर्ण बात कह डाली। मैंने पूछा—महाराज ! आप रामराज्य परिषद् के संस्थापक हैं जो एक राजनीति पार्टी है। यदि कभी भविष्य में रामराज्य परिषद् की सरकार बन जाए तो उसमें विदेश मन्त्रालय होगा या नहीं ? किसी व्यक्ति को विदेश मन्त्री बनाया जायेगा अथवा नहीं ? और वह विदेश मन्त्री विदेश यात्रा पर भी जाया करेगा या नहीं ?

स्वामी जी गम्भीरतापूर्वक बोले—"कदाचित् रामराज्य परिषद् सत्तारुढ़ हो जाए तो विदेश-मन्त्री अवश्य होगा और वह विदेश यात्राएँ भी अवश्यमेव किया करेगा।"

तो फिर महाराज ! मैंने कहा—आप तो विदेश यात्रा को शास्त्र विरुद्ध तथा प्रायश्चित्त से भी दूर न हो सकने वाला पाप मानते हैं। ऐसी दशा में विदेश मन्त्री किसे बनाया जाएगा ?

स्वामी जी उन्मुक्त भाव से हंसकर बोले—"विदेश यात्रा करके शास्त्र विरुद्ध आचरण कर चुकने वाले आप जैसे पण्डितों को हो विदेश मन्त्री का पद सौंपा जाएगा।"

इस पर पूज्य पिताजी ने तीर चलाते हुये कहा—"महाराज ! यह तो शास्त्र विरुद्ध आचरण करने वालों को पुरस्कृत करना ही हुआ।"

स्वामी जी तुरन्त बोले—पुरस्कृत क्यों नहीं किया जाए ? विदेश यात्रा की अशास्त्रीयता तो यथावत् है ही, परन्तु उसके साथ धर्म प्रचार का पुनीत उद्देश्य भी तो जुड़ा है। क्या वह पुरस्कार योग्य नहीं है ?

इस उत्तर प्रत्युत्तर में स्वामी जी का निष्कलुष अन्तरंग झांक रहा है। उदारता और विशाल हृदयता का ऐसा समुज्वल उदाहरण अब भला कहाँ मिल पाएगा ? शास्त्रीय प्रमाण और उनकी युगानुरूप उपादेय व्याख्याएँ करने का वह अपूर्व कौशल स्वामी जी के साथ ही तिरोहित हो गया, यह देखकर हृदय कचोट उठता है।

ब्रह्मलीन होने से कोई दो या अढाई मास पूर्व काशी में केदारघाट पर वेद-शास्त्रानुसन्धान परिषद् के भवन में मैंने स्वामी जी के अन्तिम दर्शन प्राप्त किये थे। तब उन्होंने नितान्त सन्तुष्ट मुद्रा में मुझे अपने शुभाशीर्वाद से आप्यायित करते हुये कहा था—"आप अपने पितृ-परम्परा से प्राप्त धर्म प्रचार कार्य में तत्पर हैं इससे हम सन्तुष्ट और आश्वस्त हैं।"

सनातन संस्कृति के ऐसे जागरुक प्रहरी एवं अपने विलक्षण वैदुष्य से जनमानस को सुवासित कर देने वाले निरूपम महापुरुष का शुभाशीर्वाद प्राप्त कर मैं स्वयं को गौरवान्वित अनुभव कर रहा हूँ। मेरे जैसे लाखों सनातन धर्मियों के हृदय में दिव्य आलोक पुञ्ज बनकर श्री करपात्री जी महाराज सर्वदा विराजमान रहेंगे और आने वाली पीढ़ियों को धर्माचरण की स्वर्णिम प्रेरणा प्रदान करते रहेंगे, यह निर्विवाद है।

●●

परम पूज्य स्वामी श्री करपात्री जी महाराज एवं संस्मरण

—वेदाचार्य पं० अरुण कुमार शर्मा, एम० ए० (संस्कृत)
अध्यक्ष-अ० भा० धर्म संघ शाखा, खेजरोली, (जयपुर)

माह अप्रैल, १९८० ई० । धर्म संघ समाचार आकोला के द्वारा पन्तद्वीप (चमगादड़ टापू) हरिद्वार में अर्द्धकुम्भी के अवसर पर अखिल भारतीय धर्मसंघ के महाधिवेशन में परम पूज्य धर्म सम्राट यतिचक्र चूड़ामणि अनन्त श्री विभूषित स्वामी श्री करपात्री जी महाराज के आगमन का संकेत प्राप्त हुआ तो हम जयपुर से पूज्य श्री कैलाश नाथ जी ब्रह्मचारी, जंगजीत महादेव मन्दिर नाहरगढ़ रोड जयपुर एवं बन बिहारी पारीक, मदन मोहन पारीक, बिहारी लाल अग्रवाल आदि हरिद्वार के लिये प्रस्थान किये ।

हरिद्वार पीली कोठी जहाँ महाराज ठहरे हुये थे पहुंचकर उन दिव्य विभूति के दर्शन कर यह तुच्छ जीव कृतकृत्य हो गया, यह प्रथम अवसर था स्वामी जी के सम्यक दर्शन का, इससे पूर्व भी सन १९७७ के जनवरी माह में महाकुम्भ प्रयाग में लक्षचण्डी महायज्ञ के अवसर पर दर्शन किये थे किंतु उस समय महाराज जी के अमित प्रभाव एवं माहात्म्य से मैं अधिक परिचित नहीं था ।

जिस समय हममें पीली कोठी हरिद्वार में पूज्य स्वामी चरण के दर्शन किये थे, उस समय उनको तीव्र ज्वर था किंतु फिर भी वे सायंकालीन रुद्राभिषेक आदि नित्य कर्म में पूर्ण उत्साह से संलग्न थे । उस समय मैंने उनमें एक विचित्र ज्योतिपुञ्ज का दर्शन किया । स्वामी करपात्री जी महाराज मूर्तिमान धर्म थे । पूजा के उपरांत उन्होंने जयपुर होकर उज्जैन जाने का संकेत दिया ।

उक्त घटना के लगभग ४-५ दिवस बाद पूज्य श्री स्वामी जी महाराज जयपुर में श्री रामेश्वर दास धामाणी के निवास पर ठहरे हुये थे, दूरभाष से जानकारी होने पर ब्रह्मचारी जी के साथ दर्शन करने गये तो पूज्य स्वामी जी सायंकालीन नित्यकर्म में संलग्न थे। पूजा समाप्ति के पश्चात ब्रह्मचारी जी से वार्तालाप आरम्भ हुआ । मेरे मन में कई प्रश्न करने की एवं तात्कालिक धार्मिक स्थिति पर बहुत बोलने की इच्छा थी किंतु न मालूम क्या हुआ, जीभ हिली तक नहीं। तत्पश्चात ब्रह्मचारी जी ने मेरा परिचय कराया कि ये खेजरोली कस्बे के धर्म संघ शाखा के अध्यक्ष एवं उत्साही कर्मठ ब्राह्मण नवयुवक हैं । तब स्वामी श्री करपात्री जी महाराज की कृपा दृष्टि हुई । मैंने स्वामी जी से खेजरोली कस्बे में होने वाले नवकुंडात्मक श्रीराम महायज्ञ में पधारने के सम्बन्ध में निवेदन किया तो उन्होंने कहा कि केदार घाट से पत्र व्यवहार करना, देख लेंगे तत्पश्चात महाराज श्री ने उज्जैन अर्द्धकुम्भी के लिये प्रस्थान कर दिया ।

बस, मेरे जीवन काल में मैंने पूज्य स्वामी श्री करपात्री जी महाराज के मात्र दो बार भलीभांति दर्शन किये, आज मेरे हृदय में ईश्वर से भी अधिक पूज्य स्वामी जी महाराज में श्रद्धा है ।

सन १९८०-८१ में श्रद्धेय स्वामी जी महाराज गम्भीर रूप से अस्वस्थ हुये तो भारत भर में जगह-जगह विद्वानों द्वारा वैदिक अनुष्ठानों की भरमार लग गयी मैंने भी शतचण्डी एवं शतरुद्रिय

आदि शास्त्रीय अनुष्ठानों के द्वारा भगवान भूतभावन विश्वनाथ एवं श्री दुर्गाम्बा से महाराज श्री के दीर्घायुष्य एवं नैरूज्यतार्थ प्रार्थना की। प्रार्थना सफल हुई, मुझे स्वप्न दिखाई दिया कि "महाराज श्री ब्रह्मलीन हो गये, उनकी दिव्य पांच भौतिक देह पर पुष्पमालाएँ शोभायमान थी, एवं महाराज श्री के निष्प्राण शरीर के श्रीमुख से वैदिक मन्त्रों का उच्चारण हो रहा था, लोग आश्चर्यचकित थे, कुछ व्यक्ति यह कह रहे थे कि पूज्य महाराज श्री बड़े भारी विद्वान महात्मा थे। अतः स्मृतिवशात उनके श्रीमुख से बिना किसी प्रयत्न के स्वतः मन्त्रोच्चारण हो रहा है, चारों ओर जल ही जल दिखायी दिया।" इस स्वप्न के दिखायी देने पर आगामी दिवस को मैंने पूज्य कैलाश नाथ जी ब्रह्मचारी से विचार विमर्श किया तो उन्होंने कहा यह तो शुभ स्वप्न है, महाराज श्री शीघ्र आरोग्य लाभ प्राप्त करेंगे, हुआ भी यही। लगभग ५ दिन पश्चात समाचार पत्रों में पूज्य स्वामी जी के स्वास्थ्य सुधार सम्बन्धी समाचार पढ़कर हृदय में हर्ष हुआ। इसके बाद महाराज श्री लगभग दस-ग्यारह माह तक स्वस्थ रहे।

लीला संवरण के पश्चात - पूज्य स्वामी श्री करपात्री जी महाराज ने दिनांक २०-२-८५ को प्रातः ६।१७ पर लीला संवरण की, इस पुण्य भारत वर्ष की धरा पर धर्म बीज का वपन करके दिव्य धाम पधारे तो भारत भर में जगह-जगह निर्वाणोत्सव, श्रद्धांजलि सभाओं का आयोजन हुआ। मेरे मन में एक दृढ़ निश्चय था कि आध्यात्मिक गुरु का वरण करूं तो केवल पूज्यपाद स्वामी श्री करपात्री जी महाराज का, क्योंकि विगत कई शताब्दियों में उनके जोड़ का कोई महापुरुष सुनायी नहीं पड़ा। इससे पूर्व मेरी गुरु बुद्धि भगवान सदाशिव में अडिग रही थी।

लीला संवरण के पश्चात परमपूज्य स्वामी जी महाराज ने मेरी प्रार्थना सुनी, मुझे रात्रि में में अध्ययन के समय उनका चित्र दिखायी दिया तो भावावेश में लगभग दो घन्टे रोता रहा, रोते-रोते ही निद्रा-अवस्थित हो गया तो स्वप्न दिखायी दिया कि "एक सुन्दर उद्यान है, उसका द्वार पश्चिम में है। उक्त उद्यान के उत्तर दिशा में एक बड़ा विशाल शिवमन्दिर है, शिवमन्दिर का द्वार दक्षिण दिशा में है। मैं जब उद्यान में प्रवेश करके शिवालय की तरफ गया तो देखा कि यहाँ तो कोई भी नहीं है। मन्दिर में प्रवेश किया तो सामने शिवपंचायतन के दर्शन होते ही करबद्ध होकर स्तुति-प्रार्थना करने लगा। तत्पश्चात जब मेरी दृष्टि शिव- प्रासाद के नैऋत्य कोण में गयी तो देखा कि पूज्यपाद स्वामी जी महाराज आसन पर प्रौढ़ पाद मुद्रा में विराजमान हैं, दाहिने हाथ में गोमुखी डाले जप कर रहे हैं, पूर्वाभिमुख विराज रहे हैं, तो मैंने साष्टांग दण्डवत प्रणाम की, तो महाराज श्री ने अपना वाम चरण कमल मेरे सिर पर आशीर्वादात्मक मुद्रा में रख दिया किंतु जप करते बोले कुछ भी नहीं। बस,

इस घटना के कुछ समय बाद पूज्य स्वामी उड़िया बाबा जी महाराज के उपदेश सम्बन्धी एक एक पुस्तक में गुरु द्वारा स्वाप्निक दीक्षा का प्रकरण पढ़ा तो चित्त में सन्तोष हुआ कि अनन्त श्री विभूषित विश्ववन्द्य परम पूज्य धर्म सम्राट स्वामी श्री करपात्री जी महाराज ने मुझ जैसे तुच्छ किंकर को भी श्री चरणों में स्थान दिया। इत्यलम्—

एक अलौकिक शक्ति जो धर्मरक्षार्थ प्रकट हुई थी

—श्रीमती रत्ना देवी शर्मा
अध्यक्ष–अ० भा० महिला धर्मसंघ, कानपुर

"धर्म संस्थापनार्थाय सम्भवामि युगे युगे"

आनन्द कंद परमानन्द, भगवान श्री कृष्ण के उपरोक्त शब्दों एवं परम्परा को चरितार्थ करने हेतु, इस आदर्श के निमित्त एवं वर्तमान कलिकाल में धर्म स्थापनार्थाय धर्म सम्राट, अभिनव शंकराचार्य स्वरूप श्री श्री १००८ स्वामी हरिहरानन्द जी सरस्वती महाराज "स्वामी करपात्री" जी का प्राकट्य हुआ।

महाराज श्री की अलौकिक शक्ति, दिव्य संदेश प्रतिभा, मूर्धन्य विद्वत्ता एवं असीमित ज्ञान जिसने वेद शास्त्र एवं धर्म ग्रन्थों की सीमा को भी लांघा था उनको युग पुरुष की श्रेणी से भी ऊँचा उठा कर सदा के लिये अमर कर चुकी हैं।

मुझे आज भी वो दृश्य कौंध रहा है और साथ ही वे शब्द आज तक मेरे कानों में गुंजित हैं जो उन्होंने कानपुर के गुरु नारायण खत्री कालेज के प्रांगण में "रास पंचाध्यायी" के पांचवें दिन अपने प्रवचनों में आनन्द कन्द, परमानन्द, बृजबल्लभ भगवान श्री कृष्ण चन्द्र की महारास लीला की व्याख्या करते हुये आत्म विभोर होकर, तन्मयता साध कर वक्ता-श्रोता के मध्य एक रसता उत्पन्न कर श्रोताओं को जो हजारों की संख्या में थे — श्वास साधे रसमय होकर महाराज श्री के मुखारबिंद की ओर निहार कर ये सुन रहे थे—कहे थे "यह लीला, कृष्ण व गोपियों के मिलन की लीला, नश्वर शरीर की न होकर, आत्माओं की हैं इस लोक में इसका वर्णन उचित नहीं, यह गोलोक की लीलायें हैं और वहीं के नियम व शिष्टाचार इस पर लागू होंगे। वर्तमान समाज के परिप्रेक्ष्य में इसे उचित न ठहराया जायेगा।

इसके बाद महाराज श्री ने उस दिन का भाषण समाप्तकिया और तत्पश्चात शिरोवेदना से ग्रस्त होकर काशी प्रस्थान कर गये (सम्भवतः) गोलोक में महारास को देखने के लिये। इसके बाद योग समाधि एवं अन्यान्य प्रक्रियायों से गुजरते हुये अपने भौतिक शरीर को पंचभूत में मिलाकर अपने शिष्य, समर्थक एवं जय जय कार करने वालों को छोड़कर ब्रह्म में लीन हो गये।

जल समाधि से पूर्व की झांकी में सरकारी, गैरसरकारी, पुलिस प्रशासन, शिष्य मण्डली, बैंड बाजे—मोटर और काशी के नागरिकों के असीमित जन समुद्र ने महाराज के पार्थिव शरीर को केदार घाट पर माँ गङ्गा की गोद में अर्पित कर दिया।

महाराज श्री मेरे पूज्य गुरु, धर्म सम्राट एवं इस कलिकाल में सनातन धर्म के पुनरुथान कारक थे इस ओजस्वी एवं तेजमय संत से मेरी पहली भेंट कानपुर में सन १९५२ में हुयी थी। विशाल
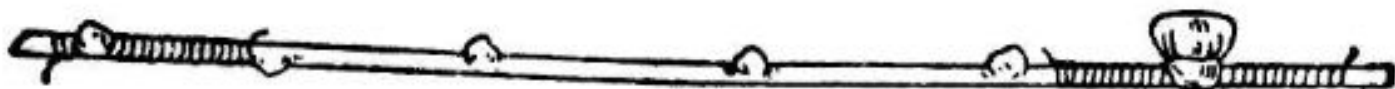
आयोजन, असीमित जन समुदाय के बीच महाराज का भाषण पारम्परिक धर्म ग्रंथों का न होकर तत्का-लीन राजनीति से सम्बन्धित व प्रेरित था। वह समय था जबकि भारत सरकार हिन्दू समुदाय पर नाना प्रकार की बंदिश एवं प्रतिबन्ध थोप रही थी जिसमें हिन्दू कोड बिल व गोवध आदि उल्लेखनीय हैं, और इस बात का दम भर रही थी वो धर्म निरपेक्ष हैं अतः महाराज ने सरकार को चुनौती देते हुये आह्वान किया था ऐसे स्त्री पुरुषों का जो धर्म की वेदी पर अपना सर्वस्व न्यौछावर करने को तैयार हों। महाराज का मत था कि राजनीति पर धर्म का अंकुश उसी प्रकार है जिस प्रकार मदमस्त हाथी को सही राह पर लाने के लिये महावत का अंकुश।

महाराज के उत्साहवर्धक व प्रोत्साहक भाषण का प्रभाव मुझ पर तुरन्त पड़ा और मैंने अपनी सेवाएँ प्रस्तुत करनी चाहीं–तुरन्त समय मिला और आदेश हुआ कि अपनी बात जनता के सामने हमारी उपस्थिति में कहो। मेरे मुख से शब्द अवश्य निकल रहे थे परन्तु मैं निश्चित रूप से कह सकती हूं कि मेरे अन्तर में किसी अदृश्य शक्ति से बल प्राप्त कर शब्द स्वतः बाहर आ रहे थे जिसका प्रभाव विशाल जन समुदाय पर लगातार पड़ रहा था। अपने आशीर्वाद स्वरूप महाराज ने मेरे कन्धे पर इतनी बड़ी जिम्मेदारी रख दी कि जिसके लिये शायद मैं योग्य नहीं थी। मुझे कानपुर में रामराज्य परिषद की महिला संगठन का मन्त्री पद दिया गया था। इसके बाद एक-एक करके लगातार आदेश आते रहे और मैं यन्त्र वत उनका पालन करती रही—कारण शायद यही था कि उनकी आदेश देने की भावभंगिमा व स्वरूप किसी को भी नतमस्तक करने में सक्षम था। १६५२ का उत्तर प्रदेश विधान सभा का चुनाव हो या १६५७ का, जिसे मैंने कानपुर से लड़ा अथवा १६६२ का लोकसभा का चुनाव जिसमें मुझे मुजफ्फरपुर और हाजीपुर से उम्मीवार के रूप में खड़ा किया गया अथवा किसी भी अवसर पर महाराज श्री के आदेश मानने में अपने जीवन की सार्थकता नजर आती थी। महाराज के ऐसे आशीर्वाद था अपने सभी शिष्यों अनुनायियों पर कि न उनको अर्थ की चिंता थी न उनको घर की। न तो समय का अभाव था न सहयोगियों की कमी। सभी कार्य इच्छानुसार समय-समय पर होते रहे किसी को भी आदेश पालन करने में किसी कष्ट या मुसीबत का सामना नहीं करना पड़ा। ये थी वह शक्ति जिमें चमत्कार कहूं तो अतिशयोक्ति न होगी।

और भी बहुत ऐसे क्षण हैं जिन्हे विलक्षण न कह कर चमत्कार ही कहा जायेगा।

१—कलकत्ते में आयोजित गोहत्या विरोध आन्दोलन। महाराज का आदेश हुआ कल तुम्हें कसाई खाने पर स्त्रियों का प्रदर्शन व धरना आयोजित करना है। बड़ी धर्म संकट की स्थिति जीवन में पहली बार कानपुर से कलकत्ते में आयी थी, साथ में कानपुर से २५ स्त्रियों का जत्था मात्र था और महाराज का आदेश था विशाल प्रदर्शन खैर २५ स्त्रियों की ५ टोलियां बनकर उत्तर कलकत्ते की गली गली में सूचना प्रसारित की गयी और आश्चर्यचकित रह गयी मैं यह देख कर कि नियत समय पर पहुँचकर नियत स्थान पर प्रदर्शन हेतू आयी महिलाओं के लिये स्थान छोटा पड़ गया और जलूस को समय से पूर्व ही उठाना पड़ा। स्त्रियों का एक विशाल जनसमूह जिसमें धोबी, दुकानदार, मध्यवर्ग

व मारवाड़ी सेठानियाँ हजारों की संख्या में शामिल थीं, केसरिया झंडा ले "धर्म की जय हो, अधर्म का नाश हो, प्राणियों में सद्भावना हो, विश्व का कल्याण हो,··· ·· हर हर महादेव।" आकाश गुंजित नारों के साथ-साथ गोहत्या बन्द हो का नारा लगाती हुयी अपार, असीमित स्त्री समूह ने टेंगरा बूचड़खाना के सामने प्रदर्शन किया। १५०० पुलिस, २०० घुड़सवार तैनात थे हमारे प्रदर्शन को रोकने के लिये, लाठियाँ चलीं, घोड़े दौड़े, भगदड़ मची परन्तु महाराज श्री का आशीर्वाद चमत्कार के रूप में प्रगट हुआ किसी भी प्रदर्शनकारी महिला को कोई चोट-पाट या जेवर आदि का नुकसान नहीं हुआ। कलकत्ते के समाचार पत्रों की सुरखियाँ आज भी इस घटना का प्रमाण हैं।

२—दूसरा चमत्कार देखा दिल्ली के गोरक्षा आंदोलन में जिसके विशाल एवं सम्पन्न प्रदर्शन के कारण तत्कालीन गृह मन्त्री श्री गुलजारी लाल नन्दा को अपदस्थ किया गया था क्योंकि उसके नियन्त्रण में पुलिस एवं प्रशासन ने नागाओं से छेड़छाड़ की जिसके फलस्वरूप भीषण अग्निकांड, मारकाट, पुलिस लाठीचार्ज आदि हुआ। महिला प्रदर्शन दल सभी ओर से घिर गया था, महाराज आगे थे पुलिस के जवान लाठी चटकाते हुये आगे बढ़ रहे थे, परन्तु अचानक यह क्या हुआ? महाराज के पास पहुंचकर पुलिसदल भौचक्का रह गया अचम्भित व मौन, डी० एस० पी० ने सविनय निवेदन किया महाराज आप हट जाएं परन्तु महाराज आगे बढ़ते गये उनके पीछे-पीछे स्त्रियां चल रही थीं।—हमारे आगे बढ़ने पर पुलिस दल दो भागों में विभक्त हो गया —क्या पुलिस ने महाराज का, गीता में भगवान कृष्ण के समान विराट रूप देखा अथवा कुछ और —क्योंकि हम तो पीठ की ओर थे और यह पहेली आज भी अनबुझी है कि स्वामी जी के उस अलौकिक महामहिम वैभव व तेज पुंज से बर्बर पुलिस भी हतप्रभ हो गयी।

●●

॥ श्री हरिः ॥

धर्म सेतु स्वामी श्री करपात्री जी महाराज

—वैद्य पं० शंकरदेव शर्मा, आयुर्वेदाचार्य
'राम निवास' के० सी०/१७०, कविनगर, गाजियाबाद।

शताब्दियों के पश्चात भारत को धर्म सम्राट पूज्य स्वामी करपात्री जी महाराज जैसी विभूति प्राप्त हुयी थी। सनातन वैदिक धर्म के गूढ़ातिगढ़ तत्वों का जितना गहरा ज्ञान उन महापुरुष

को था वह अन्यत्र विरल ही होगा। कारण धर्म के प्रति उनके जैसा सर्मपित जीवन यापन करने वाला विश्व में दूसरा नहीं दीखता। बाल्यकाल से लेकर ब्रह्मरूप होने तक उनकी प्रत्येक चिंतनधारा, तपस्या कर्मानुष्ठान, योग साधना, धर्म यात्राएँ, आंदोलन, ग्रंथरचना, उपदेशामृत आदि सब के मूल में उनका कुछ भी अपना स्वार्थ नहीं था उनकी प्रत्येक गतिविधि, छोटी से छोटी हलचल भी सम्पूर्णरूप से धर्म के लिये समर्पित थी, विश्व के कल्याण कामना से ओत प्रोत थी। वे धर्म के सिद्धांतों के प्रति हिमालय की भांति अडिग थे। अन्य चिंतकों की भांति सहूलियत निकालते हुये धार्मिक-शाश्वत मूल्यों के विषय में समझौता उन्हें कभी प्रिय नहीं रहा। धर्म शास्त्रों एवं वैदिक सिद्धांतों को वे अपरिवर्तनीय एवं सनातन-शाश्वत मानते थे। एक बार किसी मान नेता ने कहा था कि 'निःसन्देह हम सभी को हिन्दू धर्म से प्रेम है परन्तु इस धर्मरूपी हिमालय पर आरोहण करते समय हम में से कोई ऋषिकेश पहुंचता है, कोई बद्रीनाथ, कोई गंगोत्री में पहुंच कर विश्रांति प्राप्त कर लेता है तो कोई केदार नाथ तक पहुंचकर इति श्री समझ लेता है परन्तु वर्तमान जगत में वैदिक मर्यादाओं एवं धर्म के सर्वोच्च स्थान गौरी शंकर शिखर पर केवल एक ही व्यक्ति पहुंचा है जो पुकार-पुकार कर कह रहा है कि वैदिक सिद्धांतों एवं मर्यादा का सर्वोच्च स्थान यह है और वह हैं 'स्वामी श्री करपात्री जी महाराज।' इसमें कुछ अतिशयोक्ति नहीं है भिज्ञ जन भली-भाँति इस तथ्य से परिचित हैं। पूज्य स्वामी जी की उपस्थिति मात्र से ही धर्म की ध्वजा चहुं ओर फहराने लगती थी। लोगों को धार्मिक सदाचार सम्पन्न एवं चरित्रवान बनने की स्वतः प्रेरणा मिलती थी—देश के किसी भी कोने में धर्म विरोधी कार्य करने वालों के मन में भय एवं आशंका रहती थी कि उन्हें स्वामी करपात्री जी का सामना करना पड़ेगा। आज उनके न रहने से वेद, शास्त्र, धर्म, गौ एवं भारतीय आध्यात्मिक मूल्यों को भारी धक्का लगा है। वे सम्पूर्ण राष्ट्र में एक छोर से दूसरे छोर तक व्याप्त धार्मिकता एवं आध्यात्मिकता के सुदृढ़ धर्म सेतु थे। उनके जैसा निर्मल हृदय युक्त, परोपकारी, परमार्थ चिंतक, विश्वकल्याणकामी, उदारचेता, विचारक, दार्शनिक, सर्वस्व त्यागी, वेदांत तत्व वेत्ता, शास्त्रार्थ महारथीआज दूसरा नहीं दीखता।

महाराज श्री के सर्वप्रथम दर्शन सन १९४३ में उस समय हुए जब दिल्ली में यमुना पार की रेती में इन महात्मा द्वारा स्वतन्त्रता प्राप्ति एवं विश्व कल्याण कामना के पावन संकल्प से एक 'शतमुखकोटिहोमात्मकमहायज्ञ' के आयोजन का संकल्प व्यक्त किया गया था। इनके अनन्य सहयोगी परम तपस्वी वीतराग महात्मा श्री कृष्णबोधाश्रम जी महाराज एक झोपड़ी में आसन लगाये बैठे थे और एक अन्य डेरे में धर्म सम्राट हाथ में माला लेकर यज्ञ का पावन संकल्प लिये तपस्यारत थे। चारों ओर यमुना जल और बीच में दूर-दूर तक फैला विस्तृत रेत टापू। आने वाले उपस्थिति भक्त श्रद्धालुओं में प्रमुख थे श्री सेठ बेनी प्रसाद जयपुरिया जी एवं पं० किशन चन्द शर्मा आदि। इन महात्माओं के सिद्ध संकल्प से माघ शुक्ल बसंत पंचमी बिक्रम संवत २००० के शुभ मुहूर्त में यह महान ऐतिहासिक

यज्ञ आरम्भ हुआ जो २ फरवरी १६४४ से ६ फरवरी १६४४ तक सम्पन्न हुआ। स्वामी जी ने एक तम्बू में नि:शुल्क आयुर्वेदिक औषधि वितरण कर रोगियों की चिकित्सा करने का कार्य मुझे सौंपा जहाँ नित्य सेवा करने का मुझे सौभाग्य प्राप्त हुआ। स्वामी जी अत्यन्त व्यस्त समय में से भी समय निकाल कर आयुर्वेदिक चिकित्सा कार्य निरीक्षण हेतु पधारकर कृतार्थ करते थे। जहाँ तक यज्ञ की विशालता का प्रश्न है उसका वर्णन अशक्य है—इतना ही कहा जा सकता है कि ऐसा आयोजन 'न भूतो न भविष्यति' की उक्ति को प्रत्यक्ष चरितार्थ कर रहा था। पग-पग पर इस महापुरुष की त्याग, तपस्या, विद्वत्ता एवं योग साधना के प्रत्यक्ष दर्शन होते थे। आध्यात्मिक जगत को भली प्रकार यह तथ्य विदित है कि चिर परतन्त्र भारत को स्वतन्त्रता प्राप्ति में स्वामी जी द्वारा अनुष्ठित वैदिक यज्ञों के माध्यम से देवाराधना एवं दैव कृपा ही प्रमुख रही है।

× × ×

एक अन्य प्रसङ्ग स्मृति पटल पर उभर रहा है। स्वामी श्री करपात्री जी महाराज मेटकाफ रोड स्थिति श्री कृष्णबोध भवन के खुले प्रांगण में लकड़ी के तख्त पर बैठकर श्रीमद्भागवत का नित्य प्रातः ६ बजे प्रवचन करते थे। मैं भी पहुंचा तब तक कुछ बिलम्ब हो चुका था। बैठने को स्थान नहीं मिल रहा था। पूज्यपाद जगद्गुरु शंकराचार्य श्री स्वामी कृष्णबोधाश्रम जी महाराज भी विराजमान थे। स्वामी करपात्री जी ने उस समय जब मैं पहुंचा था तब सभी श्रोताओं को उद्बोधित किया कि सुनो, ध्यान रक्खो श्रीमद्भागवत के इन श्लोकों को चलते-फिरते, उठते-बैठते, सोते इन्हें सदा गुन-गुनाते रहा करो -इससे परम शांति प्राप्त होगी। उनके इन कल्याणकारी सद्वचनों की छाप मेरे हृदय पर इस प्रकार अंकित हुई कि उसकी अलौकिकता का वर्णन नहीं हो सकता—एक विशिष्ट प्रकार की नैसर्गिक अनुभूति हुयी हृदय आह्लाद से भर गया –उस क्षण के सत्संग के सुख की स्मृतिमात्र से मन पुलकित हो जाता है, शरीर रोमांचित हो जाता है और हृदय भक्तिभावना से परिपूरित होकर सहसा मुख से तुलसी दास जी के यह शब्द मुखरित हो उठते हैं।—"तात स्वर्ग अपवर्ग सुख धरिय तुला इक अंग। तूल न ताहि सकल मिल जो सुख लव सत्संग॥" उस अलौकिक सत्संग में स्वामी जी द्वारा बताये श्रीमद्भागवत के वे श्लोक निम्नलिखित हैं—

देहाऽस्थिमांस रुधिरेऽभिमतिं त्यजत्वम्।
जाया सुतादिषु सदा ममतां विमुञ्च॥
पश्यानिशं जगदिदं क्षणभङ्गनिष्ठम्।
वैराग्य राग रसिके भव भक्ति निष्ठः॥
धर्मंभजस्व सततं त्यज लोक धर्मान्।
सेवस्व साधु पुरुषान् जहि काम तृष्णाम्॥
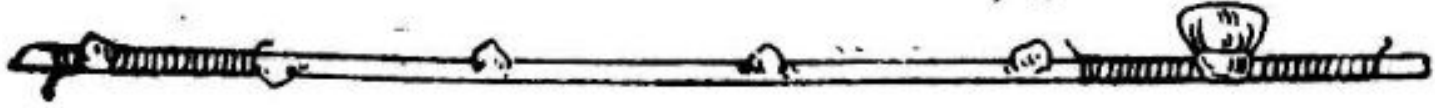
अन्यस्य दोष गुण चिन्तन माशु मुक्त्वा ।
सेवा कथा रस महो नितरां पिबत्वम् ।।
एवं सुतोक्ति वशतोऽपि गृहं विहाय ।
या तो वनं स्थिरमतिर्गत षष्ठि वर्षं ।।
युक्तो हरेरनुदिनं परिचर्यया सो ।
श्री कृष्णमाय नियतं दशमस्य पाठात् ।।

इति श्री पद्म पुराणे उत्तराखंडे श्रीमद्भागवते माहात्म्ये विप्रमोक्षो नाम चतुर्थोऽध्यायः —

साक्षात देव तुल्य — स्वामी जी महाराज के श्रीमुख से उक्त श्लोकों को सुनते ही शरीर में विद्युत लहर की सी अनुभूति हुयी और उस क्षणिक सत्संग लाभ का जब-जब भी स्मरण आता है उन महापुरुष का साक्षात मूर्तस्वरूप सामने आ जाता है —उस क्षण के सुख का वर्णन नहीं हो सकता ।

× × ×

महाराज एकादशी के दिन का निर्जल व्रत रखते थे । एक बार ज्येष्ठ मास की एकादशी के दिन आप दिल्ली में विराजते थे । महाराज को अकस्मात तीव्र ज्वर हो गया, मध्याह्न में १०४ डिग्री था । सब परिकर चिंतित था । स्वामी जी का शरीर तप रहा था । श्री जगद्गुरु जी भी स्वामी जी के सिरहाने आसीन हो गये । कथा प्रसंग चालू हो गया । दो महापुरुषों का अद्भुत, अलौकिक सत्संग सुलभ हुआ । महाराज श्री ने छात्र को भेजकर मुझे भी बुला लिया । मैं आकर अवाक् खड़ा रह गया । सोचा क्या करूं ? गङ्गाजल ग्रहण तक का जहाँ नियम नहीं एकादशी को तो फिर चिकित्सा और औषधि का तो प्रश्न ही कहाँ था । सहसा महाराज की एक आपात दृष्टि मुझ पर पड़ी —उस अद्भुत दृष्टिपात होते ही बुद्धि ने तुरन्त निश्चय किया कि केले के पत्र ही महाराज के शरीर को शीतलता पहुंचा सकते हैं । तुरन्त केले के पत्ते नीचे बिछाये गये, सारे शरीर पर लपेटे गये । हलका-हलका चन्दन का अनुलेपन किया गया । केले के पत्ते तीव्र ताप के कारण झुलस-झुलस कर काले पड़ते जाते थे । उन्हें हटाकर नये-नये पत्ते पुनः शरीर पर लपेटता रहा — इस प्रकार निरन्तर एक घन्टे तक पत्तों की व्यवस्था से उपचार होने पर कुछ शांति लाभ हुआ महाराज को । परन्तु उन महायोगी की शारीरिकि स्थिति हिमालय की भाँति अडिग बनी रही—ताप और पिपासा से त्रस्त होते हुये भी महाराज निर्लेपभाव से बस जगद्गुरु जी से सत्संग लाभ करते रहे । उन्होंने गंगाजल तक की बूंद ग्रहण नहीं किया ।

कहाँ तक वर्णन करें उन तपस्वी, मनस्वी, महामनीषी महात्मा की तितिक्षा, त्याग, तपस्या का वर्णन उनके श्री चरणों में कोटिशः नमन । ●●

धर्म सम्राट् स्वामी करपात्री जी महाराज

सम्पादक:—अजन्ता साप्ताहिक, हैदराबाद (आंध्र प्रदेश)

धर्म सम्राट् स्वामी श्री करपात्री जी ने हिन्दू जीवन दर्शन का प्रचार व प्रसार करने के लिए १६४० में विजयदशमी के महान् पर्व पर सभी धर्माचार्यों, सनातनधर्मी विद्वानों एवं नेताओं के सहयोग से "धर्मसंघ" की स्थापना की थी। स्वामी करपात्री जी ने उस समय धर्मसंघ की स्थापना के समय जो घोषणा की थी "भारत की उन्नति आँखें बन्द करके आगे दौड़ने में नहीं है किन्तु आँखें खोलकर पीछे की ओर देखने में है। हमारा अतीत जितना भव्य था, अपने भविष्य को भी उतना ही दिव्य बनाने के लिये पीछे की ओर देखो, राम और कृष्ण के काल की ओर देखो उसी से धर्म विरोधी वातावरण में धर्म की जय सम्भव होगी।" आज भी यह विचार भारत की राजनीति के लिये पूर्ण सार्थक है। धर्मसंघ के प्रचार के लिए स्वामी करपात्री जी महाराज ने सन्मार्ग का प्रकाशन देहली, काशी और कलकत्ता से कराया। सिद्धान्त और धर्मज्योति का प्रकाशन भी काशी से ही कराया। मेरठ से मासिक 'आदेश' व दैनिक रामराज्य का भी प्रकाशन आपके ही आशीर्वाद का मुख्य प्रताप था।

स्वामी जी के महत्त्वपूर्ण ग्रंथों में मार्क्सवाद और रामराज्य, भगवततत्व, संकीर्तन मीमांसा, रामायण-मीमांसा, संघर्ष और शान्ति, धर्म और राजनीति, वेद पुराण मीमांसा, और वेद भाष्य आदि प्रमुख हैं।

इनमें से कई पुस्तकें उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा सम्मानित हो चुकी है। एक लाख का पुरस्कार भी प्राप्त हुआ। डाक्टर सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय ने उन्हें डाक्टरेट की उपाधि से से विभूषित किया था।

स्वामी करपात्री जी ने कई अखिल भारतीय संस्थाओं की स्थापना की, जिनमें अखिल भारतीय धर्मसंघ, अखिल भारतीय रामराज्य परिषद, अखिल भारतीय गोरक्षा समिति, अखिल भारतीय महिला धर्म संघ और अखिल भारतीय धर्मवीर दल उनमें प्रमुख है।

अंग्रेजी साम्राज्य के विरुद्ध भी संघर्ष में करपात्री जी का महान् योगदान रहा है। २६ अप्रैल १६४७ को गोहत्या बन्दी के महत्वपूर्ण प्रश्न पर आपने देहली में प्रदर्शन किया। सरकार ने आपको बन्दी बनाकर लाहौर जेल भेज दिया। मथुरा का बूचडखाने के सामने आपने ऐतिहासिक शान्तिमय प्रदर्शन किया। इस पर बन्दी बनाकर आगरा जेल भेज दिया गया। भारत विभाजन का आपने डटकर विरोध किया, और आन्दोलन किये।

राजनीति में धर्म को सही प्रतिनिधित्व दिलाने के लिये १६५२ में अखिल भारतीय रामराज्य परिषद की स्थापना हुई इसके द्वारा आपने कई प्रतिनिधियों को विधान सभा और संसद में भेजा। हिन्दू कोड बिल और गोहत्या जैसे प्रश्नों पर सरकार का सदैव तीव्र विरोध करते हुये इस
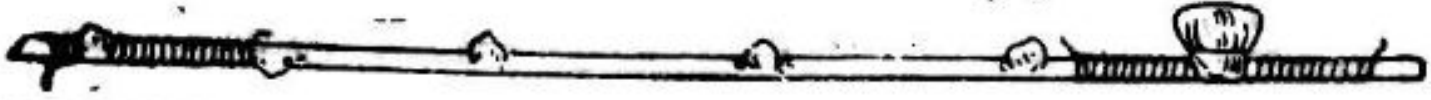
संघर्ष से जूझते रहे। १९६६ का गोहत्या विरोधी ऐतिहासिक आन्दोलन का नेतृत्व किया। इस आन्दो-में कई महात्माओं को बलिदान हुआ। आज भी आप द्वारा संस्थापित संस्थाओं द्वारा यह आन्दोलन चलाया जा रहा है।

स्वामी करपात्री जी के ही आदेश पर शंकाराचार्यों ने तत्कालीन प्रधान मन्त्री श्री जवाहर लाल नेहरू से भेंट करके गोहत्या बन्दी की माँग की थी।

यह बात निर्विवाद रूप से सत्य है कि हमारे देश में धार्मिक जगत में स्वामी करपात्री जी महाराज की महान् भूमिका रही है। देश के चारों पीठों के शंकराचार्यों की नियुक्ति भी आपके परा-मर्श से होती रही।

त्रिकाल संध्या, नित्य नियम के उपरान्त भागवत की सप्ताह और संपुट के तीन पाठ दुर्गा सप्तशती के नियमित रूप से करते थे।

ऐसी महान् विभूति, अनन्त श्री विभूषित धर्म सम्राट् स्वामी करपात्री जी महाराज सात फरवरी १९८२ को अपने आराध्य लोकनायक राघवेन्द्र का स्मरण करते हुये काशी में ब्रह्मलीन हो गये।

स्वामी करपात्री जी महाराज का कई बार हैदराबाद आगमन हुआ। उनके भव्य समारोहों में हाल खचाखच भर जाते थे। जनता उनका भाषण मंत्रमुग्ध होकर सुनती थी। स्वर्गीय लक्ष्मी नारा-यण शर्मा प्रधान मन्त्री सनातन धर्म सभा से भी स्नेह था। सनातन धर्म सभा और वाहेती भवन में भव्य धार्मिक समारोह महाराज श्री के सान्निध्य में होते थे।

एक बार धर्म सम्राट् करपात्री जी वाहेती भवन से समारोह का समापन कर जा रहे थे। इतने में एक कठपुतली वाला आ गया और महाराज श्री के चरणों पर गिर पड़ा। कहने लगा मैं आपको इन कठपुतलियों का प्रदर्शन दिखाने लाया हूँ। महाराज श्री ठहर गये। इन कठपुतलियों के द्वारा कृष्ण की लीला का प्रदर्शन दर्शाया गया था। कृष्ण लीला समाप्त होते ही महाराज श्री ने श्री लूणकरण जी वहेती से उसकी सेवा करने को कहा।

श्रीराम जय राम जय जय राम के कीर्तन के समय महाराज श्री धर्म सम्राट् करपात्री जी के नायक अनन्त कोटि ब्रह्माण्ड नायक कौशल्या नन्दन श्रीराम जैसे सामने खड़े होते थे।

●●

करपात्री चालीसा

—श्रीयुत ऋषिराम 'कवि', अमेठी (उ० प्र०)

[अमेठी संसदीय निर्वाचन १९७१ में रामराज्य परिषद के प्रत्याशी श्री वासुदेव शास्त्री अतुल के समर्थन में आयोजित चुनाव सभा में सभा मंच पर स्वामी जी के स्वागत में प्रस्तुत ।]

स्वागत करपात्री महाराज, तहसील अमेठी धन्य आज ।
स्वागत स्वागत भारत यात्री, भूलोक विभूषण करपात्री ॥१॥
अतिशय संयम अतिशय प्रताप, आहार हाथ पर किये आप ।
जिससे करपात्री हुआ नाम, रम रहे हृदय भगवान राम ॥२॥
जब रामचन्द्र का शासन था, जब अवध राज सिंहासन था ।
तब जन मानस सब सुखी रहा, आनन्द सर्वतोमुखी रहा ॥३॥
कलि में फिर लाने को त्रेता, तत्पर हैं करपात्री नेता ।
रच रामराज्य का रूप रहे, सह बरसा जाड़ा धूप रहे ॥४॥
सन्ताप सभी कब गत होगा, जब रामराज्य भारत होगा ।
मिट जायेंगे सब द्वन्द्व और, सुख पायेंगे ग्रामीण पौर ॥५॥
भारत में अच्छे यज्ञ हुये, संतुष्ट शम्भु सर्वज्ञ हुये ।
तब लाद फांद बस्ता बोरा, लन्दन की ओर चले गोरा ॥६॥
करते न यज्ञ जो करपात्री, आती न घड़ी सुख की दात्री ।
मचती न धर्म की धूम धाम, तो रह जाता भारत गुलाम ॥७॥
ईश्वर की ऐसी हुयी दया, शासन विधान बन गया नया ।
पंचायत बैठी ग्राम ग्राम, लगभग साढ़े ६ बजे शाम ॥८॥
शोभित पंचायत मंच हुये, कुछ मूर्ख लोग भी पंच हुये ।
कुछ जागे कुछ ऊँघने लगे, कुछ तम्बाकू सूंघने लगे ॥९॥
कुछ लोग छींक छींकने लगे, कुछ अंगूठे टीकने लगे ।
कुछ बैठ गये कुछ लेट गये, कुछ पहुच नींद के पेट गये ॥१०॥
कवि कहे झुकाकर शीश यही, अब करो कृपा जगदीश सही ।
हम लोग योग साधन सीखें, तम्बाकू मत सूंघें घीसें ॥११॥
पंचायत में लेटा न करें, अनुशासन को मेटा न करें ।
अनुकरण करें करपात्री का, आदर्श अमेठी यात्री का ॥१२॥
सज्जनो कहो जय राम सीय, जय जय करपात्री भारतीय ।
जय कर्मवीर जय धर्मवीर, संन्यास वेषभूषित शरीर ॥१३॥

करपात्री जी दीर्घायु रहें, अनुकूल अन्न जलवायु रहे ।
करपात्री जी आनन्द रहें, भारत में गोवध बन्द रहे ॥१४॥
गोपाल चरायें गायों को, सुख देंयँ गोप समुदायों को ।
हम धेनु हीन क्यों हुआ करें, क्यों तेल वनस्पति छुआ करें ॥१५॥
करपात्री हैं गो दुग्धाशी, पूजें शंकर जी को काशी ।
बोलें मन्दिर में प्रेम साथ, जय जय गिरिजापति विश्वनाथ ॥१६॥
स्वर गूंज रहा टोले टोले, जय विश्वनाथ जय बम भोले ।
करके भारत में रामराज्य, भर दो जग में निष्काम राज्य ॥१७॥
करपात्री हैं पण्डित भारी, योगी हैं गैरिक पटधारी ।
करपात्री हैं जिसके प्रसाद, उस परम पिता को धन्यवाद ॥१८॥
जय वासुदेव के परमभक्त, गीता उपदेशक अनासक्त ।
जय विश्व धर्म के कर्णधार, जय लाख बार जय कोटि बार ॥१९॥
बड़ गाँव बड़ा विख्यात ग्राम, जिसके कवि राम गुलाम नाम ।
अर्पित सादर 'ऋषिराम' गीत, स्वागत चालीसा नाम गीत ॥२०॥

जयति धर्म सम्राट

—डॉ० नरसिंह पाण्डेय 'पथिक'
विद्या वारिधि (पी-एच० डी०) व्याकरणाचार्य, काव्यतीर्थ, साहित्य रत्न, एम० ए०, भरसर, बलिया

बौद्ध जैन पाखण्ड तिमिर से, वेद मार्ग अवछन्न हुआ जब ।
भूले सभी ज्ञान-हीन हो, धर्म सनातन शिथिल हुआ जब ॥
प्रण निज सुमिरि आदि शंकर ने, भारत में अवतार लिया तब ।
तर्क वितर्क कुतर्क खण्डित कर, धर्म, ज्ञान विस्तार किया तब ॥
किया सनातन धर्म प्रतिष्ठित, ज्ञानाद्वैत प्रकाश किया था ।
वर्णाश्रम मर्यादा रख कर, तप जप नियम विधान किया था ॥
हुए पराजित धर्म विरोधी, वेद द्रोह ने किया पलायन ।
निगमागम उपनिषद ज्ञान से, सुखी हुए सब धर्म परायण ॥
विंशति शति में धर्म ग्लानि से, धार्मिक जन को दुखी निहारि ।
आदि देव अवतरित हुए, हरिहरानन्द का रूप धारि ॥
किया प्रणयन धर्म ग्रन्थों का वेद भाष्य का किया प्रकाश ।
सभी विरोधी प्रत्युत्तर पा, भूले 'पथिक' विजय की आस ॥
जयति धर्म सम्राट जयति जय, जयति यती सम्राट ।
धर्माधर्म विवेक दान से, तू ही महा विराट ॥
जयति धर्म सम्राट जयति जय, जयति यती सम्राट ॥

परम पूज्य महाराज श्री के कतिपय संस्मरण

—डॉ० संकटा प्रसाद पाण्डेय, कानपुर

जनपद फतेहपुर के अन्तर्गत जाह्नवी तट पर स्थित है एक गांव असनी। परम्परा से चली आ रही मान्यता के अनुसार इस गांव को किसी समय अश्विनी कुमारों ने बसाया था। ब्राह्मण बहुल आबादी होने के कारण सदैव से ही वीतराग, तपस्वी, सन्त महात्माओं का इस गाँव में भिक्षाटन के लिये आना-जाना लगा रहता था। श्री गंगा जी के उस पार सिद्ध देवी श्री संकटा जी का मन्दिर स्थित है। गाँव से चन्द दूरी पर पश्चिम की ओर एक कुटिया स्वामी श्री कृष्णाश्रम जी के नाम पर बनी हुई है जो जल में थल की तरह चलते थे। इसी कुटिया में परिव्राजक के रूप में यतिगण आकर कभी-कभी विश्राम कर लिया करते थे। हमारे पितृचरण स्वर्गीय पं० श्री बैजनाथ जी पाण्डेय अपनी आस्तिकता के लिये प्रसिद्ध थे। उनका नित्यप्रति का नियम था कि कुटिया में स्थायी निवास कर रहे परम तपस्वी पूज्य स्वामी शंकराश्रम जी महाराज एवं पूज्य स्वामी अनंग बोधाश्रम जी महाराज का दर्शन अवश्य करते थे। किसी भी नवागत परिव्राजक, संन्यासी, महात्मा को भिक्षा कराने हेतु आग्रह पूर्वक घर में लाते थे।

घटना आज से ४४ वर्ष पूर्व की है। एक दिन हमारे पितृचरण ने आकर घर में बताया कि आज एक महात्मा जो गंगा तट पर ही विचरण करते हैं, कुटिया पधारे हुये हैं। बड़े ही अलौकिक आभायुक्त, अत्यन्त सरल, तत्त्ववेत्ता, ब्रह्मनिष्ठ, शंकर स्वरूप लगते हैं। मैं बैठा सुन रहा था कि आखिर ऐसे किस महात्मा का यह शब्द चित्र है जिससे पितृचरण इतने प्रभावित हुए हैं। पिता जी ने यह भी बताया कि अभी भिक्षा करने यहाँ पधारेंगे। मन में बड़ी उत्कण्ठा जाग्रत हुई कि कब महात्मा जी के दर्शन हों। घर में हमारी स्वर्गीया माता जी गंगा स्नान कर तुरन्त भिक्षा निर्माण कार्य में लग गयीं। मैं स्वयं केले के पत्ता, मिट्टी का कुल्हड़ गंगा जल से धोकर तैयार कर आसन इत्यादि लगा कर आने की प्रतीक्षा में बैठ गया। निर्धारित समय पर महात्मा जी आ ही गये। यही थे धर्म सम्राट, धर्म प्राण, वेदरक्षक, गोरक्षक, सनातन धर्मरक्षक, शंकरावतार पूज्य स्वामी श्री करपात्री जी महाराज। मेरी उम्र उस समय १६ वर्ष की थी।

पूज्य महाराज श्री को जब मैंने उस दिन प्रथम बार देखा तो मैं उनके तेजस्वी चेहरे को देखकर आत्म विभोर हो उठा। उनके मुख मण्डल पर आत्मिक उल्लास, हृदय की पवित्रता एवं अखण्ड सत्य की दिव्य चारुता प्रस्फुटित हो रही थी तपस्या की आँच में निखरा हुआ उनका शरीर बड़ा ही कमनीय एवं महनीय लगा। पूज्य महाराज श्री के पधारते ही मैंने साष्टांग प्रणाम किया। पूज्यवर ने मन्द मुस्कान के साथ पितृचरण की ओर संकेत करते हुए कहा कि यह बालक आप का है?

बड़ा सात्त्विक लगता है। तदुपरांत पूज्य महाराज श्री ने भिक्षा ग्रहण कर उसी दिन सायं नाव द्वारा तीर्थराज प्रयाग के लिये प्रस्थान कर दिया। पूज्यवर की सेवा में उन दिनों श्री गदाधर ब्रह्मचारी (अब स्वर्गीय) रहा करते थे। फिर तो जब कभी भी श्री चरण उधर से होकर गुजरते तो हमारे यहाँ कृपाकर भिक्षा अवश्य ग्रहण करते। यह उनकी हम लोगों के ऊपर अहेतुकी कृपा ही थी।

सरकारी सेवा में आ जाने के कारण एक दिन मुझे असनी छोड़कर कानपुर में ही अब स्थायी निवास बनाना पड़ा। धर्म प्रचार कार्य में अति व्यस्त रहने के कारण उसे और तीव्र गति प्रदान करने के लिये पूज्य महाराज श्री ने जब से कार द्वारा यात्रा आरम्भ किया उस समय से भी काशी से बृन्दावन, दिल्ली, हरिद्वार की ओर आते-जाते समय हमारे यहाँ प्रायः अवश्य पधारते रहते थे। इधर १० वर्षों से तो पूज्य महाराज म० प्र०, राजस्थान, पंजाब, दिल्ली की यात्राओं में कानपुर से गुजरते समय कृपाकर कम से कम एक रात्रि का विश्राम इस दास के यहाँ अवश्य करते एवं इस प्रवास के समय हमारी धर्मपत्नी के हाथ की बनाई भिक्षा ग्रहण करते थे।

पूज्य महाराज श्री में ह्री, श्री, धिति, कीर्ति आदि समस्त दैवी गुण एक साथ दिखाई देते हैं उन महामनीषी के बारे में कोई क्या लिख सकता है? सागर सीपी से नहीं उलीचा जा सकता। मेरे ज्ञान और कार्य दोनों के पूज्य महाराज श्री ही प्रखर प्रदर्शक रहे एवं पितृ परम्परा से आराध्य देव रहे हैं। आज उन तीर्थ पाद का पुण्य स्मरण करते हुये हृदय पुलकित हो उठता है। वे त्याग तपश्चर्या की साक्षात मूर्ति थे और थे सच्चे अर्थों में महात्मा। उनकी मेधा और संस्कृत वांगमय का अगाध जीवन्त ज्ञान ऐसा था जिसका उदाहरण आज मुझे नहीं दिखाई पड़ता है। मैं तो शास्त्र और साधना के दुर्लभ संयोग को ही स्वामी करपात्री जी के नाम से जानता हूँ। पूज्य महाराज श्री ने मानव जीवन के जो आध्यात्मिक सत्य का मूल्यांकन किया वही वास्तव में विश्व शांति का महान प्रेरणा स्रोत होगा। पूज्य महाराज श्री का कहना था कि सनातन धर्मी हिन्दुओं के लिये शास्त्र प्रमाण है। शास्त्रानुसार चलना ही कल्याण का मार्ग है और धर्म है।

पूज्य महाराज श्री के सम्पर्क में जो आता वह यही कहा करता था कि महाराज श्री उसी से सर्वाधिक स्नेह रखते हैं। **'अस सुभाउ कहुं सुनहुं न देखउं।'** दिल्लो, कानपुर, काशी आदि स्थानों का यज्ञ जिसने देखा होगा वही जानता है कि कैसा था वह यज्ञ समारोह। सम्भवतः इस तरह का यज्ञ पूर्व में युधिष्ठिर और समुद्रगुप्त ने सम्पन्न कराया था। फिर तो यज्ञों का प्रचलन चल पड़ा। पूज्य महाराज श्री की मेरे ऊपर सदैव से असीम कृपा रही है। कानपुर वाले यज्ञ में श्री चरणों ने मुझे पूछ-ताछ कार्यालय में सूचनाकर्ता के रूप में नियुक्त किया और कहा कि 'अयोग्यः पुरुषोनास्ति योजकस्तत्र दुर्लभः' तुम से अच्छा यह कार्य और कोई दूसरा सम्पादित नहीं कर सकता। पूज्य श्री चरण कुशल योजक थे। उसी समय की घटना है श्री चरण नाव पर सवार होकर गंगा जी को पार कर रहे थे। कि अचानक हाथ से 'श्री दण्ड' छूट कर श्री गंगा जी में गिर पड़ा। पूज्यवर को इतनी ग्लानि हुयी

कि जब तक दूसरा दण्ड निर्मित होकर नहीं आया तब तक उन्होंने अन्न, जल तक नहीं ग्रहण किया। उस समय नाव पर वर्तमान में पुरी शंकराचार्य जी महाराज (तब श्री पं० चन्द्र शेखर शास्त्री दवे) भी सवार थे। कानपुर के पूज्य स्वामी अद्वैतानन्द जी ने ले आकर 'श्री दण्ड' दिया था।

पूज्य महाराज श्री के महिमा का एक उदाहरण दूँगा। यह कि सन १९७७ की बात है हमारी कन्या सुश्री कुमारी रमा जिसको श्री चरण बहुत स्नेह, दुलार रखते थे को २६ दिन तक पेशाब नहीं हुआ इस अवधि में अपने उपचार के साथ-साथ भारत के प्रसिद्ध यूरोलाजी के सभी डाक्टरों को प्राय: दिखाया और शरीर के अवयवों का डॉक्टरी परीक्षण करवाया, एक्स-रे कराया लेकिन सब कुछ ठीक और सामान्य निकला। डॉक्टर लोग और मैं स्वयं हैरान थे कि आखिर जब पेशाब नहीं होता तो शरीर में कोई न कोई विकृति आनी चाहिये। पानी का भी पीना तो स्वस्थ व्यक्ति की तरह चल रहा था। कहीं से कोई दोष दिखाई नहीं पड़ता था। दो विदेशी डॉक्टरों को भी दिखाया तो उन लोगों ने कहा कि इस लड़की पर शोध कार्य होना चाहिये। आज तक मैंने इस तरह का केस देखा ही नहीं। हम बड़े धर्म संकट में थे। एक दिन पूज्य महाराज श्री के चरणों में निवेदन किया कि रमा को इन दिनों ऐसा हो गया है। पूज्यवर ने कहा कि वह तो सदैव प्रसन्न मुद्रा में दिखाई देती है। उसे क्या हो गया है? चिंता मत करो ठीक हो जायेगा। और श्री चरणों ने मुझे रमा सहित १९७७ के शारदीय नवरात्रों में काशी आने की आज्ञा प्रदान की। तदनुसार आज्ञा शिरोधार्य करके यथा समय काशी पहुंच गया। श्री चरणों ने नवरात्रों में ही काशी के पंडितों से एक अनुष्ठान करवाया और रमा को बुलाकर उसके पीठ पर तीन थपकियाँ लगायीं। तदुपरांत पूज्यवर ने कहा जाओ तुम ठीक हो जाओगी। वस्तुत: थोड़ी ही देर में उसने पेशाब का का अनुभव किया और पेशाब हुआ। मैं पूज्यर के कर-स्पर्श का चमत्कार देखकर आश्चर्यचकित रह गया। फिर आज तक कन्या को उस तरह की समस्या ही नहीं उत्पन्न हुई। ऐसे थे हमारे पूज्यपाद महाराज श्री। सिद्धियाँ तो उनकी गृहदासियाँ थीं। फिर भी कभी भी उन्होंने इन सभी चीजों का प्रदर्शन नहीं किया। हमारी ही तरह हजारों भक्तों ने उनकी कृपा का अनुभव किया होगा। 'हरि अनन्त हरि कथा अनन्ता।'

७ फरवरी १९८२ को प्रात: १० बजे काशी से फोन आया कि पूज्य महाराज श्री ब्रह्मीभूत हो गये। सुनकर सहसा विश्वास नहीं हुआ कि श्री चरण वस्तुत: हम लोगों को छोड़कर चले गये हैं। मध्याह्न में ही ट्रेन द्वारा चलकर रात्रि ८ बजे काशी पहुंच गया। श्री चरणों को देखा कि पाँच भौतिक शरीर का त्याग कर समाधिस्थ हो बैठे हुए हैं। मुखमण्डल पर ऐसी आभा थी कि वर्णन ही नहीं किया जा सकता। आज भूतभावन बाबा विश्वनाथ काशी को सूनी करके चले गये थे, सनातन वैदिक धर्म का प्रखर सूर्य अस्ताचल गामी हो गया था। श्री चरणों में श्रद्धांजलि अर्पित कर प्रार्थना किया कि हे मेरे आशुतोष ! हम लोगों में वह शक्ति पैदा करें जिससे स्वधर्म का पालन करते हुए सनातन धर्म की सेवा में यत्किंचित काम आ सका तो अपने को धन्य समझूंगा। यही तो आप की आज्ञा थी।

धर्म सम्राट पूज्य श्री करपात्री जी

—गणेश स्वरूप वानप्रस्थी
लुकरका, बांदा

इस धर्म प्राण देश भारतवर्ष में विदेशियों की दासता के प्रभाव से हमारे पुरातन सनातन धर्म का शनैः-शनैः ह्रास हो रहा था। वेदादि धर्म शास्त्रों पर से लोगों की आस्था डिग रही थी। पाश्चात्य संस्कृति सभ्यता भारतीय तत्वों पर हावी हो रही थी। समाज में वर्णाश्रम धर्म के सिद्धांतों, मान्यताओं, परम्पराओं एवं नियमों के प्रति शैथिल्य आ रहा था। ऐसे समय में पूज्य स्वामी श्री करपात्री जी महाराज का आविर्भाव हुआ। उन्होंने पारतन्त्र्यकाल में ही स्वराज्य प्राप्ति की चतुःसूत्री को बड़े सुन्दर प्रकार मे जनता के समक्ष रखते हुये विवेचन किया कि धर्मात्मा बनो, बुद्धिमान बनो, बलवान बनो एवं संगठित होकर सुखपूर्वक जीवन यापन करो। स्वामी जी ने आस्तिकवाद को ही विश्वशांति का मूलमन्त्र बताते हुये धर्म संघ, रामराज्य परिषद, धर्मवीर दल, धर्मसंघ शिक्षामंडल आदि अनेक आदर्श संस्थाओं की स्थापना की।। आपके त्याग एवं तपस्यापूर्ण जीवन एवं धर्मोपदेशों से प्रभावित होकर असंख्य लोगों का जीवन धर्माचरण में प्रवृत्त हो गया। 'ब्राह्मण को शूद्रवृत्ति, श्वानवृत्ति (नौकरी), सेवावृत्ति सर्वथा निषेध हैं'—महाराज श्री के इन उपदेशों का पूर्ण प्रभाव हमारे जीवन पर भी पड़ा और ब्राह्मणोचित संस्कारों के कारण स्कूली शिक्षा के अनन्तर उधर प्रवृत्ति नहीं हुयी। १९४९ से ही रामराज्य परिषद के प्रति अपना जीवन समर्पित कर दिया। और धर्म सम्राट पूज्य स्वामी श्री करपात्री जी महाराज के उपदेशानुसार हमने भी जीवन को इन पांच कार्यों के लिये समर्पित कर दिया है—गोरक्षा, धर्मरक्षा, रामराज्य स्थापना, समाज का संगठन एवं सुधार तथा आयुर्वेद की रक्षा। जैसा कुछ भी बन पड़ता है अपनी शक्ति भर सत्यनिष्ठापूर्वक (१) श्री अम्बिका धर्मसंघ संस्कृत विश्वविद्यालय (२) राष्ट्रीय विवाह समिति (३) राष्ट्रीय गोरक्षा समिति तथा (४) राष्ट्रीय रामराज्य सेना आदि से सम्बन्धित गतिविधियों के माध्यम से महाराज श्री के आदेशों का पालन करते हुये धार्मिक जनता जनार्दन की सेवा में प्रवृत्त हूँ। मेरे जैसे न जाने कितने अकिंचन लोगों का जीवन धर्म-सम्राट ने धर्म पथ की ओर अग्रसर कर कृतार्थ कर दिया। वे धन्य हैं जिन लोगों पर धर्म सम्राट की कृपा दृष्टि रही है।

स्वामी जी का यही उपदेश था कि—'हिन्दुओं को सावधान होकर संगठित हो जाना चाहिये। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र जगें और अपने कर्तव्य पालन में सन्नद्ध हो जायें। अग्रज ब्राह्मणों के अन्त्यज भाई हैं। वे भी अपने अधिकारानुसार संगठित हों। इसी प्रकार सभी भारतीय धर्मात्मा, बुद्धिमान, बलवान एवं संगठित हो जाएं तब ही हमें पूर्ण स्वराज्य की प्राप्ति होगी।

●●

वन्दे महापुरुष ! ते चरणारविन्दम्

—लेखकः—श्याम नारायण शास्त्री रामायणी-सा० रत्न, वाराणसी

अपने भारतवर्ष में सन्त, विद्वान्, योगी, महोपदेशक, सुधारक, एवं राष्ट्र हितार्थ अपने जीवन की समस्त सेवाओं को समर्पित करने वाले महापुरुषों की कमी कभी भी नहीं रही। किन्तु उक्त विशेषताएं विभिन्न प्रकार से अनेक महापुरुषों में भिन्न-भिन्न रूप में पायी गयीं। एक साथ ही उक्त समस्त विशेषताओं का समन्वित एवं संवलित रूप किन्हीं किन्हीं महापुरुषों में देखा गया। इसके ज्वलन्त उदाहरण कई शताब्दियों में परम श्रद्धेय ब्रह्मलीन अनन्त गुण-गण निलय धर्म सम्राट् अनन्त श्री विभूषित पूज्यपाद गुरुदेव श्री स्वामी करपात्री जी महाराज यतिचक्र चूडामणि अप्रतिम विद्वान्, सन्त, योगी, महोपदेशक, राष्ट्र हितार्थ सर्वस्वार्पण करने वाले भगवान् की विशिष्ट ही विभूति थे। उनके लिये वास्तव में—

जो कछु कहिय थोर सब तासु।

वस्तुतः वे जीवन्मुक्त थे। जीवन लीला संवरण काल के ६ मास पूर्व जब मैं वेद शास्त्रानुसन्धान केन्द्र केदार घाट वाराणसी उनके श्री चरणों में दर्शनार्थ गया तो महाराज श्री ने कहा अब तो संवरण काल आ गया। मैं समझ नहीं पाया। पूछा क्या बात है? कहा कि यही है। कह दिया ठीक है। और तुलसी की हजारिया माला लेकर जप करने लगे।

सन् ८१ सितम्बर से लेकर दिसम्बर पूरा एवं सन् ८२ जनवरी १३ तक संयोगवश हमारा कार्यक्रम कलकत्ता से ही बंकाक, सिंगापुर, क्वालालमपुर, ई० पो०, पीनांग, बाली, सुमात्रा, बोर्नियो, एवं जकार्ता का बना। इन स्थानों पर थोड़ा-थोड़ा समय देकर मानस एवं भागवत प्रवचन करके पुनः सिंगापुर आकर फीजी जाने की तैयारी कर रहा था कि एक अर्जेन्ट तार मिला काशी से कि परमश्रद्धेय श्री स्वामी जी महाराज अस्वस्थ हैं तुरन्त घर काशी वापस आवें। निदान आगे की यात्रा निरस्त करके सिंगापुर से बैंकाक, कलकत्ता होते हुये काशी आया। आते ही २ घण्टा घर रहकर स्नानादि से निवृत्त होकर श्री स्वामी जी महाराज के चरणों में उपस्थित हुआ। देखते ही स्वामी श्री महाराज जी ने कुछ अस्वस्थता एवं अन्य मनस्क मुद्रा में कुशल संक्षेपतः पूछकर कहा कि बिना हमसे पूछे ही क्यों विदेश यात्रा में गये? जैसे-तैसे डरते-डरते यथा-शक्य उचित समाधान हमने किया किन्तु सन्तुष्ट वे न हो सके और फिर ये कहा कि अच्छा इस समय प्रयागराज में स्नान पर्व है वहाँ जाकर जितना भी द्रव्य लाये हो उसका पंचमांश दान पुण्य स्नान यथाशक्य शतचंडी या सहस्रचंडी पाठ यज्ञ में व्यय करो और ब्राह्मणों द्वारा पाठ कराने के साथ ही साथ स्वयं भी पाठ करना। पंचमांश दान पुण्य अवश्य करो। क्योंकि शास्त्र का वचन है कि—

धर्माय यशसेऽर्थाय कामाय स्वजनाय च।
पंचधा विभजन् वित्तमिहामुत्र च मोदते॥

धर्म, यश, अर्थ प्राप्ति के स्रोत के लिये, अपनी कामना एवं परिवार के लिये ५ प्रकार से द्रव्य का विभाजन उभय लोक में कल्याणकारी होता है और प्रयागराज में स्नानादि सभी कार्यक्रम पूर्ण करके एकादशी को ही काशी आ जाना। आदेश स्वीकार करके २२ जनवरी माघ कृष्ण त्रयोदशी शुक्रवार को सायं प्रयाग पहुंच गया। वहाँ पर ६ ब्राह्मणों के द्वारा ११ दिन में शतचंडी अनुष्ठानपूर्ण कराके बुद्धवार ३ फरवरी सन् ८२ माघ शु० १० को सायं काशी आया। गुरुवार एकादशी को जब परम श्रद्धेय अनन्त श्री विभूषित स्वामी जी महाराज के श्री चरणों में जाकर प्रणाम किया मेरा मुंडित केश देखकर परम प्रसन्न हुये। कहा सब आनन्द से हो गया न। मैंने कहा जी हाँ भगवन्! सब ठीक ढंग से हो गया। अब क्या आज्ञा है?

महाराज श्री ने कहा विनय पत्रिका के २-४ पद सुनाओ। सुनाने पर प्रसन्न होकर कहा अब यहाँ पर भी काशी में स्नान दान यथाशक्य करो और कल सायंकाल ६ बजे विनय के पद एवं कुछ कथा सुनाने आओ। द्वादशी शुक्रवार ५ फरवरी को सायं ठीक ६ बजे पहुंचने पर महाराज श्री ने प्रसन्न मुद्रा में ४ पद जो संकेत किये सौभाग्य से वे हमें स्मरण थे और हमने सुनाया। फिर आदेश हुआ श्री भरत चरित्र थोड़ा सुनाओ। हमें संकोच तो बहुत हुआ किन्तु आज्ञापालन पूर्वक ४० मिनट सुनाया भी। निदान चरणों में प्रणाम करके जब चलने लगा तो फिर महाराज श्री ने कहा कल इसी समय पुनः विनय के पद एवं कथा सुनाना। ६ फरवरी ८२ माघ शु० १३ शनिवार को पुनः जब चरणों में उपस्थित हुआ तो प्रथम विनय के ३ पद एवं सूरदास जी का एक पद श्रवण किया। और कहा कि अब कथा सुनाओ। हमने कहा कौन से प्रसंग पर सुनायें तो फिर मुस्कराकर बोले अब दशरथ मरण सुनाओ।

बड़ा ही संकोच हुआ। अन्त में मैंने कहा भगवन्! दशरथ मरण की कथा तो कभी नहीं सुनाता।

उत्तर मिला। क्यों? ये रामायण में नहीं है क्या?

मैंने कहा है तो किन्तु ये प्रसंग नहीं सुनाते।

फिर स्वामी श्री महाराज ने कहा—ये तो परम मंगलमय प्रसंग है। क्यों आनाकानी करते हो? सुनाओ।

फिर मैंने कहा--भगवन्! प्रायः लंकादहन, दशरथ मरणादि नहीं सुनाते। अनिष्टा शंका के कारण।

स्वामी जी ने कहा--नहीं नहीं परम मंगलमय प्रसंग ये है यही सुनाओ। अन्त में विवश होकर सुनाना प्रारम्भ किया इतनी देरी की चर्चा में हमें भी थोड़ा सोचने का अवसर मिला। विश्व विश्रुत विभूति को एवं साथ ही साथ अनन्त विद्यावारिधि को हम क्या सुनायेंगे? ध्यान आया। किन्तु उस दिन विचित्र चमत्कार ये देखने को मिला कि हमने कथा भी—

वन्दौं अवध भुआल, सत्य प्रेम जेहि राम पद ।
बिछुरत दीन दयाल, प्रिय तनु तृन इव परिहरेउ ॥

यही सोरठा प्रारम्भ किया श्रोता वक्ता दोनों को ही कथा में परमानन्द मिला । दोनों ओर अश्रु पात एवं पुलकावलि ही क्या ?

ममगुनगावत पुलक शरीरा । गद्‌गद् गिरा नयन बह नीरा ॥

इस चौपाई को सुनाते तो थे किन्तु क्रियात्मक रूप से उसी दिन ही ये लगी । इस प्रसंग पर मेरी कोई तैयारी नहीं थी किन्तु श्री गुरुदेव भगवान् को ये सुनना था इस कारण उन्होंने ही शक्ति दी। कथा सुनाने की । मध्य में ३ बार बहुत ही करुणार्द्र होकर इस चौपाई को प्रेमार्द्र भाव से पुलकगात एवं घर्घरित कण्ठ से जोर-जोर से कहा—

ता रघुनन्दन प्रान पिरीते । तुम बिनु जियत बहुत दिन बीते ॥

और ये कथा भी ५० मिनट तक हुयी । कथा तो और कहते किन्तु नाक, आँख, कण्ठ सभी भर चुके थे । कथा बन्द की । महाराज श्री ने भी परम प्रसन्न होकर वहीं रक्खी हुयी एक टोकरी का पूरा प्रसाद दिया । कहा सबको ही बांट देना । अब जाओ । हमने कहा भगवन्, अभी ८-१० दिन तक तो काशी रहना ही है । कल कब आऊं श्री चरणों में ?

उत्तर मिला कल मत आना । आवश्यकता नहीं है । हां एक बात है तुम कई बार कह चुके हो कि स्मरण शक्ति शिथिल हो रही है तो कल हा माघ शुक्ल चतुर्दशी रवि पुष्य योग है । इस मुहूर्त में ब्राह्मी सेवन एवं सरस्वती मन्त्र साधना का उत्तम योग कई वर्षों के बाद आ रहा है—

माघ शुक्ल चतुर्दश्यां पुष्यार्के रविवासरे ।

शास्त्र का वचन है इस समय ब्राह्मी का सेवन कर लेना ही चाहिए । ब्राह्ममुहूर्त में ही इसका सेवन एवं सरस्वती मन्त्र जप भी कर लेना परमावश्यक है, घर जाकर सब साधन ठीक करके का० हि० वि० वि० में भैषज्योद्यान में ब्राह्मी होगी, सब व्यवस्था कर लो और अब जाओ मूड़ खराब मत करो —

हा ! रघुनन्दन प्रान पिरीते । तुम बिनु जियत बहुत दिन बीते ॥

फिर इस चौपाई का जप करने लगे । हाथ से इशारा किया जाओ चलते चलते फिर मैंने धृष्टता की । पूछा भगवन् ! कल कब आऊं फिर ?

उत्तर मिला—कह दिया न । कल मत आना । आवश्यकता नहीं ?

निदान प्रसाद लेकर घर आए । अपने बगल में रहने वाले पं० दीनानाथ जी पाण्डेय को ब्राह्मी वाली सारी विधि बताई उनके दो पुत्रों एवं अपने चि० राम नारायण को साथ लेकर हमने एवं पाण्डेय जी ने उसका प्रयोग किया । कहीं पर कोई त्रुटि रह गयी होगी । लाभ तो हमें नहीं मिला । रात्रि भर जागरण किया ३ बजे ब्राह्ममुहूर्त में हम लोग अस्सी पर जाकर गंगा जी में प्रयोग भी किए ।

घर आये पाठ पूजन कर रहे थे कि ६ बजे के लगभग चि० राम नारायण ने हमें कहा—प्रातः ६ बजे माघ शुक्ल १४ रविवार पुष्य नक्षत्र ७ फरवरी ८२ को अत्युत्तम मुहुर्त में महाराज श्री अपने श्री रामकृपेश्वर मन्दिर में भगवान् के सन्निधान एवं गंगा जी का दर्शन करते हुये शिव शिव शिव जप ३ बार करते हुये, शिव में लीन हुये। 'संवरण काल आ गया की स्मृति एवं कल मत आना। आवश्यकता नहीं।'

क्या पता था कि ये संकेत इसी दिशा में है। आज भी वह स्वर ज्यों का त्यों कल मत आना। आवश्यकता नहीं। हृदय में गूंज रहा है। क्या कहें ?

लोकोत्तराणां चेतोसि को हि विज्ञातु महंति।

अब कहाँ मिलगी वह करुणा, कृपा, उदारता, समस्त शंका समाधान की परम्परा एवं एक साथ योग, भक्ति, ज्ञान, कर्म काण्ड का समन्वित रूप। 'मन की मन ही मांहि रही' क्या कहें—

मनसि वचसि काये पुण्य पीयूष पूर्णा—स्त्रिभुवनमुपकार श्रेणिभिः पूरयन्तः।
पर गुण परिमाणून पर्वतीकृत्य नित्यं, निज हृदि विकसन्तः सन्ति सन्तः कियन्तः॥

विवश होकर कहना ही पड़ता है कि— **अब न ओलितर आवत कोऊ।**

आज हमारा सनातन धर्म जगत् उस महाविभूति के लीला संवरण काल का स्मरण करके वस्तुतः अपने को न जाने क्या क्या खोया हुआ समझता है कोई पारावार नहीं—

ऐ अजल तुझसे बहुत ये सख्त नादानी हुई।
फूल तोड़ा वो कि गुलशन भर में वीरानी हुई॥

मुझे तो सबसे बड़ा दुःख इसी बात बात का है कि—

यह सब भी इन आंखिन आगे। तऊ न तजा तनु जीव अभागे॥

बेचारी लेखनी की सामर्थ्य सीमित भाव अपरिमित। बस

●●

टिप्पणी—(लेखक के विचार स्वयं के हैं। सम्पादक का सहमत होना आवश्यक नहीं है।)

धर्म सम्राट् स्वामी श्री करपात्री जी महाराज

—नारायण स्वरूप ब्रह्मचारी, अन्तेवासी
द्वारका-शारदा पीठ, पश्चिमाम्नाय, द्वारका

परतन्त्र भारत में सनातन वैदिक धर्म के ह्रास की पराकाष्ठा थी। 'धर्मग्लान्यधर्माभ्युत्थान' की भयावह परिस्थिति में यह पुरातन सनातन हिन्दू जाति बुरी तरह ग्रस्त थी। 'यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत। अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम्'—की अपनी प्रतिज्ञा को पूर्ण करने के लिये बालक हर नारायण के रूप में एक विभूति १९०७ ई० में अवतरित हुयी। अलौकिक प्रतिभा के बल पर सम्पूर्ण विद्याओं को आत्मसात करके २४ वर्ष की युवावस्था में ही दण्डग्रहण करके 'अभिनव शंकराचार्य' के रूप में प्रतिष्ठित होकर पदाति धर्म यात्राएं कीं। अधार्मिक बिलों का सक्रिय घोर विरोध किया। अनेक ऐतिहासिक महायज्ञों के अनुष्ठान सम्पन्न कराये। सम्पूर्ण भारत में भ्रमण करके वैदिक विद्वानों को संगठित करके उन्हें निर्भय होकर स्वधर्म पालन में निरत रहने की प्रेरणा दी। अनेक सर्व वेद शाखा सम्मेलनों का आयोजन कर बौद्धिक धरातल पर सनातन वैदिक सिद्धान्तों की सर्वश्रेष्ठता सिद्ध करके अवैदिक नास्तिक मतों की बाढ़ को रोकने का भीष्म प्रयास किया। धर्म भीरु चिरकाल से दबाये गये सनातनी समाज को आलस्य एवं उपेक्षा का भाव त्याग कर संघर्षशील बनने की प्रेरणा देकर इन महापुरुष ने चिरप्रसुप्त हिन्दू जाति में नव चेतना का संचार किया। वेद हमारी संस्कृति सभ्यता के मूलाधार हैं, वेद अकृत्रिम हैं, अपौरुषेय हैं, अपरिवर्तनीय है—अतः परमप्रमाण हैं—इसका डिमडिम घोष कर वेद विरोधियों को परास्त किया। अनेकों शास्त्रार्थों में वैदिक विजय पताका फहराकर धर्म का डंका बजाया। कठिन से कठिन व्रतों का स्वयं पालन कर इस भौतिक देह को दिव्य-देव तुल्य पवित्र बनाकर त्याग-तपस्या-अपरिग्रह का आदर्श प्रस्तुत किया। अन्न, जल, लवण-मिष्ठान्नादि का भी परित्याग कर समस्त इन्द्रियों को जीतकर यतिचक्रचूड़ामणि के पद पर प्रतिष्ठित होकर धर्मानुष्ठान आदि के मानदण्ड स्थापित किये। कोटि-कोटि जनता में आस्तिकता के भावों को सुदृढ़ कर उन्हें धर्मपरायण जीवन व्यतीत करने के लिये प्रेरित किया। अनेक संस्कृत महाविद्यालयों की स्थापना कर कर्मकाण्ड उपासना काण्ड एवं ज्ञान काण्ड के सैकड़ों विद्वान देश को दिये जो आज वैदिक विधि विधान पूर्वक स्वधर्मानुष्ठान में निरत हैं। दीनहीन उपेक्षित ब्राह्मण समाज में विद्या-बुद्धि के बल पर पुनः आत्मभिमान पूर्वक जीवन जीने का स्वाभिमान उत्पन्न किया। गोहत्या बन्दी के लिये जीवन पर्यन्त कठोर संघर्ष कर जेल यातनाएँ सहन कीं। मठ-मन्दिर-पीठ इत्यादि के संगठन जो कि शिथिल पड़ गये थे उन्हें पुनः संगठित किया। अनेक सुप्त पीठों का उद्धार किया। आद्य शंकराचार्य जी द्वारा धर्म रक्षण के लिये स्थापित विभिन्न मठों एवं पीठों पर आचार्यों को अभिषिक्त कराया जिससे स्वतन्त्र भारत में भी सनातन वैदिक धर्म का प्रकाश विश्व को मिलता रहे। धर्म के प्रचार प्रसार हेतु विपुल साहित्य की रचना की। चारों दिशाओं में स्थापित धर्म पीठों के जगद्गुरु शंकराचार्यों

को धर्म संघ के माध्यम से एक धर्म मंच पर एकत्र करने का महान् ऐतिहासिक धर्म कार्य सम्पन्न किया। आज देश में धर्म विरोधी विपरीत उल्वण वातावरण है, ऐसे समय में भारी मात्रा में अधार्मिक साहित्व की रचना हो रही है, विभिन्न विभिन्न प्रकार से लोग छद्मवेश में धर्म के नाम पर अधर्म का प्रचार प्रसार कर रहे हैं—'तुलसी के शब्दों में जिमि पाखण्ड विवाद से लुप्त भये सद्ग्रंथ'—ऐसी विषम परिस्थिति में उन छद्मवेशधारी तथाकथित धर्मसेवियों को खुले मन्चों से शास्त्रार्थों की ललकार देकर अस्त किया तो पवित्र लेखनो के माध्यम से उनका सैद्धान्तिक खण्डन कर उन्हें मौन होने पर विवश कर दिया। सारांश। वह दिव्य विभूति, अवतारपुरुष धर्म के सर्वोच्च सिद्धान्तों पर आरुढ़ धर्म सम्राट्,अपने क्रिया कलापों से धर्मग्लान्यधर्माभ्युत्थान की निवृत्ति करके और भविष्य में इस पर आचरण करते रहने की प्रेरणा देकर, राष्ट्र को धर्म की जय हो, अधर्म का नाश हो, प्राणियों में सद्‌भावना हो, विश्व का कल्याण हो, गोवध बन्द हो, भारत अखण्ड हो, मन्दिरों की मर्यादा सुरक्षित रहे, धर्म में हस्तक्षेप न हो विधान शास्त्रीय हो—हर हर महादेव के पवित्र नारे देकर फरवरी १९८२ में ब्रह्म रूप हो गये। उनसे प्रार्थना है कि वह हमें सदा धर्म कार्यों में सलंग्न रहने की प्रेरणा देते रहें।

●●

ज्ञानावतार पूज्य गुरुदेव

—ब्रह्मचारी राम चैतन्य 'विरक्त', वाराणसी

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत। अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम्॥

(श्रीमद्भागवत गीता)

यदा यदैव कालेनधर्मग्लानिर्भविष्यति। धर्मं संस्थापयिष्यामिह्यवतारैस्तदा तदा॥

(भागवत-महात्म्य)

यदा यदेह धर्मस्यक्षयो वृद्धिश्चपाप्मनः। तदा तु भगवानीश आत्मनं सृज्यते हरिः॥

(भागवत)

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति जैमिने। अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजत्यसौ॥

(मार्कण्डेय पुराण)

उपर्युक्त तथ्य अवतारवाद के प्रबल पोषक हैं। इसके अतिरिक्त केनोपनिषद् वर्णित यक्षोपाख्यान भी अपना विशिष्ट महत्त्व रखता है। अतः अवतारवाद के खण्डक बन्धुओं की बात आपाततः रमणीय ही प्रतीत होती है। इसके साथ-साथ शास्त्रों में भगवान के ज्ञानावतार का भी वर्णन आता है, यथा—सतयुग में भगवान दक्षिणामूर्ति, त्रेता में भगवान दत्तात्रेय, द्वापर में भगवान वेदव्यास, एवं

कलियुग में भगवान आद्यशंकराचार्य ज्ञानावतार थे। 'आवश्यकता आविष्कार की जननी होती है।' यह उक्ति समय-समय पर चरितार्थ होती रही है। कुछ समय पूर्व ऐसा समय आया कि एक सज्जन ने वेद के अर्थ का अनर्थ करके सनातन मर्यादाओं को मटियामेट कर दिया, उसे अपने अनुरूप अनुयायी भी मिल गये और वे सब एक सम्प्रदाय के रूप में परिवर्तित हो गये। समय की पुकार थी किसी ऐसी अलौकिक शक्ति का प्राकट्य हो जो वेद के वास्तविक अर्थ का प्रतिपादन करके सनातन मर्यादाओं की स्थापना करे और अनर्गल प्रलापकों को मुंह तोड़ उत्तर दे। ऐसे समय में वैशारद्यऽनवद्य, सत्वैकतान, परमर्षिवर, सुमेधा, निर्व्याज भक्ति रस सार, श्रीमद्भागवताभिध पीयूष पारावार, निखिल शास्त्र मर्मज्ञ, विरुद्ध धर्माश्रय, धर्म स्वरूप, प्रणतार्तिहर, दृढ़ प्रतिज्ञ, शास्त्रार्थकला दक्ष, ज्ञान-भक्ति-कर्मस्वरूप, पर्यटनशील, विश्ववन्द्य, संस्कृत एवं संस्कृति के उन्नायक, अशेषविद्यामहर्णव, द्वादशदर्शन पारावार पारीण, जगद्गुरुणांगुरू, सर्वतन्त्र स्वतन्त्र, सरस्वती के वरद्पुत्र, निगमागम शास्त्र पारदृश्वा, यतिचक्र चूड़ामणि, अनन्त श्री मण्डित महामहिमा महिम, परमहंस परिव्राजकाचार्य, प्रातः स्मरणीय, परम पूज्य पाद, परम श्रद्धेय गुरुवर्य धर्म सम्राट स्वामी करपात्री जी (हरिहरानन्द सरस्वती जी) का प्राकट्य हुआ। आप वाणी और लेखनी दोनों के ही धनी थे। दोनों में ही धर्म के रहस्यों के उद्घाटन करने का अलौकिक क्षमता थी। वे हृदयावर्जिका विमला वाणी के जैसे प्रेरक मनीषी थे। वैसे ही ललित ललाम लेखनी के धनी। वैदिक शास्त्र मर्म के उन्मीलन में समर्थ वाग्मी थे जिनके विषय में कहा गया है, "वाग्मो भवति वा न वा।" वे मात्र नीरस वेदांती नही हीं थे, प्रत्युत वे सौन्दर्य सार-सर्वस्व रसामृत मूर्ति निकुंज बिहारी की परम पावन निकुंज लीला के भक्ति-रसालुप्त सहृदय उपासक थे, जिनकी अमृतवर्षिणी कमनीय वाणी से भक्ति रस के मधुमय कण बिखरे पड़ते थे।

उनके श्री विग्रह के आविर्भाव, अध्ययन, तपस्या, एवं विभिन्न कार्यकलापों का वर्णन, उनके द्वारा विश्व कल्याण हेतु अनेकानेक शास्त्रीय वैदिक अनुष्ठानों का वर्णन, फाल्गुन शुक्ला ३, संवत १९९१ में संन्यास दीक्षा ग्रहण का वर्णन, हिन्दू कोड, भारत विभाजन एवं गोहत्या विरोधी प्रबल आंदोलनों का वर्णन, उनके जीवन चरित्र में वर्णित होगा। पुनः-पुनः वर्णन से यद्यपि हृदय की पवित्रता के साथ-साथ संकल्प में दृढ़ता भी आती है परन्तु पिष्टपेषण दोषवशात मनोभावों के उस अंश को वहाँ देने का लोभ संवरण करना पड़ रहा है।

मुझे विद्याध्ययन हेतु तीन वर्ष तक नरवर सांगवेद विद्यालय में रहने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। वहाँ के प्रमुख व्यक्तियों ने बताया कि स्वामी जी स्वाध्याय काल में भी घोरतप करते थे। माघ के महीने में रात-रात भर गंगा जी के किनारे बैठ कर तप करते, ठण्ड के कारण शरीर अकड़ जाता था, जब भोर में स्नानार्थी गंगाजी पर जाते थे तब स्वामी जी को यथावत उठकर लाते, इनके चारों ओर अग्नि प्रज्वलित की जाती, तब कहीं चेतना आती थी शरीर में। इसी प्रकार ग्रीष्म में तप्त बालू पर बैठकर तप करते थे। तदनन्तर उत्तराखण्ड में हिमालय की हिमाच्छादित तलहटियों में बैठ कर घोर तपस्यारत रहकर आत्म ज्ञान प्राप्त किया। श्री करपात्री नाम से प्रतिष्ठित होकर अनेकानेक

महान वैदिक यज्ञों के अनुष्ठान सम्पन्न कराये। धर्म यात्राएं, भाषण, लेखन आदि के साथ संतुलित नियमित एवं मर्यादित जीवनचर्या स्वामी जी की अद्वितीय थी। भिक्षा भी सायं ५ बजे सूक्ष्म सी लेते थे कभी-कभी तो केवल बिल्व पत्र एवं दूर्वादल का प्रयोग करते थे। छः बजे से विद्वानों, विद्यार्थियों को पाठ पढ़ाते थे। मुझे भी पाठ-श्रवण का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। आप श्री के पढ़ाने की शैली अत्यन्त सुन्दर एवं विलक्षण थी, गम्भीरतम विषय को भी सरलतम बनाकर समझाना, पढ़ाना स्वामी जी की विशेषता थी। ब्रह्मस्वरूप होने के ४-५ दिन पूर्व तक आप हम सब को अपने अलौकिक पांडित्य प्रसाद से लाभान्वित कराते रहे।

एक बार पाठ के समय पुरी पीठाधीश्वर शङ्कराचार्य जी विराजमान थे। इन पंक्तियों के लेखक ने 'स नु दीर्घकाल-नैरन्तर्य सत्कारासेवितो दृढ़ भूमिः'—इस सूत्र को उठाया, फिर क्या था, महाराज जी ने योग, न्याय, वेदांत, एवं मीमांसा के जटिल सूत्रों को उठाया विवेचन किया। जिनको सुनकर अत्यन्त आश्चर्य हुआ कि रुग्णावस्था में भी इतनी स्मृति। माघ मेले में जाने से पूर्व जगद्गुरु शङ्कराचार्य स्वामी श्री स्वरूपानन्द सरस्वती जी महाराज श्री के दर्शनार्थ पधारे थे। हास्य-मिश्रित वार्तालाप होता रहा। तत्पश्चात् महाराज जी ने कहा—"हमने अपने सब विचार 'वेदार्थ-पारिजात' में लिपि बद्ध कर दिये हैं, उसके आधार पर आर्य-समाजियों से शास्त्रार्थ किमा जा सकता है।"—इस पर शंकराचार्य जी ने कहा—'अगर आप श्री दयानन्द जी के समय में होते तो यह सम्प्रदाय ही नहीं चलता।"—यह सत्य भी है। महाराज जी ने दिल्ली, हरिद्वार आदि स्थानों पर शास्त्रार्थ में विपक्षियों को परास्त भी किया और और शास्त्रार्थ निरूपण द्वारा अपनी विद्वत्ता प्रगट थी।

उनके शिव-स्वरूप होने पर विश्व की अपूरणीय क्षति हुई है और सनातन धर्म का तो सूर्य ही अस्त हो गया। जैसा कि उन्हों के सर्वश्रेष्ठ ब्रह्मचारी एवं शास्त्र-विषयक मन्त्रणादाता श्रीमार्कण्डेय ब्रह्मचारी जी ने उनके शिव स्वरूप होने पर कहा था, "अस्तङ्गतो गीष्पतिः।" महाराज श्री काशी की भक्तिमार्गीय, भागवती, अद्वैती संन्यासियों की परम्परा के मुकुटमणि के रूप में विराजमान थे। उनके युगलाचरणारविन्दों में परार्ध-परार्ध साष्टांग दण्डवत् और श्लोक-सुमन भेंट निवेदन करते हुये क्षमा-याचना करता हूँ -

यत्कीर्त्तिस्तिलकायते त्रिभुवने तापत्रयोन्मूलनी,
यद्वाक्यामृत जीवनीः जनयते स्वान्ते संतां कौतुकम्।
यत्पादाब्जरजः प्रसाद कणतः कैवल्यमापद्यते,
सोऽयं कोऽपि महेश्वरो विजयते श्रीपाणिपात्रो गुरुः।
शिव! शिव!! शिव!!!

●●

कथाश्रोता—कृष्ण सर्प

—जगदीश प्रसाद दैवज्ञ, मंत्र शास्त्री
सभापति—रामदल संस्कृत महाविद्यालय, दरीबा, दिल्ली
सभापति—इन्द्रप्रस्थीय गौड़ ब्राह्मण सभा, दिल्ली

साधूनां दर्शनं पुण्यम्—संसार में साधुजनों तथा महापुरुषों के दर्शन मात्र से जीवों का कल्याण तथा अनन्त पुण्यों की प्राप्ति होती है ऐसा पुराणों का कथन है। यतिचक्र चूड़ामणि अनन्त श्री विभूषित १००८ स्वामी श्री करपात्री जी महाराज के श्री चरणों में बैठकर असंख्य नास्तिक एवं आस्था-विहीन मनुष्य ईश्वर परायण तथा धार्मिक निष्ठावान् होते देखे गये हैं। आज की पाश्चात्य परम्परा एवं विचारों में प्रवाहित होने वाले अनेक सम्प्रदाय एवं समाज से महाराज श्री ने भारतीय आर्ष सिद्धान्तों के आधार पर वैज्ञानिक रीति से भारत भूमि को सर्वोपरि बताया। सौभाग्य से मुझे श्री चरणों का सान्निध्य प्राप्त करने का अनेक बार अवसर मिला। एक समय की घटना है कि महाराज श्री अपनी तपोभूमि कोयलघाटी में नित्य कार्य क्रमानुसार कथावार्ता के उपदेश से जनमानस को कृतार्थ कर रहे थे कि उन्हीं दिनों एक कृष्ण सर्प उनके आसन के निकट एक वृक्ष के ऊपर बैठकर प्रतिदिन कथा श्रवण किया करता था। संयोग से किसी श्रोता की दृष्टि उस पर सहसा पड़ी तो महाराज जी ने संकेत किया कि यह सर्प नित्य दत्तचित्त होकर कथा का पूर्ण लाभ प्राप्त करता रहा है जबकि आप लोग इतनी एकाग्रता से अपने-अपने आसनों पर स्थिर नहीं है। आश्चर्य था कि महाराज जी दूसरे की मन: स्थिति को अपने तपोबल से स्वयं ही जान जाते थे। वे एक उदारचेता, सनातन संस्कृति के परिपोषक थे। अनेक धर्मावलम्बियों से अपने धर्म को आर्ष वैज्ञानिक प्रणाली पर सर्वाधिक महत्वपूर्ण सिद्ध करना आपके वैदुष्य एवं प्रखर मेधा का परिचायक रहा है। इसके अतिरिक्त, इस भारत धरित्री पर आप शीर्षस्थ (मूर्धन्य) सनातन संस्कृति संरक्षक, वेद एवं शास्त्रों के मर्मज्ञ तथा भगवती त्रिपुर सुन्दरी के परमोपासक थे। आप समयानुसार मानव समाज की अनेक विध धर्म संकटों से रक्षा करते रहे। गोरक्षा आन्दोलन के प्रवर्तक तथा गोरक्षार्थ अनेक भीषण यातनाओं को सहते रहे। ऐसी त्याग, तपोमूर्ति संसार में बहुत कम दृष्टिगत होती है। श्री स्वामी जी अनेक व्यावहारिक नीतियों में निष्णात थे, यह इनकी विलक्षण प्रतिभा का लक्षण था। ऐसे अद्भुत सन्तों की संगति मानव समाज में बहुत कम उपलब्ध हो पाती है।

पूज्य श्री चरणों की लोक-लीला

किन्हें-किन्हें लिखें, किन्हें-किन्हें छोड़ें

—आत्म चैतन्य ब्रह्मचारी, दण्डीवाड़ा, कानपुर

मेरे परम आराध्य, लोकोत्तर चरित, विश्ववन्द्य, प्रातः स्मरणीय पूज्य स्वामी श्री करपात्री जी महाराज आत्मज्ञान के उद्‌भट व्याख्याता सन्यासी, महासिद्ध मन्त्र द्रष्टा वैदिक ऋषि थे। वे भारतीय ज्ञान क्षेत्र के अलौकिक महापुरुष थे। शंकराचार्य, रामानुजाचार्य, मधुसूदन सरस्वती की गौरवमयी परम्परा की अपूर्व कड़ी थे। और हम कह सकते हैं कि अपनी तेजस्विता तथा दिव्य ज्ञान के फलस्वरूप ही उन्होंने बीसवीं सदी के पूर्वार्द्ध में जबकि नास्तिकों का बोल बाला था और यहाँ तक कि सरकार की धर्म विरोधी नीतियों के कारण सनातन हिन्दू धर्म संकट में था, स्वामी जी ने सनातन धर्म को ह्रास से बचा लिया अपरोक्षानुभूति की जागरित प्रेरणा ही उनके जीवन का अन्यतम वैशिष्ट्य था वे देह धारण करके भी विदेह थे, मानव होकर भी अमानव थे, लोकवासी होते हुये भी लोकोत्तर थे। उनके, जीवन वाणी और प्रचार के भीतर सनातन वैदिक धर्म के संरक्षण तथा सम्प्रसारण की अमोघ शक्ति निहित थी। आज वेदान्त धर्म की केवल दार्शनिकता ही नहीं बल्कि अनुष्ठान की ओर से जो कुछ श्रेष्ठ, सबल तथा गौरव का विषय है, उस सभी को इन पूज्य श्री चरणों के अवदान रूप से स्वीकार करते हुये हम गर्व का अनुभव करते हैं आधिकारिक पुरुष भगवदिच्छानुसार समाधिभूमि से उतरकर जितने दिन जीव-लोक में रहते हैं, उतने दिन उनकी एक ही कामना रहती है—जीव जगत का कल्याण साधन। वे यदि केवल समाधिस्थ होकर रह जायें तो इससे तो लोक शिक्षा होगी नहीं। इसलिये वे सर्वत्र ब्रह्मदृष्टि लेकर जगत में रहते है। ज्ञान के बाद जो भक्ति है वही भक्ति की व्यंजना होती है। पूज्य श्री चरणों के जीवन में हम देखते हैं कि वे दैवी इच्छा से व्यावहारिक क्षेत्र में भक्ति और भक्त के भाव का आश्रय लेकर विचरण कर रहे थे। भक्ति को विलासभूमि बनाकर वे अपना चित्त 'एकमेवा-द्वितीयम्' ब्रह्म में ही समाहित करते थे। भक्ति शास्त्र पर उनकी अनेक रचनायें हैं। उनकी रचनाओं का आकलन मैं अल्प बुद्धि नहीं कर सकता। श्री मद्‌भागवत आदि पर प्रवचन करते हुये वे स्वयं रसमय एवं रस तरल हो उठते थे। उनके जीवन में पुनः हम देखते हैं कि हमारे देवी देवताओं के आवास स्थल तीर्थ भूमियों की महिमा को पुनः प्रतिष्ठित करने के लिये उन्होंने स्वयं तीर्थ स्वरूप होते हुये भी तीर्थ पर्यटन किया। उन्होंने धीर शान्त पदक्षेप से समग्र भारत, काश्मीर, नेपाल और अखण्ड भारत में यात्रा करके सनातन धर्म में जान फूंक दी। पूजा आदि का प्रचलन कर विरुद्ध मतावलम्बियों के साथ शास्त्रार्थ तथा शास्त्र व्याख्या आदि के द्वारा सनातन वैदिक धर्म की शीतल छाया में आश्रय प्रदान तथा कुमार्गियों का सन्मार्ग में परिचालन आदि किया है।

यह मेरे जन्मान्तरीय प्रबल पुण्यों का ही सर्वोत्कृष्ट फल माना जायगा कि उनकी सेवा का सुअवसर तथा उनके सदुपदेशामृत वचनों का श्रवण एवं शुभाशीर्वाद प्राप्त हुआ। 'राम सदा सेवक रुचि राखी' यह उन्हीं श्री चरणों की ही कृपा थी कि मुझे स्वीकार लिया। यूं तो १९७२ में ही पूज्य

श्री चरणों से दीक्षा प्राप्त कर यत्र-तत्र तीर्थाटन करता रहा। उन्हीं दिनों वर्तमान में द्वारिका के जगद्गुरु शंकराचार्य पूज्य स्वामी श्री स्वरूपानन्द सरस्वती जी महाराज ने पूज्य श्री चरणों से कहा कि आत्म चैतन्य ब्रह्मचारी यदि बिहार प्रान्त में विधर्मियों द्वारा बलात् धर्म परिवर्तन को रोकने हेतु और स्वधर्मानियन का कार्य वनवासियों के बीच करें तो अच्छा रहेगा। पूज्यवर की आज्ञा मिल गई और मैंने वहाँ जाकर इस दिशा में कुछ कार्य किया। उल्लेखनीय है कि द्वारिका के जगद्गुरु जी छोटा नागपुर डिवीजन (बिहार) में वनवासियों के कल्याण में रत हैं। सन् १९७४ में पूज्यवर ने काशी आने के लिये आदेश दिया और मैं मार्च महीने तक पहुंच गया। इसी बीच 'सन्मार्ग' दैनिक (काशी) के नीति निर्धारण का कार्य मेरे ऊपर सौंपा गया और अध्ययन स्वाध्याय भी चलता रहा। प्रातः सायं श्री चरणों की सेवा का भी सुअवसर प्राप्त होता ही रहता था। केदार घाट स्थित महारानी विजयानगरम ने जिस अपनी कोठी को श्री चरणों में अर्पित किया था उसी में जून १९७६ को गंगा दशहरा के दिन श्री चरणों ने 'श्रीराम कृपेश्वर मन्दिर' की स्थापना की। दूसरे दिन पूज्यवर ने वहाँ की देख-रेख के लिये मेरे ऊपर सारा भार सौंप दिया। वस्तुतः यह श्री चरणों का मेरे प्रति अनुपम सुधामय वात्सल्य स्नेह ही था। फिर तब तो पूज्यवर की आज्ञा पाकर उनके साथ यात्रायें भी होने लगीं। ३ वर्ष तक अनवरत २४ घण्टे सेवा करने तथा साथ में रहने का स्वर्णिम अवसर इस दास को मिला। पूज्यवर के ब्रह्मीभूत होने के पूर्व तक काशी के बाहर की यात्रायें होती रहीं।

पूज्य महाराज श्री तपस्वी अधिक थे या ज्ञानी अधिक थे इसका निर्णय सहसा नहीं किया जा सकता। तपस्या, विद्या, सनातनी विषमताओं के उचित समाधान, युग दृष्टि, प्राचीन की रक्षा नवीन का पोषण अनेक शताब्दियों के बाद श्री चरणों में ही एकत्रित दिखाई दिये थे। पूज्यवर के अन्तर में जो अपार क्षमा, दया, विज्ञता, परोपकार-प्रवृत्ति, दृढ़ता, धैर्य, स्थैर्य और सर्वोपरि पर-कल्याण चिकीर्षा का विशेष विकास हुआ था, उसके संस्पर्श से कोई भी वंचित नहीं हुआ। उनकी दृष्टि में कोई भी अयोग्य नहीं था। उन्होंने शान्ति की शीतल स्नेह छाया देकर सबको आश्वस्त किया। श्री चरण का तेज ही ऐसा था कि अपने आध्यात्मिक जीवन तथा शक्ति के बल से सभी के अन्तर में सत्य लाभ की आकांक्षा जगा देते थे।

उन श्री चरणों की लीला अनन्त है। समझ में नहीं आता कि हम किन्हें-किन्हें लिखें और किन्हें-किन्हें छोड़ें। पूज्यवर की धर्माचरण शीलता जनकल्याणकारी दृढ़ सिद्धान्तों की स्पष्ट वादिता तो लोक प्रसिद्ध ही है। उनकी दैनिक जीवन चर्या सभी के लिये अनुकरणीय थी। धर्म ब्रह्म की ओर लोग उन्मुख हों और प्रेरणा मिले अतएव उनकी दैनिक चर्या एवं कुछ रोचक संस्मरण नीचे दे रहा हूं-

रात्रि एक बजे शैय्या त्याग, शौचादिक से निवृत्त होना। पूज्यवर को बबूल की दातुन प्रिय थी मंजन के रूप में गाय के गोबर को राख बनाकर उसका उपयोग करते थे। गोबर राख में कपूर, लवङ्ग आदि मिलाने का मैं आग्रह करता तो कहते कि मुझे सांकर्य इष्ट नहीं। लोगों ने देखा ही होगा कि श्री चरणों के दन्त मोती के समान श्वेत और अनार के दाने के समान पंक्ति बद्ध थे।

२ बजे तक स्नानादिक से निवृत्त होकर मंत्रोच्चारण के साथ श्री गंगाजल का आचमन् भस्म धारण तदुपरान्त अपने ब्राह्मीभाव में स्थित हो जाते थे।

ब्रह्ममुहूर्त में ४ बजे प्रातः भ्रमण के लिये निकल देना और ६ बजे तक भ्रमण करके अपने आवास पर लौट आना इस अवधि में चंडी पाठ सहित अनेकों स्तोत्रों का पाठ सम्पन्न कर लेते थे। यदि कोई स्तोत्र शेष रह गया है तो आने पर आसन पर विराजमान हो सम्पन्न करते थे। तदुपरान्त पुनः स्नानकर अपनी प्रातः कालीन पूजा में संलग्न हो जाते थे जिसमें 'श्री विद्या' की उपासना सविधि करते थे।

प्रातः ८॥ बजे सूर्यार्घ्य देकर सूर्य नमस्कार किया करते थे। पुनः योगासन करने का क्रम चलता था जिसमें विभिन्न आसन होते थे। श्री चरणों का शरीर मक्खन की भाँति कोमल और हड्डियाँ प्लास्टिक की भाँति लचीली थीं।

६॥ बजे से लेखन कार्य आरंभ होता था। जिनका साहित्य आज सनातन जगत की अमूल्य धरोहर है।

१२ बजे मध्याह्न पूजन के पूर्व स्नान होता था। इस बात का पूरा ध्यान रखते थे कि श्री ठाकुर जी को भोग कैसा लगा है? भोग में श्री ठाकुर जी के लिये एक ही तरह का फल अथवा पदार्थ उनको इष्ट नहीं था। भिन्न-भिन्न प्रकार के भोग पदार्थ होने ही चाहिये। पूजनोपरान्त उपस्थित भक्त समूह में भोग प्रसाद वितरित कर स्वयं 'श्री तुलसी दल' ग्रहण करते थे। तदुपरान्त कहते 'अच्छा' अब पधारो।'

१२॥ बजे तक दरवाजा बन्द हो जाता और पुनः आरंभ हो जाता वही लेखन कार्य। जिसको ग्रन्थ रूप में पाकर सनातन जगत उन श्री चरणों का चिर ऋणी रहेगा।

लेखन कार्य ३ बजे अपराह्न तक समाप्त कर स्नान करते थे। और फिर आरंभ होता था उनका योगाभ्यास और यौगिक क्रिया। पाठक गण ध्यान दें कि अभी तक उन्होंने एक बूंद जलतक नहीं ग्रहण किया है।

सायं सूर्यास्त के पूर्व श्री चरणों का अपना भिक्षा ग्रहण करने का विधान था। स्वाद तो उन्होंने जाना ही नहीं। नमक और मीठा का स्पर्श ही कभी न किया। भिक्षा में हरा शाक, हाथ चक्की का पिसा हुआ आटा, छिलके सहित मूंग की दाल, गो दुग्ध मात्र इतनी ही खाद्य वस्तुएं उनके भिक्षा में काम आती थीं। अन्न तो ब्राह्मण का ही होना चाहिये वह भी उसके जड़ में खाद के रूप में गोबर का प्रयोग हुआ हो। कुछ दिन तक केले का डंठल और कच्चा नारियल में दूर्वा पिसवा कर ग्रहण किया। चातुर्मास्य में मात्र फल और गो दुग्ध का सेवन करते रहते। प्रत्येक एकादशी एवं श्री रामनवमी, श्री कृष्ण जन्माष्टमी, श्री शिवरात्री महाव्रत निर्जल ही सम्पन्न करते थे। शीत ऋतु में तो उन्होंने कभी जल ही नहीं ग्रहण किया। एक दिन मैंने पूज्य श्री चरणों में निवेदन किया आप बिना जल लिये कैसे रह जाते हैं तो श्री चरणों ने कहा कि जल की जगह आजकल मेरा दुग्ध से ही कार्य चल जाता है। पूज्यवर को भिक्षा करने में मात्र ५ से ६ मिनट लगते थे। हाँ श्री ठाकुर जी को भोग लगाने में उनको २५ मिनट अवश्य लगते थे।

भिक्षोपरान्त ६ बजे के लगभग आये हुए दर्शनार्थियों के लिये दरवाजा खोल दिया जाता और फिर वही दोपहर की तरह लोगों की समस्यायें होतीं जिनका समाधान श्री चरण बड़े ही उत्साह के साथ करते। इस समय श्री तुलसी जी के माले पर जप भी चलता रहता। पूज्यवर प्रायः वीरासन अथवा सिद्धासन से बैठते थे।

अब रात्रि ७॥ बजे पार्थिवार्चन की सम्पूर्ण तैयारी हो पूजन लग जाता। पूजन के पूर्व स्नानादिक से निवृत्त हो शिव स्वरूप श्री चरण रुद्राभिषेक करने श्रृंग ले आसन पर विराजमान होते। गले में रुद्राक्ष की माला, तुलसी माला भस्म धारण किये हुये उनके मुखमण्डल की कमनीय कान्ति देखते ही बनती थी। उस समय उस कर्पूर गौर सदाशिव ज्योतिमय शरीर से एक ऐसी आभा उद्भासित होती रहती कि लोग दर्शन कर परम शान्ति का अनुभव करते।

रुद्राभिषेक प्रायः १० बजे तक समाप्त हो जाता। अब बारी आती पूज्यवर की देश विदेश में हो रहे राजनैतिक गतिविधियों के प्रति जानकारी की। कहते 'आत्म चैतन्य अखबारों में प्रकाशित कुछ समाचार सुनाओ।' आज्ञा पाकर 'सन्मार्ग' समाचार पत्र एवं अन्य दैनिक पत्रों का समाचार सुनाता। आज की ओछी राजनीति से श्री चरण बहुत खिन्न होते थे। कहते थे कि आज देश की दुर्दशा धर्म नियन्त्रित राजनीति के न होने के कारण ही है। धर्म के बिना राजनीति विधवा तथा नीति के बिना धर्म विधुर है। पूज्यवर राजनीति के लिये जितना कम समय देते थे उतने में कोई राजनीतिज्ञ राजनीतिज्ञ ही नहीं हो सकता किन्तु वे राजनीतिज्ञों में भी शिर मौर थे। 'मार्क्सवाद और राम राज्य' ग्रन्थ को जिसने पढ़ा होगा उसको ज्ञात होगा कि भारतीय राजनीतिज्ञ के रूप में श्री चरण वशिष्ठ, विश्वामित्र, कौटिल्य, मनु, शुक्र, वृहस्पति, कामन्दक की परम्परा की अपूर्व कड़ी थे। पूज्य महाराज श्री कौटल्य के बाद सबसे बड़े राजनीतिक दार्शनिक के रूप में हमारे सामने दिखलाई पड़ते हैं। रात्रि ग्यारह बजे पूज्य श्री चरणों का आदेश होता कि अब तुम लोग जाओ विश्राम करो। स्वयं भी विश्राम करने लगते। श्री चरणों की नींद ऐसी होती कि किसी के पदचाप को सुनकर तुरन्त जाग जाते। सच्चे अर्थों में वे गुडाकेश थे।

यहाँ एक घटना का उल्लेख कर देना अप्रासंगिक न होगा कि यात्राओं में लेखन कार्य में कुछ न्यूनता भले ही आ जाय किन्तु दैनिक देवोपासना, स्वाध्याय, योग साधना आदि क्रम नियमित रहता था। श्री चरणों ने जीवन पर्यन्त श्री गंगा जी कि मृत्तिका और गाय के गोबर को शरीर में लेप कर स्नान किया वह भी प्रत्येक पूर्णिमा के दिन जब क्षौर होता था। बाजारु साबुन का तो स्पर्श तक नहीं किया। यात्राओं में भी पूज्य श्री चरणों की दैनिक चर्या किसी स्थान पर निवास करने ही जैसी चलती है इसको देखने के लिये सन् १९७३ में भारतीय उच्च शोध संस्थान, शिमला के डाक्टर वैद्यनाथ सरस्वती ने पूज्यवर को बताये बिना एक शोध परियोजना के अन्तर्गत उनके विचार एवं व्यवहार का अध्ययन किया था। उन्होंने काशी से रायपुर (म० प्र०) तक पूरे रास्ते में श्री चरणों के कार के पीछे अपनी कार इतनी नजदीक रखी कि यात्रा में भी उनके पूजा पाठ आदि कर्मों की जानकारी होती चले। पूरे मार्ग में उन्होंने श्री चरणों का जैसा धर्माचरण देखा स्तब्ध रह गये कि यात्रा में भी इन श्री चरणों का वही त्रिकाल स्नान, त्रिकाल देवोपासना, योगाभ्यास कार में बैठे-बैठे स्वाध्याय चल रहा है। इसका पूरा विस्तृत विवरण उन्होंने उसी वर्ष साप्ताहिक हिन्दुस्तान में प्रकाशित कराया था।

सन् १९८१ के अप्रैल में कानपुर में पूज्य श्री चरणों के नवरात्र व्रत का कार्य-क्रम स्वीकार कर लिया था। वैसे उन्हीं दिनों हजारी बाग में भी पूज्यवर के प्रवचन का कार्य-क्रम रखा जाने वाला था